* ॐ *

आदर्श-मुनि

* सम्रहकर्त्ता *

सा० प्रे० पं० प्यारचन्द्रजी महाराज—

लक्ष्मीसहाय माथुर-विशारद

मुद्रक व प्रकाशक—

श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम

वीराब्दा २४५१—वैक्रमाब्दा १९८२

प्रथम सस्करण २००० प्रति	मूल्य रेशमी जिल्द १) राजसस्करण २)

प० अनन्तराम के प्रबन्ध से सद्धर्म प्रचारक प्रेस देहली में छपा ।

* ॐ *

श्रीसुधर्मगच्छीयहुक्मीचन्द्रजित्सूरीश्वरेभ्यो नम ।

आदर्श-मुनि

* संग्रहकर्ता *

साहित्यप्रेमी पण्डित मुनिश्री-

"प्यारचन्दजी महाराज—"

लेखक—

लक्ष्मीसहाय माथुर-विशारद

मुद्रक व प्रकाशक—

श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,

रतलाम

वीराब्दा २४५१—वैक्रमाब्दा १९८२

प्रथम संस्करण २००० प्रति | मूल्य रेशमी जिल्द १।) राजसंस्करण २)

प० अनन्तराम के प्रबन्ध से सद्धर्म प्रचारक प्रेस देहली में छपा ।

❀ शिक्षा ❀

"जीवन चरित महा-पुरुषों के,"
"हमें शिक्षणा देते है ।"
"हम भी अपना अपना जीवन,"
"स्वच्छ रम्य कर सकते हैं ॥"
"हमें चाहिये हम भी अपने,"
"बना जायँ पद-चिन्ह ललाम ।"
"इस भूमी की रेतों पर जो,"
"व्यक्त पडे आवें कुछ काम ॥"
"देख देख जिन को उत्साहित"
"हों पुनि वे मानव मतिघर ।"
"जिन की नष्ट हुई हो नौका,"
"चट्टानों से टकराकर ।"
"लाख लाख संकट सहकर भी,"
"फिर भी साहस बाँधे वे ।"
"जाकर मार्ग मार्ग पर अपना,"
"गिरिधर" कारज साँधे वे ॥"

प्रकाशक —

मास्टर मिसरीमल, मन्त्री,
श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,
रतलाम



पं० अनन्तराम के प्रबन्ध से
सद्धर्म प्रचारक मुद्रणालय दिल्ली में छपा।

* ॐ *

श्रीमान् महामान्य रायबहादुर जुगमन्दिरलालजी जैनी
ऐम. ए. आर. ए. ऐस., बार-ऐट-लॉ,
चीफ जस्टिस ऐण्ड लॉ-मेम्बर
होल्कर स्टेट इन्दौर की

सम्मति.

महोदय !

जय जिनेन्द्र ! आप की भेजी हुई "आदर्श मुनि" नामक पुस्तक मिली, धन्यवाद।

शारीरिक अस्वस्थता, समयाभाव और ऐसे ही कई कारणों से "आदर्श मुनि" को मैं पूरी नहीं पढ़ सका, तथापि जितना भी अंश मैं पढ़ सका हूं उस से पुस्तक की उपयोगिता तथा आवश्यकता स्पष्ट प्रगट होती है।

महात्मा साधु सन्तों, अथवा आदर्श पुरुषों के जीवन चरित्र लिखने का मुख्य हेतु उनके अमृतमय उपदेशों एवं क्रियात्मकरूप में परिणित आदर्शों को जनता के जीवन का अंगभूत बनाकर उसे सफल बनाना है, इसी हेतु को सामने रखकर "आदर्श मुनि" जनता को भेंट की गई है। प्रस्तुत पुस्तक में जिन महापुरुष के चरित्र चित्रण का प्रयत्न किया गया है। वे जैन संसार में ही नहीं बल्कि अजैनों के द्वारा भी "आदर्श व्यक्ति" माने गए हैं जिन्हें

उन के दर्शन का लाभ तथा उपदेशामृत पान करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है वे ही अनुमान कर सकते हैं कि समूचे सभ्य संसार में इस मौलिक संग्रह का क्या मूल्य होगा। लेखक ने अपने चरित्र नायक के चरित्र अंकित करने के साथ ही साथ उनके सिद्धान्तों की प्राचीनता एवं उपयोगिता के विषय में भारतीय तथा विदेशीय अनेक विद्वानों के मतों का भी दिग्दर्शन किया है जिस से पुस्तक का महत्व और भी बढ़ गया है। यदि लेखक के उद्देश्यों की ओर जनता का ध्यान वास्तविकरूप से आकर्षित हुआ तो यह छोटासा ग्रन्थ " मानवीय जीवन किस तरह सफल बनाया जा सकता है " इस का सुन्दर पाठ जनता के सामने रखेगा।

पुस्तक अच्छे ढंग से लिखी गई होने पर भी जैसा कि लेखक स्वयं स्वीकार करते हैं उसमें कुछ त्रुटियें रह गई हैं। आशा है कि अगले संस्करण में उन पर उचित ध्यान दिया जावेगा।

ता० १९-६-२५



भूमिका ।

जैनधर्म की प्राचीनता अनेक अगूत प्रमाणों से सिद्ध हो चुकी है । अब यह निश्चय करने की आवश्यकता नहीं है कि पहिले का जैनधर्म है या बौद्धधर्म । जैसे शैल-सम्राट् हिमालय अचल और अटल है वैसे ही जैनधर्म प्राचीन और कालातीत है । इसके सामने बौद्ध-धर्म कल का उत्पन्न हुआ है । जब महात्मा बुद्ध संसार में अपने दया और शान्ति-पूर्ण उपदेशों की धारा बहा रहे थे उस समय जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामी का निर्वाण काल समीपस्थ था । इस समय वीर सम्वत् २४५१ है । इनके पहले २३ तीर्थंकर और हो चुके हैं । जिनमें प्रथम श्री ऋषभदेव जी थे । इनका वर्णन श्री-मद्भागवत पुराण में भी है ।

जैनधर्म का साहित्य जिसका अधिकांश भाग अभी कोठारों में गुप्त रीति से धरा है, नितान्त विस्तृत और महत्व-पूर्ण है । यह साहित्य संस्कृत और प्राकृत दोनों में है । इस साहित्य में अनोखी बात यह है कि इसका कोई भी ग्रन्थ अश्लील और अशिष्ट नहीं है । इसके सभी ग्रन्थों को सभी नरनारी बाल-

बालिका युवक और वृद्ध पढ सकते हैं। किसी पुस्तक में ऐसे भाव और विचार न मिलेंगे जिनके पढने और कहने में लज्जा आवे। भू-मण्डल में अन्य कोई साहित्य नहीं है जिसके पढने में यह दावा किया जा सकता है। इतिहासज्ञ कहते हैं कि जितना प्राचीन साहित्य होगा, उतना ही वह अश्लील और गदा होगा। जैन साहित्य इस कथन का प्रत्यक्ष खण्डन है। ससार में बहुत ही कम इतिहासज्ञ हैं जिन्होंने जैन साहित्य का परिशीलन किया है। जब यह साहित्य पूर्ण-रीत्या अभिव्यक्त हो जायगा तब बहुत से प्रचलित मनघढत विचारों में परिवर्तन हो जायगा।

यों तो जैन साहित्य म तत्त्व-ज्ञान नैतिक विचार, धर्म सिद्धान्त इत्यादि अनेक बातें हैं। पर चरित सगठन इस की मूल सम्पत्ति है। साधु और गृहस्थ दोनों के लिए उच्चकोटि के चारित्रादर्श वर्णित हैं। चारित्रसगठन का मूल-मन्त्र यह है —

"अहिंसा सत्यमस्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहः"

जिस महत्वशाली, उज्ज्वल, निर्मल एव देदीप्यमान आदर्श को जैनधर्म ने अपने सन्मुख रखा है उसकी उच्च सीमा तक गृहस्थ जैनसमाज पहुची है या नहीं। यह बात निश्चय रूप

से कहना तो कठिन है पर यह कहने से किंचिन्मात्र संकोच भी नहीं है कि जैन साधुओं ने इस आदर्श को चरितार्थ कर दिखाया है। गृहस्थ जैन और साधुजैन में बड़ा अंतर है। यदि एक दक्षिण ध्रुव है तो दूसरा उत्तर ध्रुव है। नगरों में, ग्रामों में, कहीं भी देखिए, जैनसाधु एक अद्वितीय अनोखी और विलक्षण वस्तु है-वह अपनी शानी नहीं रखता है-उसके बराबर होने का कोई दावा नहीं कर सकता। उसके रूप में हो जाना वैराग्य की पराकाष्टा है। आत्मत्याग की चरमसीमा है परमार्थ की अचल सीढी है-मानुषी चारित्र की अन्तिम शिखर है-विश्वप्रेम की सशरीर मूर्त्ति है-दया-धर्म की परमगति है-अहिंसा सिद्धान्त की अन्तिम सीमा है। जैन साधु हो जाना मनुष्य से देवता हो जाना है। संसार के विविध भोग विलासों को लात मार कर त्याग की मूर्त्ति हो जाना है। यदि आज भारतवर्ष में जैन साधु न होते तो हम धनमदान्ध, जड़वादी, नवीन सभ्यतानिमग्न लोगों को विशेषतः पाश्चात्य देशों को, यह नहीं दिखा सकते कि हिंदू आध्यात्मिक सभ्यता की किस उच्च शिखर पर चढ गए थे और वह अलभ्य दिव्य स्थान अब भी उनके साधुओं के अधिकार में है।

जैनसमाज ! तेरा जीवन तेरे साधुओं के सच्चरित्र से ही है। यदि तेरे साधु नहीं हैं तो तेरा स्थान संसार की अन्य

बालिका युवक और वृद्ध पढ़ सकते हैं। किसी पुस्तक में ऐसे भाव और विचार न मिलेंगे जिनके पढने और कहने में लज्जा आवे। भू-मण्डल में अन्य कोई साहित्य नहीं है जिसके पढने में यह दावा किया जा सकता है। इतिहासज्ञ कहते हैं कि जितना प्राचीन साहित्य होगा, उतना ही वह अश्लील और गंदा होगा। जैन साहित्य इस कथन का प्रत्यक्ष खण्डन है। संसार में बहुत ही कम इतिहासज्ञ हैं जिन्होंने जैन साहित्य का परिशीलन किया है। जब यह साहित्य पूर्ण-रीत्या अभिव्यक्त हो जायगा तब बहुत से प्रचलित मनघढत विचारों में परिवर्तन हो जायगा।

यों तो जैन साहित्य में तत्व-ज्ञान नैतिक विचार, धर्म सिद्धान्त इत्यादि अनेक बातें हैं। पर चरित्र संगठन इस की मूल सम्पत्ति है। साधु और गृहस्थ दोनों के लिए उच्चकोटि के चारित्रादर्श वर्णित हैं। चारित्रसंगठन का मूल-मन्त्र यह है:—

"अहिंसा सत्यमस्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहः"

जिस महत्वशाली, उज्ज्वल, निर्मल एवं देदीप्यमान आदर्श को जैनधर्म ने अपने सन्मुख रखा है उसकी उच्च सीमा तक गृहस्थ जैनसमाज पहुंची है या नहीं। यह बात निश्चय रूप

से कहना तो कठिन है पर यह कहने से किंचित्मात्र संकोच भी नहीं है कि जैन साधुओं ने इस आदर्श को चरितार्थ कर दिखाया है। गृहस्थ जैन और साधुजैन में बड़ा अंतर है। यदि एक दक्षिण ध्रुव है तो दूसरा उत्तर ध्रुव है। नगरों में, ग्रामों में, कहीं भी देखिए, जैनसाधु एक अद्वितीय अनोखी और विलक्षण वस्तु है–वह अपनी शानी नहीं रखता है–उसके बराबर होने का कोई दावा नहीं कर सकता। उसके रूप में हो जाना वैराग्य की पराकाष्टा है। आत्म त्याग की चरमसीमा है परमार्थ की अचल सीढी है–मानुषी चारित्र की अन्तिम शिखर है-विश्वप्रेम की सशरीर मूर्ति है-दया-धर्म की परमगति है-अहिंसा सिद्धान्त की अन्तिम सीमा है। जैन साधु हो जाना मनुष्य से देवता हो जाना है। ससार के विविध भोग विलासों को लात मार कर त्याग की मूर्ति हो जाना है। यदि आज भारतवर्ष में जैन साधु न होते तो हम धनमदान्ध, जड़वादी, नवीन सभ्यतानिमग्न लोगों को विशेषत पाश्चात्य देशों को, यह नहीं दिखा सकते कि हिंदू आध्यात्मिक सभ्यता की किस उच्च शिखर पर चढ गए थे और वह अलभ्य दिव्य स्थान अब भी उनके साधुओं के अधिकार में है।

जैनसमाज! तेरा जीवन तेरे साधुओं के सच्चरित्र से ही है। यदि तेरे साधु नहीं हैं तो तेरा स्थान संसार की अन्ध

जातियों में कुछ ऊंचा नहीं है। जैसे और मनुष्य हैं वैसे ही गृहस्थ जैन हैं। लड़ते हैं झगड़ते हैं, मुकदमेबाजी करते हैं, दुकानदारी में अन्य लोगों के समान झूठ छल करते हैं, भोग विलास व्यभिचार किसी अन्य जाति से श्रेष्ठ नहीं है। बुरी लगे तो बाजार में जाकर देख लो। किसी ग्राहक को यह अन्तःकरण से विश्वास नहीं है कि यह जैनगृहस्थ की दुकान है, यहां सब बातें अच्छी हैं, पूरी ईमानदारी है, धोखा कभी नहीं होगा।

भू-मण्डल की चारों दिशाओं में शङ्खध्वनि से घोषणा कर दो। कि जैनसाधु के चरित्र, उसके व्यवहार, उसके वर्ताव में, [redacted] में किसी प्राणी को शंका नहीं है, उससे कोई नहीं डरता है, उससे किसी को धोखा होने का संशय नहीं है, उस में सभी का विश्वास, वह सभी का सम्मानपात्र है। कहां जैन साधु और कहां जैनगृहस्थी? दोनों में तुलना करना रत्न और पाषाण की तुलना करना है। यही नहीं, कहां निर्मल निर्दोष जैनसिद्धान्त और कहां जैनगृहस्थ का चरित्र। मेरे कहने का प्रयोजन यह नहीं है कि जैनगृहस्थ अन्य धर्मावलम्बी गृहस्थों से गिरा हुआ है बल्कि यह कि जैसे जैनसाधु सर्व धर्मों के साधुओं से उत्कृष्ट और आदर्शचरित्र हैं, वैसे जैनगृहस्थ दूसरे गृहस्थों की तुलना में कुछ बढ़े चढ़े नहीं हैं। माना यह

समाज के नियमों से मास मदिरा का त्याग करता है । और उपवास करने में पक्का है और अपने वृतोत्सवों पर कुछ कबूतरों और पक्षिओं को भी दाम देकर छुड़वा देता है । पर क्या ऐसा होने पर जैनधर्म का पूर्ण अनुयायी हो गया । काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर आदि कषायों की और देखिए । क्या कोई अपने हृदय पर हाथ धर कह सकता है कि वह इन दुर्गुणों पर अन्य धर्मानुयायियों की अपेक्षा अधिक विजय प्राप्त किया हुआ है । यदि नहीं है, तो हो चुकी । हमारा अभिप्राय जैनगृहस्थों को उत्तेजित कर अपने उच्च निर्मल धर्म के उच्चकोटि के चारित्र सगठन पर ध्यान दिलाना है । जब उनके पास आदर्शचरित्र के साधु हैं तो अपना चरित्र उच्च करने में वे क्यों उपेक्षा करते है । उनके उपदेश सत्सग और चरित्र प्रभाव से वे आदर्श गृहस्थ हो जाने का अवसर रखते हैं । यदि ऐसा अवसर खो दिया तो सर्वनाश होगया । भारतवर्ष की वर्तमान दशा में हमें एक ऐसे समाज की आवश्यकता है, जो ससार को अपने सच्चरित्र और व्यवहार से पूर्ण विश्वास दिला दे कि प्राचीन भारतीय सभ्यता में आदर्श गृहस्थ होते थे । और ऐसे मनुष्य अब भी मिलते हैं । जैन समाज अपने आदर्श साधुओं के सत्सग से ऐसी समाज हो सकती है, यदि यह कार्य इसने नहीं किया तो इस का कार्य

ससार में अपूर्ण रहा और जैनधर्म के उच्च और निर्मल सिद्धान्तों का प्रकाश व्यर्थ ही गया।

जैन साधु का आदर्श बडा उच्च है, इस समय भी वह सर्वोत्कृष्ट है। हमने किसी को कहते नहीं सुना, कि किसी जैन साधु ने किसी को कभी किसी प्रकार का कष्ट पहुचाया। जैन साधु किसी प्रकार का नशा नहीं करता, कभी किसी से दूध मलाई नहीं मागता, किसी के घर पेट भर नहीं खाता कभी रुपये पैसे की भिक्षा नहीं मागता, वह तो खाने मात्र को कई स्थानों से अपने नियमानुसार माग लेता है। और जब और जहा उसे अपने नियमानुसार कुछ नहीं मिलता तो भूखा रह जाता है। जैनसाधु सवारी पर नहीं चढते, सैकडों कोसों की यात्रा पैदल ही करते हैं और पैर में जूता या खडाऊँ भी नहीं पहिनते। वे किसी स्थान पर बहुत दिन नहीं रहते वर्षाकाल में यात्रा बद रखते हैं, क्योंकि उस समय छोटे २ जीव-जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं और उनके चलने से जीवहिंसा होती है। चलने में दृष्टि नीचे की ओर रखते हैं और पैर को धीरे २ रखकर चलते हैं मुख के सामने वस्त्र बधा रखते हैं जिससे मुख की भाप से किसी अदृष्ट जीव की हिंसा न हो जाय, बगल में एक ऊन का गुच्छा रखते हैं जिसे रजोहरण कहते हैं, जहा कहीं बैठते हैं तो उस गुच्छे से पहिले भूमि स्वच्छ कर लेते हैं इनका

सब काल धार्मिक विचार और उपदेशों ही म लगता है। ये कभी कोगी सासारिक वार्तो में कालाक्षेप नहीं करते। इनकी तपस्या भी बडी कठिन है और इन का आत्म-त्याग सर्वथा सराहनीय है। 'जैनसाधुओं के कैसे कठिन नियम हैं और उन की दिनचर्य्या किस प्रकार की है? इसका पूरा वर्णन इस पुस्तक के २२७-२३० पृष्ठों में दिया है। सारांश यह है कि जिस मूल-मन्त्र को हम पहिले कह आए हैं उसको सर्वांश पालन करने में जैनसाधु भरसक चेष्टा करते हैं। उनका जीवन नितात पवित्र, उच्चाशय, परोपकारनिष्ट एव त्याग सयुक्त होता है।

ऐसे ही एक परमत्यागी, सच्चरित्र, परोपकारी साधु का जीवनचरित्र इस पुस्तक में दिया है। आप का पवित्र नाम चौथमल जी है। आपका ज म स० १९३४ के कार्तिक मास में नीमच नगर में हुआ था। आपने १५ वर्ष तक विद्या पढी स० १९५० में आप का विवाह हुआ। उसी वर्ष आपके पिता जी की मृत्यु हुई और स० १९५२ में आपने अपनी माता की सम्मति से मुनि हीरालाल जी से दीक्षा ली। इस समय आपकी आयु ४८ वर्ष की है। इन साधु जी महाराज से आगरे और धौलपुर में मुझे भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपके कई व्याख्यान भी मैंने सुने हैं, मै कह सकता हूं कि आपकी भाषण-शक्ति बडी प्रभावशालिनी है। आपकी

लेखक का वक्तव्य ।



प्रकृति देवी के नियम की लीला बड़ी विचित्र है कि जब जब वह अपने साम्यवाद सम्पन्न साम्राज्य में किसी भी प्रकार की समता का अभाव या विषमता की प्रचुरता देखती है, तब वह अपने नियमानुसार ऐसी प्रेरणा कर देती है कि उस की स्थिति पुनः अनुकूल होजाती है, संसार की सभी बातों में इस अटल नियम का प्रयोग होते देखा गया है। इस अचूक नियम के निर्वहण के लिये एक ग्रन्थकार का कथन भी है कि—

यदा यदा धर्महतिर्जगत्या,
प्रजायतेऽनर्थवशाद्बृहत्याम् ।
तदा तदा कोऽपि परोपकारी,
तदुन्नति कामयतेऽर्थकारी ॥ १ ॥

एव प्रवादो भुविनिर्विवादो,
विराजते लोकविचारणायाम् ।
नाभेयवीरादि महानुभावा,
निदर्शनान्यत्र सता मतानि ॥ २ ॥

लेखक का वक्तव्य ।



प्रकृति देवी के नियम की लीला बडी विचित्र है कि जब जब वह अपने साम्यवाद सम्पन्न साम्राज्य में किसी भी प्रकार की समता का अभाव या विषमता की प्रचुरता देखती है, तब वह अपने नियमानुसार ऐसी प्रेरणा कर देती है कि उस की स्थिति पुन अनुकूल होजाती है, ससार की सभी बातो में इस अटल नियम का प्रयोग होते देखा गया है । इस अचूक नियम के निर्वहण के लिये एक ग्रन्थकार का कथन भी है कि–

यदा यदा धर्महतिर्जगत्या,
प्रजायतेऽनर्थवशाद्बृहत्याम् ।
तदा तदा कोऽपि परोपकारी,
तदुन्नतिं कामयतेऽर्थकारी ॥ १ ॥

एव प्रवादो भुविनिर्विवादो,
विराजते लोकविचारणायाम् ।
नाभेयवीरादि महानुभावा,
निदर्शनान्यत्र सता मतानि ॥ २ ॥

इसी नियम के अनुसार समय २ पर इस जगतीतल में ऐसे महानुभावों का प्रादुर्भाव हुआ है और होता रहता है, जो अपनी प्रतिभा के प्रताप तथा चित और चरित्र की देवोपम चमत्कृतियों से ससार को अचम्भित करते हुए उसके पाप और तापों का समूल नाश कर ससारी विषयासक्त जीवों के कल्याण की स्थापना में दत्तचित्त होते हैं। और अपनी सत्यनिष्ठा, आदर्श-चरितावली, दूरदर्शिता, दृढता, इन्द्रियनिग्रहता, धार्मिकता, आदि स्वर्गीय गुणों से युक्त जिस देश, काल और समाज में उत्पन्न होते हैं, वे उसकी भावी उन्नति का मार्ग प्रशस्त तथा परिमार्जित कर जाते हैं। हमारे चरितनायक भी ऐसे ही स्वर्गीय सद्गुणों के द्वार उन्मुक्त करने वालों में से एक हैं। आपके जीवन का सर्वोत्तम और अधिकाश भाग अहिंसा, निर्वाण और वासना हनन की उलझना को सुलझाने तथा उन का मध्य भारत के प्राय समस्त गावों में प्रचार करने ही में बीता है, और बीत रहा है। यहा यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आपने जहा २ अपने पावन चरणों को रखा है, वहां २ के प्राय सभी नर नारियों ने, हर एक समाज, जाति और अवस्था के लोगों ने आप के सदुपदेशों से लाभान्वित होकर, वर्तमान समय के दु ख दर्दों में कितनी चिरशान्ति पाई है, वे लोग कहा तक धर्म और देश के सच्चे साथी बने हैं। आपके दर्शन

और पीयूषवर्षी तथा समयोपयोगी वचनों का सुधारस पान करने के लिये मध्य भारत के हिन्दूधर्मावलम्बी राजा, महाराजा और रईस लोग, दूर २ से आप के पास समय २ पर आते रहते हैं। आपके भाषणों की भाषा बोधगम्य, विश्वबन्धुत्व के भाव से भरी हुई और सरलता लिये हुए बड़ी ही प्रभावशालिनी रहती है। बस ऐसे ही अनेक कारणों से प्रेरित होकर और यह सोच कर, कि ऐसे महानुभाव सन्तों की जीवनी यदि जनता के हाथ में पहुचे तो धार्मिकता के साथ २ देश की उठती हुई अनेक कुरीतियों का निवारण भी सहज ही में हो सकता है। मैंने इस जीवनी को लिखने का अनुचित साहस किया है। और इसमें आपके समस्त विचार और सम्पूर्ण उपदेश नहीं, बल्कि जीवन की मुख्य २ घटनाओं और आप के धार्मिक उपदेशों में व्यवहार के पुट का सूक्ष्म रूप में संग्रह कर दिया है। ऐसे महात्मा और प्रसिद्ध उपदेशक की जीवनी लिखने को मध्य भारत के किसी भी धुरन्धर विद्वान् की लेखनी उठती हुई न देख, मैंने ही यह अनधिकार चेष्टा की है, जिसमें मेरा 'स्वान्त सुखाय' है।

क्या ही अच्छा होता यदि यह महत्कार्य मेरे जैसे अल्पज्ञ द्वारा न होकर किसी और महानुभाव के द्वारा सुसम्पन्न होता। कुछ सज्जन मेरी इस अनधिकार चेष्टा का कारण जानते हैं,

इसी नियम के अनुसार समय २ पर इस जगतीतल में ऐसे महानुभावों का प्रादुर्भाव हुआ है और होता रहता है, जो अपनी प्रतिभा के प्रताप तथा चित्त और चरित्र की देवोपम चमत्कृतियों से संसार को अचम्भित करते हुए उसके पाप और तापों का समूल नाश कर संसारी विषयासक्त जीवों के कल्याण की स्थापना में दत्तचित्त होते हैं। और अपनी सत्यनिष्ठा, आदर्श-चरितावली, दूरदर्शिता, दृढता, इन्द्रियनिग्रहता, धार्मिकता, आदि स्वर्गीय गुणों से युक्त जिस देश, काल और समाज में उत्पन्न होते हैं, वे उसकी भावी उन्नति का मार्ग प्रशस्त तथा परिमार्जित कर जाते हैं। हमारे चरितनायक भी ऐसे ही स्वर्गीय सद्गुणों के द्वार उन्मुक्त करने वालों में से एक हैं। आपके जीवन का सर्वोत्तम और अधिकांश भाग अहिंसा, निर्वाण और वासना हनन की उलझना को सुलझाने तथा उन का मध्य भारत के प्राय. समस्त गावों में प्रचार करने ही में बीता है, और बीत रहा है। यहा यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आपने जहा २ अपने पावन चरणों को रक्खा है, वहां २ के प्राय सभी नर नारियों ने, हर एक समाज, जाति और अवस्था के लोगों ने आप के सदुपदेशों से लाभान्वित होकर, वर्तमान समय के दु ख दर्दों में कितनी चिरशान्ति पाई है, वे लोग कहा तक धर्म और देश के सच्चे साथी बने हैं। आपके दर्शन

और पीयूषवर्षी तथा समयोपयोगी वचनों का सुधारस पान करने के लिये मध्य भारत के हिन्दूधर्मावलम्बी राजा, महाराजा और रईस लोग, दूर २ से आप के पास समय २ पर आते रहते हैं । आपके भाषणों की भाषा बोधगम्य, विश्वबन्धुत्व के भाव से भरी हुई और सरलता लिये हुए बडी ही प्रभावशालिनी रहती है । बस ऐसे ही अनेक कारणों से प्रेरित होकर और यह सोच कर, कि ऐसे महानुभाव सन्तों की जीवनी यदि जनता के हाथ में पहुचे तो धार्मिकता के साथ २ देश की उठती हुई अनेक कुरीतियों का निवारण भी सहज ही में हो सकता है। मैंने इस जीवनी को लिखने का अनुचित साहस किया है । और इसमें आपके समस्त विचार और सम्पूर्ण उपदेश नहीं, बल्कि जीवन की मुख्य २ घटनाओं और आप के धार्मिक उपदेशों में व्यवहार के पुट का सूक्ष्म रूप में संग्रह कर दिया है । ऐसे महात्मा और प्रसिद्ध उपदेशक की जीवनी लिखने को मध्य भारत के किसी भी धुरन्धर विद्वान् की लेखनी उठती हुई न देख, मैंने ही यह अनधिकार चेष्टा की है, जिसमें मेरा 'स्वान्त सुखाय' है ।

क्या ही अच्छा होता यदि यह महत्कार्य मेरे जैसे अल्पज्ञ द्वारा न होकर किसी और महानुभाव के द्वारा सुसम्पन्न होता। कुछ सज्जन मेरी इस अनधिकार चेष्टा का कारण ज

जिस का यहा उल्लेख करना अप्रासागिक होगा। मानसिक अशान्ति, अपर्याप्त मननशीलता और सब से बढकर समय का अभाव। इस परिस्थिति में मैं अपनी अल्पज्ञता के बल पर थोडी अवधि में जैसा कर सकता था, करके आप के सन्मुख उपस्थित हुआ हू। अपरिहार्य कठिनाइयों में किए हुए कार्य कभी सर्वांग पूर्ण नहीं होते यह एक निश्चित सिद्धान्त है। एसी दशा में मेरा इस क्षुद्र रचना का त्रुटिपूर्ण होना अवश्यम्भावी है। जैसा कि मै चाहता था इस कार्य के लिये मुझे पर्याप्त अवकाश आदि सुविधाए मिलतीं तो सम्भव था मैं इस की त्रुटियों में किसी अश तक और कमी कर देता। किन्तु, प्रकाशक महाशय की आतुरता ने मुझे वैसा करने का अवसर न दिया। अत विवश हो मुझे इसी रूप में आप की सेवा करनी पडी है। मुझे बडा खेद है कि चरितनायक महोदय जैसे आदर्श महामना की जीवनी तद्रूप न हो सका। खैर ' यदि अवसर मिला तो आगे मैं इस की अपूर्णता को मिटाने की चेष्टा करूगा। आशा है उस समय तक विद्वान् समालोचक महाशयों से भी मुझे इस विषय में सत्परामर्श मिल जायगा।

हमारे चरितनायक महोदय के सुयोग्य शिष्य श्रीयुत प्यारचन्दजी महाराज की महती कृपा से ही मुझे इस पुस्तक के कलेवर की सामग्री प्राप्त हुई है। आप करोडों बार हमारे

धन्यवाद के पात्र है। यदि आप की यह कृपा न हुई होती तो यह परिश्रम "जिय बिनु देह नदी बिनु वारी।" की उक्ति को ही चरितार्थ करता।

मेरी कृति कुछ भी नहीं हुई, यह तो स्वय सिद्ध है, किंतु चरितनायकजी के विशुद्ध चरित्र की सुगंध से इस गंधहीन कृति में कुछ सरसता आजाने की सम्भावना अवश्य है। उस दशा मे इस के अध्ययन, मनन और चिन्तवन से श्रावक, श्राविकाओं और जैन जैनेतर जनता का जो कुछ हित साधन होगा, उस का श्रेय श्रद्धेय श्रीप्यारचन्दजी महाराज को ही है। एकमात्र गुरुभक्ति से प्रेरित होकर इस चरित्र के तैयार कराने में आपने जिस प्रेम, उत्साह और परिश्रम से योग दिया है वह सर्वथा स्तुत्य है। आप की गुरुभक्ति को आदर्श कहा जाय तो भी अत्युक्ति न होगी।

जो महानुभाव मुझ से सच्चा स्नेह रखते हैं और मेरी तुच्छातितुच्छ कृतियों पर प्रसन्न होकर साहित्य सेवा का मार्ग-प्रदर्शन करते हुए मुझे इस के लिये सदा उत्साहित करते रहते हैं उन का मैं आभारी हू, और सब के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हू।

जिस का यहा उल्लेख करना अप्रासांगिक होगा। मानसिक अशान्ति, अपर्याप्त मननशीलता और सब से बढकर समय का अभाव। इस परिस्थिति में मैं अपना अल्पज्ञता के बल पर थोडी अवधि में जैसा कर सकता था, करके आप के सन्मुख उपस्थित हुआ हू। अपरिहार्य कठिनाइयों में किए हुए कार्य कभी सर्वांग पूर्ण नहीं होते यह एक निश्चित सिद्धान्त है। ऐसी दशा में मेरी इस क्षुद्र रचना का त्रुटिपूर्ण होना अवश्यम्भावी है। जैसा कि मै चाहता था इस कार्य के लिये मुझे पर्याप्त अवकाश आदि सुविधाए मिलतीं तो सम्भव था मैं इस की त्रुटियों में किसी अश तक और कमी कर देता। किन्तु, प्रकाशक महाशय की आतुरता ने मुझे वैसा करने का अवसर न दिया। अत विवश हो मुझे इसी रूप में आप की सेवा करनी पडी है। मुझे बडा खेद है कि चरितनायक महोदय जैसे आदर्श महामना की जीवनी तद्रूप न हो सकी। खैर! यदि अवसर मिला तो आगे मैं इस की अपूर्णता को मिटाने की चेष्टा करूगा। आशा है उस समय तक विद्वान् समालोचक महाशयों से भी मुझे इस विषय में सत्परामर्श मिल जायगा।

हमारे चरितनायक महोदय के सुयोग्य शिष्य श्रीयुत प्यारचन्दजी महाराज की महती कृपा से ही मुझे इस पुस्तक के कलेवर की सामग्री प्राप्त हुई है। आप करोडों बार हमारे

धन्यवाद के पात्र है। यदि आप की यह कृपा न हुई होती तो यह परिश्रम "जिय विनु देह नदी बिनु वारी।" की उक्ति को ही चरितार्थ करता।

मेरी कृति कुछ भी नहीं हुई, यह तो स्वयं सिद्ध है, किंतु चरितनायकजी के विशुद्ध चरित्र की सुगंध से इस गंधहीन कृति में कुछ सरसता आजाने की सम्भावना अवश्य है। उस दशा में इस के अध्ययन, मनन और चिन्तवन से श्रावक, श्राविकाओं और जैन जैनेतर जनता का जो कुछ हित साधन होगा, उस का श्रेय श्रद्धेय श्रीप्यारचन्दजी महाराज को ही है। एकमात्र गुरुभक्ति से प्रेरित होकर इस चरित्र के तैयार कराने में आपने जिस प्रेम, उत्साह और परिश्रम से योग दिया है वह सर्वथा स्तुत्य है। आप की गुरुभक्ति को आदर्श कहा जाय तो भी अत्युक्ति न होगी।

जो महानुभाव मुझ से सच्चा स्नेह रखते हैं और मेरी तुच्छातितुच्छ कृतियों पर प्रसन्न होकर साहित्य सेवा का मार्ग-प्रदर्शन करते हुए मुझे इस के लिये सदा उत्साहित करते रहते हैं उन का मैं आभारी हूं, और सब के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

अन्त में सुप्रसिद्ध साहित्यानुरागी और विद्याप्रेमी, परम आदरणीय, स्वनाम धन्य, वाणिज्यभूषण, श्री० सेठ लालचन्दजी सा० सेठी (झालरापाटन) को जिन की सेवा में मैं रहता हूं और जिन की महती कृपा से कुछ कर सकने के लिये समय २ पर मुझे प्रोत्साहन मिलता रहता है, शुद्धान्त करण से धन्यवाद देता हू। साहित्यानुरागी सम्पत्तिशालियों में आप का एक मुख्य स्थान है। अपने बढे हुए कारोबार से समय निकाल कर उस का अधिकाश भाग आप साहित्यानुशीलन में व्यतीत करते और साहित्य-सेवियों की सहायता के लिये हर समय तैयार रहते हैं। हमारी हार्दिक भावना है कि आप सदैव सकुटुम्ब प्रसन्न रहें, आप चिरायु हों और आप के सब मनोरथ सफल हों। किमधिकम्।

अयोध्याश्रम
झालरापाटन
(राजपूताना)
दीपावली १९८१ वि

विनयावनत,
लक्ष्मीसहाय माथुर।

॥ ॐ ॥

विशेष आभार ।

श्रीमान् महामान्य चतुर गुणसम्पन्न मास्टर बिहारीलाल जी विशारद जी साहिब एम. ए., सेशन जज धौलपुर रियासत ने समय समय पर जैनधर्म के तत्वों के प्रचार के लिये, जैनधर्म पर आये हुए भ्रमात्मक आक्षेपों के निवारण के लिये व सत्यान्वेषण के लिये अनेक पुस्तकें व लेख आदि लिखकर जैनधर्म की जो महत्वपूर्ण सेवा की है उसके लिये जैनसमाज आपकी चिर आभारी है और रहेगी।

आपके लेख व रचनायें निर्भीक, आगमानुकूल, सारगर्भित और महत्वशाली होते हैं। आप की वृत्ति उदार और सौम्य है। आप अनेक धर्मों से परिचित भी हैं, इसी कारण आप स्वतन्त्रता से जैनधर्म के मण्डन में नहीं हिचकिचाते, बल्कि निर्भीकतापूर्वक वास्तविक बात सभ्य संसार के सामने रखने में भी नहीं चूकते—इसके अनेक उदाहरण विद्यमान हैं।

श्रीमान् ने इस पुस्तक की भूमिका लिखने का जो परिश्रम उठाया है, उसके लिये आप को हार्दिक धन्यवाद दिया जाता है और आप का आभार विशेषरूप से माना जाता है।

प्रकाशक.



“पाठक इस प्रकार समझें”

सुनहरी नामावली में “श्री० रामचन्दजी हीराचन्दजी छाजेड” डेरागाजी खा, पन्जाब वालों की सहायता के ४०) रुपये लिखे गये हैं उनके स्थान में पाठक ८१) समझें.



* ॐ *

आभारप्रदर्शन ।

जिन २ महानुभावों से और जिन २ विद्वानों की रचना से मुझे इस ग्रन्थ के तैयार करने में सहायता मिली है उन सब का मैं आभारी हू और सब के प्रति हार्दिक भावों से कृतज्ञता प्रकट करता हूं, भूल से जिन का शुभ नामोल्लेख न किया जा सका हो, वे सज्जन उदारतापूर्वक क्षमा प्रदान करें।

१ श्री० चरित्रनायकजी के सुशिष्य मुनि श्रीशकरलालजी मा०
२ श्रीयुत् चाडीलालजी मोतीलालजी शाह और ब्रह्मचारी श्री शीतलप्रसादजी ।
३. ,, हीरालालजी जैन, एम ए एल एल. बी. ।
४, , छोटूलालजी पोखरना (इन्दौर) ।
५ ,, प० द्वारिकाप्रसादजी जैन, (देहली) ।
६ ,, कु० मोतीलालजी राका, (ब्यावर) ।
७ ,, प० जनार्दन भट्ट एम ए ।
८. ,, प० नाथूरामजी प्रेमी ।
९. ,, प० नगेन्द्रनाथ वसु (प्राच्यविद्या महार्णव) ।

१०. श्रीयुत अध्यापक मालपाणी जी "विशारद" (इन्दौर)।
११ " बा० देवीसहायजी माथुर (साहित्य-भूषण)।
१२ " अध्यापक श्रीनाथजी मोदी, सादड़ी (मारवाड़)।
१३ " मास्टर कन्हैयालालजी गार्गीय, सेक्रेटरी।
दी महालक्ष्मी मिल्स कम्पनी लिमिटेड, ब्यावर।
१४ " चांदमलजी टोडरवाल, ब्यावर।

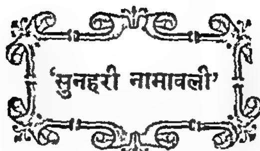
ग्रन्थसूची.

१ भावना शतक (गुजराती)।
२. चन्दनबाला (आत्मानन्द जैन ट्रैक्ट सोसाइटी)।
३ सरस्वती (मासिक पत्रिका)।
४ हिन्दी-शब्दसागर (काशी-नागरी-प्रचारणी सभा)।
५ अजैन विद्वानों की सम्मतियें व श्रावकधर्म-दर्पण (श्रीजैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय ब्यावर)।
६ सत्यार्थ दर्पण (श्री अजितकुमारजी शास्त्री लिखित)।
७

ग्रन्थ प्रकाशन के कार्य में जिन २ महानुभावों से हमें आर्थिक सहायता प्राप्त हुई है उनके शुभ नाम आभार सहित "सुनहरी नामावली" में प्रकाशित किये गये है।

यहा हम श्री० कुवर मोतीलालजी राका व्यावर निवासी को विशेप धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते कि जिन्होंने हमें समय समय पर अपना अमूल्य समय व्यय कर अनेक कार्यों में उचित सम्मति प्रदान की व श्री० प० द्वारिकाप्रसादजी जैन देहली निवासी ने अपना अमूल्य समय व्यय कर पुस्तक छपाई व प्रूफ सशोधन इत्यादि अनेक कार्यों में सहायता दी, अतएव उन को भी हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं ।

लेखक.



'सुनहरी नामावली'

जिन २ महानुभावों ने इस ग्रन्थ को लागतमात्र से कम कीमत में अधिक प्रचार कराने के लिये आर्थिक सहायता प्रदान की है उनको शतशः धन्यवाद देते हैं और उनके शुभ-नाम आभार सहित नीचे प्रकाशित किए जाते हैं —

संख्या	शुभनाम
५००)	श्रीमान् कुन्दनमलजी लालचन्दजी कोठारी जेसलमेरी (ब्यावर)
५००)	,, मुकुन्दचन्द जी सोहनराज जी थालिया पाली (मारवाड)
२००)	,, आवतराज जी मिश्रीमल जी मुणोत (ब्यावर)
२००)	,, जुहारमल जी भूरजी पूनमिया-सादडी (मारवाड)
१३१)	,, पूरनचन्द जी रतनचन्दजी देहली
१०१)	,, खूबचन्दजी इन्द्रचन्द जी देहली
१०१)	,, श्रीस्थानवासी जैन श्रीसङ्घ, मदनगञ्ज (किशनगढ)
१००)	,, जीवनसिंह जी साहिब हाकिम आसींद (मेवाड)
१००)	,, पुखराजजी भण्डारी कष्टम हाकिम बाडमेर
१००)	,, इन्द्रमलजी मागीलालजी डागी-गगार (मेवाड)

१००) श्रीमान् चुन्नीलाल जी गुमानचन्द जी पुनमिया सादड़ी
१००) ,, हीराचन्दजी रतनचन्दजी सादड़ी (मारवाड़)
७१) ,, अजीतसिंहजी सिमरथमलजी खींवसरा (जोधपुर)
५१) ,, उदयचन्दजी छोटमलजी मूथा उज्जैन
५०) ,, कुन्दनमलजी अमरचन्दजी सादड़ी (मारवाड़)
५०) ,, ताराचन्दजी डाहाजी सादड़ी (मारवाड़)
५०) ,, गुलराजजी पुनमचन्द जी हरमाडा (किशनगढ़)
५०) ,, जैसलमेरी चुन्नीलाल जी बोहरा की धर्मपत्नी श्रीमती लहरी बाई मु० नरोरा
४०) ,, रामचन्दजी हीराचन्दजी-छाजेड़, (डेरागाजीखाँ)
२५) ,, ओंकारलाल जी बाफणा-हमीरगढ़ (मेवाड़)
२५) ,, मूलचन्दजी जेताजी सादड़ी (मारवाड़)
२५) ,, नथमल जी मनरूप जी—सादड़ी (मारवाड़)
२५) ,, सरदारमलजी कस्तूरचन्द जी मुता सादड़ी (मारवाड़)
२५) ,, मन्नालाल जी पन्नालालजी बड़ेरा (मालवा)
२५) ,, गुलराज जी सन्तोकचन्द जी पूना सिटी

विशेष धन्यवाद सादड़ी श्रीसङ्घ को दिया जाता है कि जिन्होंने इसके लिखवाने में बहुत सहायता दी।

मास्टर मिश्रीमल.

॰ श्रीमहावीराय नमः ॰

निवेदन.

वर्तमान नवयुग में यद्यपि जैनसाहित्य के अन्दर गल्प, नाटक, गद्य, पद्य, कविता भाषा इत्यादि अनेक प्रकार की पुस्तकें अधिक संख्या में निकल चुकी हैं और निकल रही हैं, तथापि ऐसी पुस्तकें आवश्यकता से बहुत कम पाई जाती हैं कि जिनमें किसी आदर्श पुरुष की जीवनी अंकित हो। कुछ समय से कई एक विद्वानों ने इस कमी की तरफ लक्ष्य देकर कुछ प्रयत्न किया भी है, परन्तु वह अभी आवश्यकता से बहुत ही अल्प हुआ है। इसी कमी की तरफ लक्ष्य लेकर समिति ने इस पुस्तक प्रकाशन के कार्य को सहर्ष स्वीकार किया है।

यद्यपि सच्चे जीवन वृत्तान्तों में कल्पनामय मनोरञ्जक वार्ता नहीं पाई जाती है और सम्भव है इसी कारण से वे मनोरञ्जक गल्पें और उपन्यासके शौकीनों व परगुणद्वेषी मनुष्यों को रुचिकर न भी हो, परन्तु गुणग्राही मनुष्य तो ऐसे आदर्श जीवनचरित्रों का हृदय से स्वागत करते हैं।

दूसरों का अनुकरण करना यह मनुष्यों का प्राकृतिक स्वभाव है, इसलिये समाज के समक्ष आध्यात्मिक और पारमार्थिक उच्च जीवन बिताने वाले, महत्पुरुषों का जीवन वृत्तान्त रक्खा जाय तो विशेष लाभ हो सकता है, और लोग चरित्रनायकजी के गुणों के साथ अपनी तुलना करके भला और

बुरा समझकर अपने जीवन को भी उत्तम बनाने की कोशिश करते हैं। इसी नियमानुसार आदर्श जीवनचरित्र इह लोक से परलोक तक के सुखों का सच्चा मार्ग दिखाने में एक शिक्षक का काम देता है।

उदाहरण के लिये देखिये—श्रीतीर्थङ्कर देवों के जीवन चरित्र पढने व श्रवण करने से आत्मिकशक्ति का विकाश होकर आत्मा की अनन्त शक्ति का भान अर्थात् नर से नारा यण होने का परिचय मिलता है। और स्वनाम धन्य श्रीविजय-कुवर और श्रीमती विजयाकुवरी के जीवन वृत्तान्त से अखंड ब्रह्मचर्य व्रत की शिक्षा मिलती है। और प्रतापी सत्यधारी राजा हरिश्चन्द्र की जीवनी से "सत्य" का महत्व प्रकट होता है, और महाराणा प्रताप के जीवनचरित्र से अपूर्व धैर्य और दृढ प्रतिज्ञा पालन करने का अपूर्व उदाहरण मिलता है। इस लिये जीवन चरित्र का स्थान साहित्य में उच्च कोटि पर गिना जाता है। धार्मिक, सामाजिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिये महा पुरुषों के जीवन चरित्र लिखने का प्रचार प्राचीन काल से ही प्रस्तुत है।

प्रबल वैराग्य, अपूर्व त्याग, निश्चल मनोवृत्ति, अनुपम धैर्य, सुदृढ सहनशीलता चित्ताकर्षक शक्ति, अपूर्व संयम, इन्द्रिय निग्रहता—इत्यादि अनेक उत्तमोत्तम गुणों से अपने मनुष्य जीवन को परम आदेश रूप में परिणत कर संसारके सन्मुख अपना दिव्य जीवन प्रकट करने वाले महा पुरुषों का ही जीवन चरित्र लिखा जाता है, और उन्हीं महा पुरुषों में से एक हमारे चरित्र नायक जी भी हैं। आपके इन्हीं गुणों से प्रेरित होकर ही हमने इस पुस्तक को लिखवा कर प्रकाशित करने

का प्रथम ही साहस किया है, और आपके महत्त्वपूर्ण कार्यों का संक्षिप्त नमूना लेकर पाठकों के सन्मुख उपस्थित हुए हैं। आशा है सुहृदय उदारचित्त पाठक इसे अवश्य अपनाकर हमारे साहस की वृद्धि करेंगे।

जिन जिन महानुभावो के चित्र पुस्तक मे दिये गये हैं उन सभो का परिचय विस्ताररूप से देने की हमारी हार्दिक इच्छा थी—परन्तु हम उन मे से कई महानुभावो के परिचय से अज्ञात होने के सबब व समय के अभाव से विशेष प्रयत्न न कर सकने के कारण हम उन का परिचय विस्ताररूप से नहीं दे सके, इस का हमे खेद है। केवल चार ही महानुभावो का परिचय जो हमें संक्षिप्तरूप से मिला, वह इस पुस्तक में दिया गया है। सम्भव है उस मे किसी प्रकार की त्रुटि रह गई हो तो हम उन भावो से क्षमा चाहते हैं। यद्यपि हम ने इस बात का पूरा ध्यान रक्खा है कि पुस्तक में किसी प्रकार की त्रुटि न रहे तथापि दृष्टिदोष के कारण से व प्रेसवालो की असावधानी से व अन्य किसी कारण से सम्भवत कोई त्रुटि रह गई हो तो सुज्ञ पाठक सुधार कर पढने की कृपा करेंगे, और हमें उन त्रुटियो से सूचित करने की उदारता दिखलावेंगे तो यथा सम्भव द्वितीयावृत्ति (Second edition) में सुधारने का प्रयत्न किया जायगा।

श्रीसंघ का कृपाकांक्षी—

मास्टर मिसरीमल,

मन्त्री-श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,

रतलाम।

विषय-सूची ।

ग्रन्थारम्भ विषय-सूची ।

परिशिष्ट प्रकरण सूची ।



र्मके अग्रगण्य श्रीयुत् लाला गोकुळचंदजी जोहरी देहली

Lakshmi Art Bombay, 8

॥ ॐ ॥

आदर्श मुनि

मङ्गलाचरण ।

धम्मो मङ्गल मुक्किठ, अहिंसा संजमो तवो ।
देवा वि तं नमंसन्ति जस्स धम्मे सया मणो ॥

दशवैकालिक सूत्र, अ० १ गा० १

भावार्थ—अहिंसारूप संयम और तप ही संसार में सर्वोच्च उत्कृष्ट धर्म है और ऐसे ही धर्म में प्रवृत्त होनेवाले महा पुरुषों को देवता भी नमस्कार करते हैं। ऐसे ही आदर्श पुरुषों के जीवन से हमें अमूल्य शिक्षायें प्राप्त होती हैं।

"Lives of great men all remind us
We can make our lives sublime,
And, departing, leave behind us
Footprints on the sands of time"

Longfellow's Psalam of Life

नाण-दसण सम्पन्न, सजमे य तवे रयं ।
एव गुणसमाउत्त, सजय साहू मालवे ॥

दशवैकालिक अ० ७ गाथा ४६

भावार्थ- ज्ञानदर्शन संयम और तप इत्यादि गुणों से जो अलंकृत है वह आदर्श साधु (मुनि) है ।

जैनधर्म का प्राचीन इतिहास

और

गुर्वावलि ।





नधर्म पर इधर जो वर्षों से भारत और अन्य देशो में चर्चा चल रही है वह साहित्य प्रेमियो से छिपी नहीं है। समय २ पर प्रकाशित ग्रन्थो, लेखों और व्याख्यानों से इस विषय पर काफी प्रकाश पड चुका है। वडे २ साहित्य मर्मज्ञ विद्वानों ने इस सम्बन्ध में गहरी खोज कर २ के इस साम्प्रदायिक प्रश्न को तटस्थ ला रक्खा है। इस विषय पर वडी २ रचनाएँ हो चुकी और हो रही हैं। ऐसी दशा में मेरे जैसे अल्पज्ञ का एक ऐसे गूढ विषय पर लेखनी उठाना नितान्त धृष्टता है। किंतु, प्रकाशक महाशय का आग्रह हुआ कि इस चरित्र में जैनधर्म पर भी कुछ लिखा जाय। उसके उपकरण के लिये जब मैंने इस विषय का अनुशीलन किया तो वह इतना हो गया कि जिसके द्वारा एक पृथक् ग्रन्थ रचना हो सके। इस कारण उसको छोड कर पाठकों की जानकारी के लिये मैं यहां कुछ विचार सङ्कलन करता हूँ। आशा है, वह उन्हें उपयोगी और रुचिकर प्रतीत होगा।

जैनधर्म की प्रसिद्धी भारतवर्ष में तो है ही, पर अब योरुप, अमेरिका में भी उसका प्रचार होता जा रहा है। आज कल योरुप में ऐसे अनेक विद्वान हैं, जो वर्षों से जैनधर्म का अनुशीलन कर रहे हैं। इतना ही नहीं, वहां स्थान २ पर जैन लिटरेचर सोसाइटियां भी स्थापित होती जा रही हैं।

सोसाइटियों का उद्देश जैन-तत्त्व ज्ञान का प्रचार करना है। वैसे तो हमारे देश में जैनधर्म की उत्पत्ति, शिक्षा और उद्देश सम्बन्धी कितने ही भ्रांत मत प्रचलित हैं, किंतु एक वारही ऐतिहासिक गवेषणा के पश्चात् बंगला भाषा के सुप्रसिद्ध विद्वान् लेखक श्रीयुत वरदाकांत मुखोपाध्याय एम. ए. ने लिखा है कि "जैन, निरामिष भोजी क्षत्रियों का धर्म है। "अहिंसा परमो धर्म" इसकी सार-शिक्षा और जड़ है। जैनियों के मत में जीव-हिंसा न करना, जीवों को कष्ट न देना यही श्रेष्ठ धर्म है। साधारण लोग इस धर्म को अति सामान्य जानते हैं। कोई कहते हैं यह वणिक ओसवाल, श्रावगी आदि और नास्तिकों का धर्म है, कोई समझते हैं यह हिंदू अथवा बौद्धधर्म की शाखामात्र है—तथा शङ्कराचार्य के समय हिंदू धर्म के पुनरभ्युदय काल में इसकी उत्पत्ति हुई है। कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि यह हिंदू दर्शनशास्त्र की गवेषणा (शोध) का अन्तिम फल है। अनेक लोग समझते हैं कि महावीर और पार्श्वनाथ ही इसके आदि प्रचारक थे। किन्तु, यह सब धार्मिक मत भेद के ही कारण कहा जाता है। वास्तविक बात तो यह है कि जैनधर्म भारतवर्ष का एक अत्युच्च और पवित्र एवम् सुप्राचीन धर्म है। इसका तत्त्व ज्ञान सभी दर्शन शास्त्रों से निराला है।" इंडिया आफिस लाइब्रेरी के चीफ लाइब्रेरियन

डाक्टर थामस एम ए, पी एच डी कहते हैं कि न्यायशास्त्र में जैन न्याय का स्थान बहुत ऊंचा है। इसके कितने ही तत्व पाश्चात्य तर्कशास्त्र के सिद्धांतो से बिल्कुल मिल जाते हैं। स्याद्वाद का सिद्धांत बडा गम्भीर है। वस्तु की भिन्न २ स्थितियों पर वह अच्छा प्रकाश डालता है। डाक्टर टेसीटोरी नामक इटेलियन विद्वान् ने कहा था—जैनदर्शन के मुख्य तत्व विज्ञान शास्त्र के आधार पर स्थित हैं। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि ज्यों २ पदार्थ विज्ञान की उन्नति होगी त्यों २ जैन धर्म के सिद्धांत भी वैज्ञानिक प्रमाणित होते जायगे। जर्मन विद्वान डाक्टर हर्टेल का तो यहां तक कहना है कि'—

Now, what would Sanskrit poetry be without this large Sanskrit literature of the Jains ? The more I learn to know it, the more my admiration rises

अर्थात्—यदि जैनों का संस्कृत-साहित्य अलग कर दिया जाय तो संस्कृत कविता की क्या दशा हो? अस्तु, मैं अपनी क्षुद्र बुद्धि के अनुसार कह सकता हूँ कि जैनधर्म के तत्व इतने व्यापक हैं कि वह सार्वभौम धर्म हो सकता है।

जैनधर्म कितना प्राचीन है, यह कब से प्रचलित हुआ, इस विषय का निर्णय करना कठिन ही नहीं किन्तु दुःसाध्य है। बहुत समय तक तो लोगो की यही भावना और विश्वास रहा कि—जैनधर्म केवल बौद्धधर्म ही की एक शाखा है। अध्यापक विलसन (Wilson), लेसन (Lassen), बार्थ-

डाक्टर थामस एम ए., पी. एच डी कहते हैं कि न्यायशास्त्र में जैन न्याय का स्थान बहुत ऊंचा है। इसके कितने ही तत्त्व पाश्चात्य तर्कशास्त्र के सिद्धांतों से बिल्कुल मिल जाते हैं। स्याद्वाद का सिद्धान्त बड़ा गम्भीर है। वस्तु की भिन्न २ स्थितियों पर यह अच्छा प्रकाश डालता है। डाक्टर टेसीटोरी नामक इटेलियन विद्वान् ने कहा था—जैनदर्शन के मुख्य तत्त्व विज्ञान शास्त्र के आधार पर स्थित हैं। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि ज्यों २ पदार्थ विज्ञान की उन्नति होगी त्यों २ जैन धर्म के सिद्धान्त भी वैज्ञानिक प्रमाणित होते जायगें। जर्मन विद्वान् डाक्टर हर्टल का तो यहां तक कहना है कि:—

Now, what would Sanskrit poetry be without this large Sanskrit literature of the Jains? The more I learn to know it, the more my admiration rises.

अर्थात्—यदि जैनों का संस्कृत-साहित्य अलग कर दिया जाय तो संस्कृत-कविता की क्या दशा हो? अस्तु, मैं अपनी क्षुद्र बुद्धि के अनुसार कह सकता हूं कि जैनधर्म के तत्त्व इतने व्यापक हैं कि यह सार्वभौम धर्म हो सकता है।

जैनधर्म कितना प्राचीन है, यह कब से प्रचलित हुआ, इस विषय का निर्णय करना कठिन ही नहीं किन्तु दुःसाध्य है। बहुत समय तक तो लोगों को यही भावना और विश्वास रहा कि—जैनधर्म केवल बौद्धधर्म ही की एक शाखा है। अध्यापक विलसन (Wilson), लेसन (Lassen) वार्थ-

(Barth), वेबर (Weber) प्रभृति यूरोपियन प्रकाण्ड पंडितो का भी ऐसा ही मत था। किंतु किस समय किस कारण से यह शाखारूप में परिणित हुआ, इस विषय में वे कुछ नहीं कहते। विद्वद्वर बार्थ ने अपनी "भारतवर्ष के धर्म" (Religions of Inida) नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि इस विषय म मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार पंडितवर वेबर ने भी (History of Indian Literature) "भारतीय साहित्य का इतिहास" नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि "जैनधर्म के सम्बन्ध में हमें जो कुछ ज्ञान है वह ब्राह्मणशास्त्रों से ज्ञात हुआ है।" इन अवतरणों से सिद्ध है कि उपर्युक्त विद्वान् स्वयं जैनधर्म के विषय में अपनी अज्ञता प्रकट करते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि जैनधर्म की अप्राचीनता के विषय में जो भी लोकोक्तियां हैं वे निरी निर्मूल है। यही नहीं, इन उक्तियों का पूर्व और पश्चिम के अनेक विद्वानों ने खंडन किया है और अपनी गहरी ऐतिहासिक खोज के द्वारा जैनधर्म को अनादि और प्राचीन सिद्ध कर दिखाया है, जैसा कि वास्तव में यह था। इन छानबीन करने वाले महाशयों में एक डाक्टर बूल्हर (ब्हूलर) और दूसरे प्रोफेसर जैकोबी हैं। दोनों महाशय जर्मनी के सुविख्यात विद्वान् हैं। जैकोबी महाशय ने तो अपने अन्वेषण द्वारा यहां तक सिद्ध कर दिया है कि जैनधर्म बौद्धधर्म से बहुत पहिले का है। इसी प्रकार उदयगिरि, जूनागढ़ आदि २ स्थानों के शिलालेखादि से भी जैनधर्म की बौद्धधर्म से प्राचीनता पाई जाती है। यहां हम कतिपय देशी और विदेशी विद्वानों के मत उद्धृत करते हैं, जिन से जैनधर्म की प्राचीनता और बौद्धधर्म की भिन्नता पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

श्रीयुत महामहोपाध्याय पं० स्वामी राममिश्रजी शास्त्री भूतपूर्व प्रोफेसर संस्कृत कालेज बनारस ने, काशी में जो पौष शुक्ला १ संवत् १९६२ को व्याख्यान दिया था, उसमें आपने कहा था कि जैनदर्शन वेदान्तादि दर्शनों से पहिले का है। जैनमत तब से प्रचलित हुआ है जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ। एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों की हुँकार से दसों दिशाएँ गूँज उठती थीं। जैन-धर्म स्याद्वाद का अभेद्य दुर्ग है जिसके भीतर वादी प्रतिवादि-यों के मायामय गोले प्रवेश नहीं कर सकते।

सुविख्यात साहित्यज्ञ और इतिहासज्ञ श्रीमान् लोकमान्य पं० बाल गंगाधर तिलक महोदय ने ३० नवम्बर सन् १९०४ ई० को जो बड़ौदा नगर में व्याख्यान दिया था उसमें आप ने कहा था —

"अहिंसा परमो धर्मः" इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मणधर्म पर चिरस्मरणीय प्रभाव डाला है। पूर्वकाल में यज्ञ के लिये असंख्य पशुहिंसा होती थी, इसके प्रमाण मेघदूत काव्य आदि अनेक ग्रन्थों से मिलते हैं परन्तु, इस घोर हिंसा का ब्राह्मणधर्म से विदाई ले जाने का श्रेय जैनधर्म को ही है। सच पूछिये तो ब्राह्मणधर्म को जैनधर्म ही ने अहिंसा धर्म बनाया।"

मराठी "केसरी" के सम्पादक की हैसियत से भी आपने उस के १३ दिसम्बर सन् १९०४ के अंक में जैनधर्म पर लिखते हुए अपनी यह सम्मति दी थी:—

"ग्रन्थों तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता है कि जैनधर्म अनादि है, यह विषय निर्विवाद तथा मतभेद रहित

(Barth), वेबर (Weber) प्रभृति यूरोपियन प्रकाण्ड पंडितों का भी ऐसा ही मत था। किंतु किस समय किस कारण से यह शाखारूप में परिणित हुआ, इस विषय में वे कुछ नहीं कहते। मिस्टर वार्थ ने अपनी "भारतवर्ष के धर्म" (Religions of Inida) नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि इस विषय में मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार पंडितवर वेबर ने भी (History of Indian Literature) "भारतीय साहित्य का इतिहास" नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि "जैनधर्म के सम्बन्ध में हम जो कुछ ज्ञात है वह ब्राह्मणशास्त्रों से ज्ञात हुआ है।" इन अवतरणों से सिद्ध है कि उपर्युक्त विद्वान् स्वयं जैनधर्म के विषय में अपनी अज्ञता प्रकट करते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि जैनधर्म की अप्राचीनता के विषय में जो भी लोकोक्तियां हैं वे निरी निर्मूल हैं। यही नहीं, इन उक्तियों का पूर्व और पश्चिम के अनेक विद्वानों ने खण्डन किया है और अपनी गहरी ऐतिहासिक खोज के द्वारा जैनधर्म को अनादि और प्राचीन सिद्ध कर दिखाया है, जैसा कि वास्तव में यह था। इन छानबीन करने वाले महाशयों में एक डाक्टर बूल्हर (व्हूलर) और दूसरे प्रोफेसर जैकोबी हैं। दोनों महाशय जर्मनी के सुविख्यात विद्वान् हैं। जैकोबी महाशय ने तो अपने अन्वेषण द्वारा यहां तक सिद्ध कर दिया है कि जैनधर्म बौद्धधर्म से बहुत पहिले का है। इसी प्रकार उदयगिरि, जूनागढ़ आदि २ स्थानों के शिलालेखादि से भी जैनधर्म की बौद्धधर्म से प्राचीनता पाई जाती है। यहां हम कतिपय देशी और विदेशी विद्वानों के मत उद्धृत करते हैं जिन से जैनधर्म की प्राचीनता और बौद्धधर्म की भिन्नता पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

श्रीयुत महामहोपाध्याय पं० स्वामी राममिश्रजी शास्त्री भूतपूर्व प्रोफेसर संस्कृत कालेज बनारस ने, काशी में जो पौष शुक्ला १ संवत् १९६२ को व्याख्यान दिया था, उसमें आपने कहा था कि जैनदर्शन वेदान्तादि दर्शनों से पहिले का है। जैनमत तब से प्रचलित हुआ है जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ। एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों की हुँकार से दसों दिशाएँ गूंज उठती थीं। जैनधर्म स्याद्वाद का अभेद्य दुर्ग है जिसके भीतर वादी प्रतिवादियों के मायामय गोले प्रवेश नहीं कर सकते।

सुविख्यात साहित्यज्ञ और इतिहासज्ञ श्रीमान् लोकमान्य पं० बा'ल गंगाधर तिलक महोदय ने ३० नवम्बर सन् १९०४ ई० को जो बड़ौदा नगर में व्याख्यान दिया था उसमें आप ने कहा था,—

"अहिंसा परमो धर्मः" इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मणधर्म पर चिरस्मरणीय प्रभाव डाला है। पूर्वकाल में यज्ञ के लिये असंख्य पशुहिंसा होती थी, इसके प्रमाण मेघदूत काव्य आदि अनेक ग्रन्थों से मिलते हैं परन्तु, इस घोर हिंसा का ब्राह्मणधर्म से विदाई ले जाने का श्रेय जैनधर्म को ही है। सच पूछिये तो ब्राह्मणधर्म को जैनधर्म ही ने अहिंसा धर्म बनाया।"

मराठी "केसरी" के सम्पादक की हैसियत से भी आपने उस के १३ दिसम्बर सन् १९०४ के अंक में जैनधर्म पर लिखते हुए अपनी यह सम्मति दी थी —

"ग्रन्थों तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता
जैनधर्म अनादि है, यह विषय निर्विवाद तथा

है। सुतरा इस विषय में इतिहास के भी अनेक सुदृढ प्रमाण हैं। ईस्वी सन् से ५२६ वर्ष पहिले का तो यह धर्म भली प्रकार सिद्ध है। महावीर स्वामी इस को पुन प्रकाश में लाये, इस बात को आज २४५१ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। बौद्धधर्म की स्थापना के पहिले जैनधम फैल रहा था, यह बात विश्वास करने योग्य है। चोबीस तीर्थकरों में महावीर स्वामी अन्तिम तीर्थंकर थे, इस से भी जैनधम की प्राचीनता जानी जाती है। बौद्धधर्म पीछे से हुआ, यह बात निश्चित है।"

श्रीयुत कन्नूलाल जी* एम० ए० (The Theosophist) के दिसम्बर सन् १६०४ तथा जनवरी सन् १६०५ के अङ्क में अपनी सम्मति देते हैं —

"जैनधर्म एक ऐसा प्राचीन धर्म है कि जिसकी उत्पत्ति तथा इतिहास का पता लगाना एक बहुत ही दुर्लभ बात है। इत्यादि।"

श्रीयुत वासुदेव गोविन्द आपटे बी० ए०, इन्दोर निवासी का मत है कि —

"प्राचीन काल में जैनियो ने उत्कृष्ट पराक्रम वा राज्य भार का परिचालन किया है। उस समय चक्रवर्ती, महामण्डलीक और मण्डलीक आदि बडे २ पदाधिकारी जैनधर्मी हुए हैं। जैनियों के परमपूज्य चौवीसों तीर्थंकर भी सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी

---

* सेशन जज धौलपुर राज्य।

आदि क्षत्रिय कुलोत्पन्न बड़े २ राज्याधिकारी हुए, जिस की साक्षी जैनग्रन्थों तथा अजैन शास्त्रों और ऐतिहासिक ग्रन्थों में मिलती है।

"इस धर्म में अहिंसा का तत्त्व और यतिधर्म अत्यन्त उत्कृष्ट है। हमारे हाथ से जीवहिंसा न होने पाने, इस के लिये जैनी लोग जितने डरते हैं, उतने बौद्ध नहीं डरते। किसी समय जैनधर्म की इस देश में बड़ी उन्नतावस्था थी। धर्मनीति, राजनीति, शास्त्रनीति और समाजोन्नात आदि बातों में ये इतर जनों से बहुत आगे और बढ़े चढ़े थे।"

राय बहादुर बाबू पूर्णेन्दुनारायणसिंहजी एम० ए०, बाकीपुर लिखते हैं—

"जैनधर्म पढ़ने की मेरी हार्दिक इच्छा है, क्योंकि मैं ख्याल करता हूँ कि व्यवहारिक योग्याभ्यास के लिये इसका साहित्य सब से प्राचीन (Oldest) है।"

महामहोपाध्याय प० गंगानाथ झा एम० ए०, डी० ए० लिट्० इलाहाबाद —"जब से मैंने—शंकराचार्य द्वारा जैनसिद्धान्त पर खंडन को पढ़ा है, तब से मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धान्त में बहुत कुछ है, जिस को वेदान्त के आचार्य ने नहीं समझा। मैं अब तक जितना कुछ भी जैनधर्म को जान सका हूँ उस से मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि वह जैनधर्म को उसके असली ग्रन्थों से ... करए उठाते, तो उन को जैनधर्म के विरोध करने ... बात नहीं मिलती।"

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि 'जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकांश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बड़े विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौलपुर ने एक महत्त्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं-

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जेनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थों में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से २०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वय विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तों की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जेन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्म्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मासाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मास खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतिया मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहा उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि 'जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकाश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बडे विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौल्पुर ने एक महत्वपूर्ण लेख "लाल' लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं:-

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थो में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से २०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तों की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मांसाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मांस खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतियां मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहां उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकांश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बड़े विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौलपुर ने एक महत्त्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं:-

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थो में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से २०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वय विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तो की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि सस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मासाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मास खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतिया मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहा उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकांश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बड़े विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौलपुर ने एक महत्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं.-

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थो में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से २०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वय विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तों की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मांसाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मांस खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतियां मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहां उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि 'जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकांश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बड़े विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौल्पुर ने एक महत्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं—

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थो में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से २०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तों की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मांसाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मांस खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतियां मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहां उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि 'जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकाश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बडे विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौलपुर ने एक महत्त्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं—

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थो में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से ७०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तों की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते है जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मांसाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मांस खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतिया मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहा उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

-श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मति —

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि 'जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है —

"दो ढाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकांश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं —"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बड़े विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौलपुर ने एक महत्त्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १६२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं:-

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थो में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेइसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से २०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वय विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तो की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि सस्थापक और प्रवर्त्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मासाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मास खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतिया मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहा उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

हासिक और शास्त्रसम्मत ग्रन्थों से इस विषय की इतनी छानबीन होचुकी है कि अब इस धर्म की प्राचीनता के विषय में किसी को किसी प्रकार का सन्देह नहीं रहा है। इस सम्बन्ध में अनेक पाश्चात्य विद्वान् भी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं, जिन की खोज से जैनधर्म की प्राचीनता पर विशेष प्रकाश पड़ा है। यहां उन में से कुछ विद्वानों की सम्मति आदि का परिचय करा देना अनुचित न होगा।

सुप्रसिद्ध यूरोपियन ग्रन्थकार मेक्समिलर (Maxmiller) साहब ने अपने "आर्टिकल आन आर्यन" नामक ग्रंथ के खण्ड २. में (Article on Aryan Vol II) विस्तार के साथ जैन-धर्म की प्राचीनता सिद्ध की है। उस में आप लिखते हैं:—

" It is now quite certain that the Jain community was really even older than the time of, Buddha and was recognized by his contemporary the Mahavir named Wardhaman and it is also clear that the Jain Views of life were in the most important and essential respects the exact reverse of the Buddhist Views The two orders Jain and Buddhist were not only and from the first independent, but directly opposed one to the other In Philosophy the Jains are the most through going supporters of the old animistic position nearly every thing according to them has a soul within its outward visible shape, not only men

and animals but also all plants and even the particles of earth and of water (when it is cold) and fire and wind The Buddhist theory as is well known is put together without the hypothesis of soul at all The word the Jains use for soul is (Jiva) which means life and there is much analogy between many of the expressions they use and the view that the ultimate substances which come into direct contact with the minute souls in every thing and their best known position in regard to the points most discussed in Philosophy is syadvad the doctorine that they may say yes and at the same time no to every thing You can affirm the certainty of the world for instance from one point of view and at the same time deny it from another or at different times and in different connections you may one day affirm it and another day deny it"

अर्थात् यह बात अब पूर्ण निश्चित होचुकी है कि जैन-समाज वास्तव में बुद्ध के समय से भी पहिले का है और उनके समकालीन महावीर स्वामी जिनका नाम वर्धमान था उनके द्वारा प्रख्यात था। यह भी अच्छी तरह मालूम होता है कि जैनियों के मुख्य और महत्व के विषयों में जैनिया के रहन सहन और विचार बौद्धों के विचारादि से बिल्कुल विपरीत थे।' ये दोनो समाज अर्थात जैन और बौद्ध पहिले से केवल

of Orissa for some centuries (J. B O R. S, Vol. III Page 448).

अर्थात् 'जैनधर्म का प्रवेश उड़ीसा में शिशुनागवंशी राजा नन्दवर्धन के समय में हो गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि (खारवेल के समय में) जैनधर्म कई शताब्दियों तक उड़ीसा का राष्ट्रीय धर्म रह चुका था'।

इस लेख की उपयोगिता के विषय में जायसवाल महाशय कहते हैं –

'This inscription occupies a unique position amongst the materials of Indian History for the centuries preceding the Christian era In point of age it is the second inscription after Asoka, the first being the Nanaghat inscription of Vedisri But from the point of view of the chronology of the premauryan times and the History of Jainism it is the most important inscription yet discovered in the Country. It confirms the Puranic record and carries the dynastic chronology to C. 450 B. C Further, it proves that Janism entered Orissa and probably became the state religion, within 100 years of the death of its founder Mahavira It affords the earliest historical instance of the Unity of Behar and Orissa (450 B. C.) for the social history of this country we



धर्मप्रेमी दानवीर श्रीमान् सेठ [illegible]नमलजी

get the very important datum that the population of ancient Orissa was $3\frac{1}{2}$ Millions in circa 172 B C"

अर्थात् "ईसा के पूर्व की शताब्दियों के भारतीय इतिहास के साधनों में इस लेख का स्थान बहुत ऊंचा है। प्राचीनता में अशोक के बाद का यह दूसरा ही लेख है। पहला नानाघाट का वेदिश्री का लेख है। पर, मौर्यकाल से पहिले के इतिहास क्रम व जैनधर्म के इतिहास के लिये तो यह अब तक देश में जितने लेख मिले हैं, उन सब में अधिक महत्त्व का है। यह पुराणों के लेखों का समर्थन करता है और राजवंश क्रम को इस्वी पूर्व ४०० वर्ष तक ले जाता है। इस से यह भी सिद्ध होता है कि उड़ीसा में जैनधर्म बहुत करके निर्वाण सम्वत् १०० के लगभग आया और वहां का राष्ट्रीय धर्म हो गया। यह ई० पू० ४०० में बिहार और उड़ीसा के एकत्व का सब से प्राचीन प्रमाण है। सामाजिक इतिहास में इससे सब से भारी बात यह विदित होती है कि १७२ ई० पू० के लगभग उड़ीसा की मनुष्य संख्या ३५ लाख थी।"

(३) मथुरा (यू० पी०) के पास का 'कंकाली टीला' एक बहुत प्राचीन स्थान है। यहां कई बार खुदाई होकर जैन-शिलालेखों और अनेक प्राचीन स्तूपों का पता चला है। सर विन्सेन्ट स्मिथ इनका समय ईसा के पूर्व पहिली शताब्दी से लगाकर ईसा की दूसरी शताब्दी तक मानते हैं (१)। सब से

(1) Jain Stupa and other antiquities of Mathura

नया लेख त्रि० स० ११३४ (ई० सन् १०७७) का है। अत ये लेख मथुरा मे जैनधर्म के लगभग ग्यारह शताब्दियो के ऐतिहासिक तारतम्य का पता देते हैं। इन लेखो मे प्राचीनतम लेख से भी यहा का स्तूप कई शताब्दि पुराना है। इस पर फुहरर साहब लिखते हैं —

The Stupa was so ancient that at the time when the inscription was incised, its origin had been forgotten On the evidence of the characters, the date of the inscription may be referred with certainty to the Indo scythian era and is equivalent to A D 156 The stupa must therefore have been built several centuries before the beginning of the christian era, for the name of its builders would assuredly have been known if it had been erected during the period when the Jains of Mathura carefully kept record of their donations "

(Museum Report 1890 91)

अर्थात् "यह स्तूप इतना प्राचीन है कि इस लेख के लिखे जाने के समय स्तूप आदि का वृत्तान्त लोगो को विस्मरण हो गया था। लिपि के प्रमाण से इस लेख की वर्ष इण्डोसिथियन (शक) सम्वत् की प्रतीत होती हैं, जिस से सिद्ध होता है कि यह लेख सन् १५६ के लगभग का है। ऐसी दशा में यह स्पष्ट है कि यह स्तूप ईसा से कई शताब्दियो पहिले निर्मित हुआ होगा। क्योकि यदि वह उस समय बना होता जब कि मथुरा के जैनी अपने दान आदि के लेख रखने लगे थे तो उस के निर्मापकों का नाम अवश्य ज्ञात हुआ होता।"

मथुरा के लेख तथा अन्य स्मारक जैनियों के इतिहास के लिये बहुत ही उपयोगी हैं। इस विषय पर सर विन्सेन्ट स्मिथ के शब्द उल्लेखनीय हैं। वे कहते हैं —

"The discoveries have, to a very large extent, supplied corroboration to the written Jain tradition and they offer tangible and incontrovertible proof of the antiquity of the Jain religion, and of its early existence very much in its present form The series of twenty four pontiffs (Tirthankars) each with his distinctive emblem was evidently firmly believed in, at the beginning of the Cristian era " Further "The *inscriptions are replete with* information as to the organization of the Jain church in sections known as Gana, Kula and Sakha, and supply excellent illustrations of the Jain books Both inscription and sculptures give interesting details proving the existence of Jain nuns and influential position in the Jain church occupied by women *"

अर्थात् "इन खोजों से जैनियों के ग्रथों के वृत्तान्तों का बहुत अधिकता से समर्थन हुआ है और वे जैनधर्म की प्राचीनता व उसके बहुत प्राचीन समय में भी आज ही की

* Jain stupa and other antiquities of * n

भांति प्रचलित होने के प्रत्यक्ष और अकाट्य प्रमाण हैं। सन् ईस्वी के प्रारम्भ में भी चौवीस तीर्थंकर उनके चिन्हों सहित अच्छी तरह से माने जाते थे। बहुत से लेख जैन सम्प्रदाय के गण, कुल व शाखाओं में विभक्त होने के समाचारों से भरे हैं और वे जैनग्रन्थों के अच्छे समर्थक हैं। लेखों और चित्रों से जैन श्राविकाओं की सत्ता व स्त्रियों का जैन सम्प्रदाय में प्रभावशाली स्थान का अच्छा रुचिकर व्योरा मिलता है।"

इनमें के कई लेख व चित्र इत्यादि डा० बूलर ने 'एपिग्राफिआ इण्डिका' नामक पत्र की पहली जिल्द में छपवाये हैं।

(४) सन् १९१२ में श्रीमान् पं० गौरीशङ्कर हीराचन्द जी ओझा ने अजमेर के पास बडली नामक ग्राम से एक बहुत प्राचीन जैनलेख का पता लगाया है। लेख है—'वीराय भगवते चतुरासिति वसे का ये जाला मालिनिय रनिविठ माझिमिके'। लेख से ही प्रमाणित है कि यह वीर निर्वाण सं० ८४ (ई० ४४३ वर्ष) में अङ्कित किया गया था। 'माझिमिक' यही प्रसिद्ध पुरानी नगरी 'मध्यमिका' है जिसका उल्लेख पातञ्जलि ने भी अपने 'महाभाष्य' में किया है (१)।

यह भारतवर्ष में लेखन कला के प्रचार का अभी तक सब से प्राचीन उदाहरण माना जाता है। यह लेख ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी में राजपूताने में जैनधर्म का अच्छा प्रचार होना सिद्ध करता है।

(५) जैनग्रन्थों में महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के जैन धर्मावलम्बी होने और भद्रबाहु स्वामी से जिनदीक्षा लेकर उन

---

(१) "अरुणद्य यवन मध्यमिकाम्"।

साथ दक्षिण को प्रस्थान करने का विवरण है। पर इतिहास लेखक बहुत समय तक इस कथन की सत्यता में विश्वास करने को तैयार नहीं हुए। जब मैसूर राज्य में 'श्रवण बेलगुल' के चन्द्रगिरि पर्वत पर के लेखों का पता चला और उन की शोध की गई, तब इतिहासज्ञों को मानना पड़ा कि निस्सन्देह जैन समाचार इस विषय में बिल्कुल सत्य है। वहां का सब से प्राचीन लेख, जो भद्रबाहु शिला-लेख के नाम से प्रसिद्ध है, इसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में लिखा गया प्रमाणित किया जाता है*। इस लेख में यह समाचार है कि परमर्षि गौतम गणधर की शिष्य परम्परा में—भद्रबाहु स्वामी हुए। उन श्रुतकेवली महात्मा ने अष्टांग निमित्त-ज्ञान से जाना कि उत्तरापथ (उत्तर भारत) में एक भीषण दुष्काल द्वादश वर्ष के लिये पड़ने वाला है। अतः उन्होंने अपने 'साधुओं' को लेकर दक्षिणा-पथ को गमन किया। बीच में अपनी आयु का अल्प भाग शेष रहा जान उन्होंने साधुओं को तो आगे बढ़ने के लिये प्रस्थानित किया और आप स्वयं केवल अपने एक शिष्य प्रभाचन्द्र के साथ 'कटवप्र' नामक पहाड़ी पर ठहर गये और वहीं सन्यास विधि से देहोत्सर्ग किया। यहां के अन्य बहुत से लेखों से सिद्ध होता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य का ही दीक्षा नाम प्रभाचन्द्र आचार्य था। (१) लेख से कुछ दूरी पर एक गुफा है जो भद्रबाहु की गुफा कहलाती है।

(*) Inscriptions at Sravana Belgula by lews Rice Ins No 1 व जैन सिद्धान्त भास्कर किरण १ पृष्ठ १५ ।

(१) 'Incription at S-vana Belgula' (by Le-s Rice)

कहा जाता है कि भद्रबाहु स्वामी का समाधि मरण वहीं पर हुआ था (१)। मि० टामस लिखते हैं —

"That Chandragupta was a member of the Jain community, is taken by their writers as a matter of course, and treated as a known fact, which needed neither argument nor demonstration. The documentry evidence to this effect is of comparatively early date and apparently obsolved from suspicion The testimony of Megasthenes would likewise seem to imply that Chandragupta submitted to the devotional-teachings of the Sramanas as opposed to the doctrines of the Brahmans" (2)

अर्थात् "चन्द्रगुप्त जैनसमाज के व्यक्ति थे" यह जैन ग्रथकारों ने एक ऐसी स्वय सिद्धि और सर्व प्रसिद्ध बात के रूप में लिखा है जिसके लिये उन्हें कोई अनुमान प्रमाण देने की आवश्यकता प्रतीत न हुई। इस विषय में लेखों के प्रमाण बहुत प्राचीन और साधारणत स देह रहित हैं। मेगस्थनीज के लेखों से भी झलकता है कि चन्द्रगुप्त ने ब्राह्मणों के सिद्धान्तो के विपक्ष में श्रमणो (जैन मुनियों) के धर्मोपदेशो को अगीकार किया था।

---

(1) 'Mysore Inscription' by Lews Rice

(2) 'Jainism or early faith of Asoka' Page 23

चन्द्रगुप्त के जैन होने के इतने अकाट्य प्रमाण मिलने पर प्रसिद्ध इतिहासकार "सर विन्सेन्ट स्मिथ" को अपनी "भारत के प्राचीन इतिहास" की बहुमूल्य पुस्तक के तीसरे संस्करण में यह लिखना ही पड़ा कि —

"I am now disposed to believe that the tradition probably is true in its main outline and that Chandragupta really abdicated and became a Jain ascetic."*

अर्थात् "मुझे अब विश्वास हो चला है। कि जैनियों के कथन बहुत करके मुख्य २ बातों में यथार्थ हैं और चन्द्रगुप्त सचमुच राज्य त्याग कर जैन मुनि हुए थे।" जायसवाल महोदय समस्त उपलब्ध साधनों पर से अपना मत स्थिर कर लिखते हैं—

'The Jain books (5th cent A D) and later Jain inscription claim Chandragupta as a Jain imperial ascetic my studies have compelled me to respect the historical date of the Jain writings, and I see no reason why we should not accept the Jain claim that Chandragupta at the end of his reign accepted Jainism and abdicated and died as a Jain ascetic I am not the first to accept the View Mr Rice who has studied the Jain inscription of Sravana Belgula *thoroughly* gave Verdict in favour of it and Mr V Smith has also leaned towards it ultimately "1

---

* V Smith E H I *Page 146*

1 J B O R S Vol III

अर्थात् "ईसा की पाचवीं शताब्दि तक के प्राचीन जैन-ग्रंथ व पीछे के जैन शिलालेख चन्द्रगुप्त को जैन-राजमुनि प्रमाणित करते हैं। मेरे अध्ययनों ने मुझे जैनग्रंथों के ऐतिहासिक वृत्तान्तों का आदर करने के लिये बाध्य किया है। कोई कारण नहीं है कि हम जैनियों के इस कथन को कि चन्द्रगुप्त अपने राज्य के अन्तिम भाग में जैनी हो गया था और पीछे राज्य छोड़कर जिनदीक्षा ले मुनिवृत्ति में मृत्यु को प्राप्त हुआ, न मानें। मैं पहिला ही व्यक्ति यह मानने वाला नहीं हूँ। मि० राइस ने, जिन्होंने श्रवण बेलगोला के शिलालेखों का अध्ययन किया है, पूर्णरूप से अपनी राय इसी के पक्ष में दी है और मि० व्ही० स्मिथ भी अन्त में इस मत की ओर झुके हैं।"

जैनियों की खोज के सम्बन्ध में मिस्टर विन्सेन्ट स्मिथ साहब के विचार ध्यान देने योग्य हैं —

'The field for exploration is vast At the present day the adherents of the Jain religion are mostly to be found in Rajputana and Western India But it was not always so In olden days the creed of Mahavira was far more widely diffused than it is now In the 7th century A D for instance, that creed had numerous followers in Vaisali (Basent north of Patna) and in Eastern Bengal, localities where its adherents are now extremely few I have myself seen abundant

evidences of the former prevalence of Jainism in Bundelkhand during the mediaeval period especially in the 11th and the 12th centuries Further South, in the Deccan, and the Tamil countries, Jainism was for centries a great and ruling power in regions where it is now almost unknown"

अर्थात् "खोज का क्षेत्र बहुत विस्तीर्ण है। आजकल जैनधर्म के पालने वाले बहुतायत से राजपूताना और पश्चिम भारत में ही पाये जाते हैं, पर सदेव ऐसा नहीं था। प्राचीन समय में यह महावीर का धर्म आजकल की अपेक्षा कहीं बहुत अधिक फैला हुआ था। उदाहरणार्थ, ईसा की ७ वीं शताब्दी में इस धर्म के अनुयायी वैशाली और पूर्व बंगाल में बहुत संख्या में थे, पर वहां आज बहुत ही कम जैनी हैं। मैंने स्वयं बुन्देलखण्ड में वहां ११वीं और १२वीं शताब्दि के लगभग जैनधर्म के प्रचार के बहुत से चिन्ह पाये। दक्षिण में आगे को बढ़िये तो जिन तामिल और द्राविड देशों में शताब्दियों तक जैनधर्म का शासन रहा है, वहां वह अब अज्ञात ही सा हो गया है।"

ऊपर कतिपय देशी और विदेशी विद्वानों की सम्मति तथा केवल उन मुख्य २ प्राचीनतम लेखों का संक्षिप्त परिचय है जिन ने जैन इतिहास और उस की प्राचीनता पर विशेष प्रकाश डाल कर उसके अध्ययन में एक नये युग का आरम्भ कर दिया है। इन के अतिरिक्त विविध स्थानों में भिन्न २

समय के सैकडों नहीं सहस्त्रों जेनलेख तथा अन्य जेन स्मारक ऐसे मिल हैं जिन से प्राचीन काल में जैनधर्म के प्रभाव व प्रचार का पता चलता है। वे सिद्ध कर रहे हैं कि जैनधर्म का भूतकाल जगमगाता हुआ रहा है, वह बहुत समय तक राजधर्म रह चुका है। इस की ज्योति क्षत्रियों ने प्रभावान् बनाई थी और क्षत्रियों द्वारा ही इसकी पुष्टि और प्रसिद्धि हुई थी। मगध के शिशु नागवंशी व मौर्य्यवंशी नरेशों, उडीसा के महाराज, खारवेल के अतिरिक्त दक्षिण के कदम्ब, चालुक्य, राष्ट्रकूट, रट्ट, पल्लव, सन्तार आदि अनेक प्राचीन राजवंशों द्वारा इस धर्म की उन्नति और ख्याति हुई, ऐसा लेखो से सिद्ध हो चुका है।

जेनधर्म की प्राचीनता के विषय में उपर्युक्त विद्वानों के अतिरिक्त पाश्चात्य विद्वानो में विलसन साहब*, पुराणविद् वेलफार्ड साहब × तथा डाक्टर जेम्स जार्ज ब्हूलर + और मि० कोलब्रुक — एनम् टामस आदि के भी भिन्न २ मत हैं। सब के मत युक्तियुक्त हैं, किंतु सब से उत्कृष्ट मत जनरल जे० आर० फारलग का है, वे कहते हैं कि ईसा से पूर्व के १५०० से ८०० वर्ष तक बल्कि अज्ञात समय से पश्चिमीय और उत्तरीय भारत में तूरानियों का जो द्राविड भी कहलाते थे और वृक्ष, सर्प तथा लिंग की पूजा किया करते थे, शासन सर्वोपरि था। उस

(*) Wilson's —Mackenzie collection and "Sanskrit Dictionary", 1st ed, Page xxxiv

× And Atles Indian, Page 160.

+ The Jains Page 22 23

— Miscellanous Essays, Vol 1, Page 380

समय भारतवर्ष में एक प्राचीन—सभ्य, दार्शनिक और विशेषता से नैतिक सदाचार एवम् कठिन तपस्या वाला धर्म अर्थात् जैनधर्म विद्यमान् था, जिस में से स्पष्टतया ब्राह्मण और बौद्धधर्म के प्रारम्भिक सन्यास भावों की उत्पत्ति हुई। आर्यों के गंगा या सरस्वती तक पहुँचने से भी बहुत समय पहिले जैन अपने २२ सन्तों अथवा तीर्थंकरों द्वारा जो ईसा से पूर्व की ८ वीं या ९ वीं शताब्दि के ऐतिहासिक २३ वें तीर्थकर श्री पार्श्वनाथ से पहिले हुए थे, शिक्षा पा चुके थे और श्री पार्श्वनाथ अपने से पहिले सब तीर्थङ्करों से जो दीर्घ २ कालान्तर से हुए थे, जानकारी रखते थे। उनको बहुत से ऐसे ग्रन्थ याद थे जो उस समय भी 'पूर्वों या पुराणों' अर्थात् प्राचीन के तौर पर प्रसिद्ध थे और जो युगान्तरों से विख्यात एवम् ज्ञानप्रस्थों द्वारा कण्ठस्थ चले आते थे। यह विशेषतया एक जैन सम्प्रदाय था, जिस को उनके समस्त तीर्थङ्करों और विशेष कर ईसा के पूर्व की छठी शताब्दि के २४ वें तीर्थङ्कर महावीर ने, जो सन ५९८—५२६ ईसा के पूर्व हुए हैं, नियमबद्ध रक्खा था। यह मत दूरस्थ बाकट्रिया (Baktria) और डेसिया (Decia) में जारी रहा, जैसा कि हम अपनी Study No 1 और Sacred Books of the East, Vol XXII और XLV में कर चुके हैं। (१)

हम को जहां तक प्रमाण मिले हैं, उन पर से हम जैन धर्म को आधुनिक नहीं कह सकते। विष्णु पुराण आदि कई पुराणों में जैनधर्म का उल्लेख है। जैनो के बहुत से

(1) Short studies in the Science of comparative religions Page 243 244

ग्रथोके पढने से मालूम हुआ है कि, शकराज के ६०५ वर्ष पहले (अर्थात् ईसा से ५२७ वर्ष पहिले) अन्तिम तीर्थङ्कर श्री महावीर स्वामी अर्थात् वर्धमान को निर्माण की प्राप्ति हुई थी।

हमारे विवेचन म यही आता है कि, जिस समय शाक्य-बुद्ध ने जन्म भी नहीं लिया था, उस से भी बहुत पहिले जैनधर्म प्रचलित था। प्राचीनतम जैनश्रुत म बौद्ध वा बुद्ध देव का प्रसग नहीं है, किंतु, ललितविस्तर आदि प्राचीनतम बौद्ध ग्रथो में 'निर्ग्रन्थ' नाम से जैनियो का उल्लेख मिलता है।

बौद्ध और जैनधर्म के किसी २ विषय म सौसादृश्य होने के कारण जैनधर्म को परिवर्ती नहीं कहा जा सकता। सादृश्य रहने से ही यदि परिवर्ती हो, तो इस युक्ति से बौद्ध-धर्म भी परिवर्ती सिद्ध होता ह। अत उपयुक्त प्रमाणो से यही प्रमाणित होता है कि जैनधर्म, बौद्धधम से पहिले का ह।

जैनग्रन्थो म प्राय एसा वर्णन देखने म आता ह कि जैनधर्म अनादि है और उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी काल के तृतीय, चतुर्थ कालो म २४ तीर्थङ्करो का आविर्भाव होकर धर्म का प्रकाश हुआ करता है। जैनधम का मत है कि, सृष्टि अनादि है, इस का कोई कर्त्ता—हर्त्ता नहीं है। जो कुछ परिवर्तन इस में होते हैं, वे स्वत काल द्रव्य के प्रभाव से हुआ करते हैं। जैनमतानुसार जम्बूद्वीप के मध्य भरतक्षेत्र और ऐरावत क्षेत्र में उन्नति और अवनतिरूप काल परिवर्तन हुआ करता है। ऐरावत क्षेत्र की बात जाने दीजिये क्योंकि उस से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है, वहा भरतक्षेत्र के समान ही तीर्थ-ङ्कर आदि का आविर्भाव हुआ करता है, अन्यान्य सभी विषय

भरतक्षेत्र के समान हैं। उन्नतिरूप काल को उत्सर्पिणी और अवनतिरूप काल को अवसर्पिणी कहते हैं। इन दोनो कालों की स्थिति १०।१० कोडा कोडी सागर परिमित है। २० कोडा कोडी सागर परिमित काल को कालचक्र कहते है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है जैनी लोग सृष्टिकर्ता ईश्वर को नहीं मानते, "जिन" या "अर्हत" ही को वे ईश्वर मानते है उन्हीं की स्तुति करते हैं। कई लोगो की सम्मति में महावीर स्वामी ही जैनधर्म के संस्थापक माने जाते हैं। किंतु, जैन विद्वानो के कथन के अनुसार ऐसा नहीं है। महावीर स्वामी से पहिले इसी अवसर्पिणी काल में २३ तीर्थङ्कर और होचुके है। जिन्होने समय २ पर इस जगती तल पर अवतीर्ण होकर संसार के निर्वाण और साधुओं की रक्षा के लिये सत्यधर्म का या यो कहिये कि युगधर्म का प्रचार किया था। हम आगे चल कर उन सब तीर्थङ्करो के नाम उद्धृत करेंगे और एक मानचित्र द्वारा उन का परिचय भी देंगे। सब से प्रथम तीर्थङ्कर का नाम "ऋषभदेव" था ये कब हुए, यह बताना कठिन है। पर, हां, जैनग्रन्थो के

---

* चार कोस गहरे और चार कोस चौडे एक कुए मे ७ दिन के नव जात शिशु के बाल शिरबन्द भरे जाय जो उस अंजन को भांति बारीक हों जिसका नेत्रों में अंजन करने से पीडा नहीं होती, फिर एक सौ वर्ष बीतने पर उस में से एक छोटे से छोटा अंश निकाला जाय। इस प्रकार वह सारा कुआ खाली होने में जितना समय लगता है उसे एकपल्य कहते हैं। ऐसे १० कोडा कोडी कुए खाली होने में जितना समय लगे उस को एक सागर कहते हैं।

अनुसार यह कहा जासकता है कि वे करोड़ो वर्ष जीवित रहे, इनकी कथा भागवत, आदि पुराणो मे भी यत्र तत्र आई है जैनग्रन्थो के अनुसार ऋषभदेव के पश्चात् के तीर्थङ्करो का जीवन काल क्रमश घटता जाता है, यहा तक कि तेईसवे तीर्थंकर "पार्श्वनाथ" का जीवन काल केवल एक सो वर्ष ही माना गया है। ऐसा भी कहा जाता है कि पार्श्वनाथ महावीर स्वामी के केवल दो सो पचास वर्ष पहिले निर्वाण पद को प्राप्त हुए। महावीर स्वामी २४ वे तीर्थङ्कर थे जिनका सक्षिप्त चरित्र जैन ग्रथो के आधार पर इस प्रकार है —

प्राचीन विदेह राजवश की राजधानी वेशाली (प्राचीन वैशाली आजकल के मुजफ्फरपुर जिले मे "वसाढ़" और "वखीरा" नाम के ग्राम है) ईसा के पाच सौ वर्ष पहिले भारतवर्ष का एक अत्यन्त समृद्धशाली नगर था। इस नगर मे एक प्रकार का प्रजा सत्तात्मक राज्य था। इस प्रजा तन्त्र राज्य के परिचालक "लिच्छवि" लोग थे जो 'राजा' कहलाते थे। वेशाली के बाहर पास ही "कुण्डग्राम" (वर्तमान वसु कुन्ड नाम का ग्राम) था, जहा सिद्धार्थ नामक एक धनाढ्य और उच्च वशोद्भव एक क्षत्रिय रहता था। वह "ज्ञातृक" नाम के क्षत्रियो का नायक था। उसकी रानी का नाम "त्रिशला" था। वह त्रिशला वशाली के राजा चेटक की बहिन थी। राजा चेटक की पुत्री का विवाह मगध देश के राजा बिम्बिसार से हुआ था। इस तरह सिद्धार्थ का घनिष्ठ सबन्ध मगध देश के राज घराने से भी था। सिद्धार्थ के एक कन्या और दो पुत्र हुए, जिनमे से छोटे पुत्र का नाम "वर्धमान" था। भविष्य में यही वर्धमान "महावीर" के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

वर्द्धमान के जन्म लेने पर राजा सिद्धार्थ के यहां बड़ा उत्सव मनाया गया। बड़े होने पर यथा समय जब उन्हें विद्याध्ययन के लिए पाठशाला में भेजा गया और अध्यापकजी ने स्वर व्यञ्जन शुरू कराते हुए पट्टी पर "क" लिख कर दिया तो इन्होंने "क" के साथ २ आगे के "ज्ञ" तक के सब व्यञ्जन लिख दिये। अध्यापक ने यह समझ कर कि कदाचित् इन्हें स्वर व्यञ्जन घर पर माता ने ही सिखा दिये हैं—१, २, ३, ४ आदि १० तक गिनती लिख कर उसे याद करने को दी। वर्द्धमान ने स्वत ही सारी एकावली और साथ पहाड़े भी लिख दिये। इसके पश्चात् इन्द्रदेव आये और बोले कि—"इन्हें क्या सिखाते हो, और क्या ज्ञान देते हो, ये तो स्वयं ज्ञाता हैं।" अस्तु।

समय होने पर यशोदा नामक एक राजकुमारी से उन का विवाह सम्बन्ध हुआ। इस विवाह से वर्द्धमान को एक कन्या उत्पन्न हुई, जो बाद को जमालि से विवाही गई। जब वर्द्धमान "जिन" या "अर्हत" की पदवी प्राप्त करके अपने धर्म के उत्तेजक बने, तब जमालि अपने श्वसुर का शिष्य हो गया। उसी के कारण, बाद का जैन धर्म में पहिली बार मतभेद खड़ा हुआ। वर्द्धमान ने अपने माता पिता की मृत्यु के बाद अपने ज्येष्ठ भ्राता नन्दिवर्द्धन की आज्ञा लेकर तीसवें वर्ष घर द्वार छोड़ कर, संसार से परित्राण प्राप्त करने के लिये भिक्षुओं का जीवन ग्रहण किया। भिक्षु-सम्प्रदाय का ग्रहण करने के बाद वर्द्धमान ने बड़ी ही उत्कट तपस्या करनी आरम्भ की, यहां तक कि तेरह महीने तक लगातार उन्होंने अपना वस्त्र

भी नहीं बदला। उस तपस्या के प्रभाव ने वर्द्धमान के जीवन में केवल यही परिणति नहीं की, वरन् उन का विश्व बन्धुत्व भाव भी इतना वर्द्धमान होगया कि सब प्रकार के कीड़े मकोड़े भी स्वच्छन्द होकर उनके बदन पर रेंगने लगे। इस के बाद वे स्पन्दन रहित होकर विचरण करने लगे। लगातार ध्यान करने, निरन्तर पवित्र जीवन विताने और खान पान सम्बन्धी कठिन से कठिन नियमों का पालन करने से उन्होंने अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली— वे गोसाईं बन गये जितेन्द्रिय होगये। वे विना किसी भय के बीहड़ वनों में रहते थे और यदा कदा एक स्थान से दूसरे स्थान को विचरा करते थे। कभी २ उन पर बड़े २ अत्याचार भी किये गये, जैसा कि प्राय संसार के हर एक ओर हर समय के महापुरुष पर किये जाते हैं, परन्तु उनका अपनी इन्द्रियों पर इतना आधिपत्य होगया था, कि हर प्रकार की बदला लेने की शक्ति रखते हुए भी उन्होंने धैर्य्य और शांति को कभी भी अपने हृदय प्रदेश से न जाने दिया। और न कभी अपने ऊपर अत्याचार करने वालों से किसी प्रकार का द्वेष ही किया।

एक बार जब वे राज-गृह के पास नालन्द में थे, तब गोशाल मखलि पुत्र के नाम से उन का साक्षात्कार हुआ। इस के बाद कुछ वर्षों तक उसके साथ महावीर स्वामी का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। छ वर्ष दोनों एक साथ रहते हुए बड़ी कठोर तपस्या करते रहे। पर इसके बाद अभिमान के आवेश में अनबन करके गोशाल, महावीर स्वामी से अलग होगया। अलग होकर उसने अपना एक भिन्न सम्प्रदाय



श्री संघके अग्रगण्य धर्मप्रेमी और उत्साही श्रीमान् सेठ

उदयचंदजी बोहरा रतलाम

परिचय-प्रकरण ३१

स्थापित किया और यह कहना प्रारम्भ किया कि 'मनतीर्थङ्कर या अहत् का पद प्राप्त कर लिया है। महावीर स्वामी के तीर्थङ्कर होनेके दो वर्ष पूर्व ही गोसाला ने तीर्थङ्कर होनेका अपना दावा संसार के सामने पेश कर दिया। गोसाला का स्थापित किया हुआ सम्प्रदाय "आजीविका" सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है गोसाला के सिद्धान्तो और विचारो के सम्बन्ध में केवल जैन और बौद्ध ग्रन्थो ही से पता लगता है। गोसाला या उसके अनुयायी (आजीविक लोग) अपने सिद्धान्तो और विचारों के सम्बन्ध में कोई ग्रन्थ नहीं छोड गए हैं। जैन ग्रन्थो में गोसाला के विषय में बड़े ही कठिन शब्दो का व्यवहार किया गया है। इससे पाठक जान सकेंगे कि जैनियो और आजीविकों में बहुत गहरा मत-भेद था और मत भेद के कारण स्वामी महावीर के प्रभाव को प्रारम्भ में बडा धक्का पहुंचा। गोसाला का प्रधान स्थान श्रावस्ती में एक कुम्हार की दुकान थी। यह दुकान हालहला नाम की स्त्री के अधिकार में थी। ऐसा मालूम पडता है कि गोसाला ने श्रावस्ती में बड़ी प्रसिद्धता प्राप्त कर ली थी।

बारह वर्ष तक कठोर तपस्या करने के बाद तेरहवे वर्ष महावीर स्वामी ने उस सर्वोच्च ज्ञान व कैवल्य पद को प्राप्त किया जो संसार जन्य दुःख और सुख के बन्धन से पूर्ण मोक्ष प्रदान करता है और जो पद अनिर्वचनीय आनन्द और "वसुधैव कुटुम्बकम" भाव से सदा परिपूरित वा लबालब रहता है। बस इसी समय से महावीर स्वामी 'जिन' या अर्हत् कहलाने लगे। इस समय उनकी आयु बयालीस वर्ष की थी तभी से उन्होंने अपने धर्म का प्रचार प्रारम्भ किया। आजकल उसी 'निग्रन्थ' (बन्धन [illegible] शब्द के स्थान पर 'जैन' (जिन

के शिष्य) शब्द का व्यवहार होता है महावीर स्वामी स्वयम् 'निर्ग्रन्थ' भिक्षु और 'ज्ञातृ' वंश के थे। इस से उनके विरोधी बौद्ध लोग उन्हें 'निर्ग्रन्थ' ज्ञातृ पुत्र' कहते थे। महावीर स्वामी ने अपने धर्म का प्रचार करते २ और दूसरे धर्म वालों को अपने धर्म में लाते हुए तीस वर्ष तक चारों ओर पर्यटन क्रिया विशेष करके वे मगध और अंग के राज्यों में अर्थात् उत्तरी और दक्षिणी बिहार प्रान्त में घूमते हुए वहां के सम्पूर्ण बड़े २ नगरों में गये। वे अधिकतर चम्पा, मिथिला, श्रावस्ती, वैशाली और राजगृह में रहते थे। मगध के राजा बिंबसार और अजातशत्रु (कुणिक) भी उनके परम भक्त शिष्य थे। जैन ग्रन्थों से पता लगता है कि महावीर स्वामी ने मगध के उच्च से उच्च समाज में बहुसंख्यक लोगों को अपने धर्म का अनुयायी बनाया था।

महावीरस्वामी का निर्वाण—महावीर स्वामी का देहावसान, पटना जिले के पावापुर नामक एक प्राचीन नगर में राजा हस्तीपाल के भवन में हुआ था जैन ग्रन्थों के अनुसार महावीर स्वामी का निर्वाण, काल विक्रमीय संवत् के चारसौ सत्तर वर्ष पूर्व अर्थात् ईसा के ५२७ वर्ष पूर्व माना जाता है डाक्टर हर्मन जेकोबी महाशय का कथन है कि भगवान् महावीर का निर्वाण काल ५२७ वर्ष मानने में भगवान् महावीर और बुद्ध समकालीन नहीं हो सकते और उनके काल में पचास वर्ष का अन्तर पड़ जाता है मगर हम इस स्थान पर सिद्ध कर दिखाते हैं कि इतना अन्तर पड़ने पर भी भगवान् महावीर और बुद्ध दोनो समकालीन हो सकते हैं इतना अवश्य है कि उनकी समकालीनता का समय अल्प सिद्ध होगा हम भगवान् महावीर का

निर्वाण ५२७ पूर्व मानते हैं और इससे यह स्पष्ट ही है कि उनका जन्म ५६६ ईस्वी पूर्व में हुआ था इधर बुद्ध का निर्वाण यदि हम ४८७ ईस्वी पूर्व मानते हैं तो निश्चय है कि उनका जन्म५६७ ईस्वी पूर्व में हुआ होगा बुद्ध ग्रन्थों से यह भी स्पष्ट मालूम होता है कि बुद्ध ने उन्तालीस वर्ष की अवस्था में उपदेश देना प्रारम्भ किया था। इस हिसाब से यदि हम देखें तो भी बुद्ध करीब एक वर्ष तक भगवान् महावीर के समकालीन रहे थे।

उपरोक्त विवेचन से यही मतलब निकलता है कि भगवान् महावीर का काल बहुत कुछ सोचने पर भी यही ठहरता है कि जो उनका प्रचलित सम्वत् कहता है और इस विषय का खुलासा काफी तौर पर अनेक ग्रन्थों में हो चुका है इस लिये इस जगह हम विशेष तौर पर न लिख कर यहीं समाप्त करना उचित समझते हैं।

महावीर स्वामी के पीछे जैन धर्म की रक्षा—महावीर स्वामी के पीछे ग्यारह अङ्ग और चौदह पूर्वों का ज्ञान सम्वत् २१३ विक्रमीय अर्थात् इस्वी सन् १५६ वर्ष पर्यन्त प्रचलित रहा कहते हैं, कि महावीर के पीछे ६२ वर्ष पर्यन्त गौतम (इन्द्र भूति) सुधर्म और जम्बू नामक तीन केवलिया ने जैनधर्म को सुरक्षित रक्खा। अनन्तर, इसा से २५१ वर्ष पूर्व पर्यन्त भद्रबाहु आदि पांच श्रुति केवलियों ने इस धर्म के तत्वों की संरक्षा की। उसके बाद ५७१ वर्ष अर्थात् इस्वी सन् २७० तक दश पूर्विया, ग्यारह अङ्गियों, चतुरङ्गियों और एकाङ्गियों ने जैन धर्म को अबाधित रखा।

(७) भद्रबाहु १७० वे वर्ष मे
(८) स्थूलीभद्र २१५ ,,
(९) महागिरी स्वामी २४६ ,,
(१०) सुहस्ती स्वामी २६५ ,,
(११) सुप्रति बुद्ध ३१९ ,,
(१२) इन्द्र दीन
(१३) आर्यदीन
(१४) वयर स्वामी } ३१३—५८४
(१५) वज्रसेन स्वामी ६२० ,,

में देवलोक गये। अब इनमे से १५ वें तक का संक्षिप्त परिचय यहा पर देते हैं —

(३) प्रभव स्वामी:—विन्ध्य पर्वत के पास जयपुर नाम नगर के राजा विन्ध्य के ये बेटे थे। राजा के साथ विरोध हो जाने से ये बाहर निकले थे, इनका गोत्र कात्यायन था। ३० वर्ष तक गृह वास कर इस वीर ने दीक्षा ग्रहण की थी। वीर के ७५ वे वर्ष में इसने अपना १०५ वर्ष का आयु पूर्ण किया (विक्रम के ३९५ वर्ष पहिले)

(४) स्वयम्भव स्वामी:—राजगृह के इस वात्स्यायन गोत्री महाशय ने २८ वर्ष गृहस्थाश्रम का पालन कर दीक्षा ली और ११ वर्ष पश्चात् युग प्रधान की पदवी प्राप्त की और ६२ वर्ष की उम्र मे ९८ वे वीर संवत् मे स्वर्गवास किया (वि० पू० ३७२ वे वर्ष मे)

(५) यशोभद्र स्वामी' —तु गोयायन गोत्र; २२ वर्ष गृह वास, १४ वर्ष व्रत पर्याय, ५० वर्ष युग साधन पदवी ८६ वर्ष की उम्र में स्वर्गवास (वीर सवत् १४८ और विक्रम पूर्व ३२२ वर्ष)

(६) सम्भूति विजय स्वामीः—माढर गोत्र, ४२ वर्ष गृह-वास, ४० वर्ष व्रत पर्याय, ८ वर्ष युग प्रधान पदवी, ९० वर्ष उम्र (वीर सवत् १५६ वि० पू० ३१४ मे) स्वर्गवास।

(७) भद्रबाहु स्वामी:—प्राचीन गोत्री ४६ वर्ष गृहवास, १७ वर्ष व्रतपर्याय, १४ वर्ष युग प्रधान पदवी, ७६ वर्ष की उम्र में (वीर सवत् १७० वि० पू० ३००) स्वर्गवास। इनके भाई का नाम वराह मिहिर था। इन्होंने जैन साधुपन छोड कर "वराह संहिता" बनाई। मुझे मिली हुई पुस्तकों में से एक में लिखा है कि —ये मुनि आखीरी चौदह पूर्वधारी थे। इनके समय में अकाल पड़ने से चतुर्विधसंघ को बड़ा सङ्कट हुआ। उस समय पाटली पुत्र शहर मे श्रावकों का संघ इकट्ठा हुआ और सूत्रों के अध्ययन आदि का निश्चय किया तो कुछ फेर फार जान पड़ा। ऐसा देख कर इन्होंने दो साधुओं को नेपाल देश से भद्रबाहु स्वामी को बुलाने के लिये भेजा। उन्होंने संयोगों का विचार कर १२ वर्ष बाद आने को कहा। बारह वर्ष का अकाल पूरा होजाने पर साधु इकट्ठे होकर सूत्रों को मिलाने लगे। ज्ञान का विच्छेद होता देख कर स्थूल भद्रादि ५ साधुओं को फिर भद्रबाहु स्वामी के पास नेपाल भेजे। चार साधु तो हिम्मत हार गये परन्तु

स्थूल भद्र ने १० पूर्व ज्ञान का अभ्यास किया। ग्यारहवें पूर्व का अभ्यास करते समय उन्हें विद्या आजमाने की इच्छा हुई। इससे जब भद्रबाहु स्वामी बाहर गये तब स्थूलभद्र सिंह का रूप कर उपाश्रय में बैठे। गुरू ने पीछे आकर यह सब देखा इस से उन्हें विचार आया कि अब ऐसा समय नहीं रहा कि विद्या को कायम रख सके या पचा सकें। और आगे पढ़ाना बंद कर दिया ऐसा करने पर भी जब श्री संघ का बड़ा ही आग्रह देखा तब बाकी के पूर्व का मूल मात्र पाठ सिखाया, अर्थ नहीं बताया। स्थूलभद्र के समय के बाद चार पूर्व और प्रथम संघेन, प्रथम संस्थान का विच्छेद होगया।

(८) स्थूलभद्र स्वामी:—पाटली पुत्र के गोतम गोत्री सगडाल के बेटे, ३० वर्ष गृह-वास, २४ वर्ष व्रत पर्याय ४५ वर्ष युग प्रधान पदवी, ६६ वर्ष की उम्र में (वीर सम्वत् २१५ वर्ष में विक्रम पूर्व २५५ में) स्वर्गवास।

(६) श्रीआर्य महागिरि स्वामी:— लापत्य गोत्र, ३० वर्ष गृह वास ४० वर्ष व्रत पर्याय, ३० वर्ष युग प्रधान पदवी, १०० वर्ष उम्र में (वीर सम्वत् २४५ वि० पू० २२५ में) स्वर्गवास। इस समय में आर्य महागिरि के शिष्य बहोश इन के शिष्य उमा स्वामी और इन के शिष्य श्यामाचार्य ने प्रज्ञापना (पन्नवणा) सूत्र की रचना की और वीर सम्वत् ३७६ में स्वर्गवास पाया।

(१०) बलि सिंह जी (११) सोवन स्वामी (१२) वीर स्वामी (१३) संपडिल स्वामी (१४) जीवधर स्वामी

(१५) आर्य समेद स्वामी (१६) नदील स्वामी (१७) नाग हस्ति स्वामी - (१८) रेवत स्वामी (१६) सिंह गणि जी (२०) थडिलाचार्य (२१) हेमवत स्वामी (२२) नागजित स्वामी (२३) गोविन्द स्वामी (२४) भूतदीन स्वामी (२५) छोगगणि जी (२६) दु सह गणि जी और (२७) देवर्धिगणि जी क्षमाश्रमण हुए।

वीर सवत् ६८० और विक्रम सवत् ५१० म देवर्धिगणि क्षमाश्रमणने महावीर स्वामी प्ररूपित तत्त्वोंको वल्लभीपुर नगर में पुस्तक रूप दिया। अर्थात् सूत्रों का लिपि बद्ध होना इन्हीं के समय से प्रारम्भ हुआ। इस विषय म यह प्रसिद्ध है कि एक बार देवर्धिगणि क्षमा श्रमण एक सू ठका गाठिया घेर कर लाये थे परन्तु उस को काम म लेना भूल गये। थोडी देर के बाद उन के ध्यान आया तो सोचने लगे कि अभी से मनुष्यों की स्मरण शक्ति कम होने लग गई तो आगे चल कर और भी कम हो जायगी और शास्त्र याद न रहेगे इससे अच्छा हो कि पुस्तक तेयार की जायें ताकि सब शास्त्र लिपि बद्ध हो जाय और इन म अभाव हो जाने की आशङ्का सदा के लिये मिट जाय। निदान इसी दूरदर्शिता से प्रेरित होकर शास्त्रों को लिपि बद्ध किया गया।

देवर्धिगणि -क्षमा श्रमण के पाट पर अनुक्रम से (२८) वीर भद्र (२६) शकर भद्र (३०) यशोभद्र (३१) वीर सेन (३२) वीरसग्राम (३३) जिनसेन (३४) हरिसेन (३५) जयसेन (३६) जगमाल (३७) देवऋषि (३८) भीमऋषि (३६) कर्म ऋषि (४०) राज ऋषि (४१) देव-

सेन (४२) शकरसेन (४३) लक्ष्मीलाभ (४४) राम-ऋषि (४५) पद्मसूरि (४६) हरि स्वामी (४७) कुशलदत्त (४८) उवनी ऋषि (४६) जयसेन (५०) विजय ऋषि (५१) देवसेन (५२) सूरसेन (५३) महासूरसेन (५४) महासेन (५५) गजसेन (५६) जयराज (५७) मिश्रसेन. (५८) विजयसेन (५६) शिवराज जी (६०) लालजी ऋषि (६१) ज्ञान जी ऋषि हुए। इन के पश्चात् (६२) भाण जी ऋषि (६३) रूप जी ऋषि (६४) जीव-राज जी ऋषि (६५) तेजराज जी ऋषि (६६) कुवर जी स्वामी (६७) हर्ष ऋषि जी (६८) गांधा जी स्वामी (६६) परशुराम जी स्वामी (७०) लोकपाल जी स्वामी (७१) महाराज जी स्वामी (७२) दौलतराम जी स्वामी (७३) लालचद जी स्वामी (७४) हुक्मीचद जी स्वामी (७५) शिवलाल जी स्वामी, (७६) उदयचद्र जी स्वामी- (७७) चौथमल जी स्वामी । फिर—

(७७) चौथमल जी स्वामी

पूज्य श्रीश्रीलालजी महराज	पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज

पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज की सम्प्रदाय में हीरा-लाल जी महाराज हुए जिन के शिष्य हमारे चरित नायक जी हैं। उपर्युक्त सब पूज्य मुनिवरों का जीवन वृत्त लिखा जाय

तो अनेक वृहद् ग्रन्थ बन सकते हैं इस कारण विस्तार भय से यहां केवल उनका नाम-निर्देश कर देना ही ठीक समझा गया। आगे ग्रन्थारम्भ से पूर्व पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज तथा हमारे चरित नायक जी के गुरुवर हीरालालजी महाराज का सूक्ष्म परिचय दे देना अनुपयुक्त न होगा —

पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज

आप का जन्म सम्वत् १९२६ में हुआ। आप ओसवाल वंश के जैनी हैं आप की माता का नाम नादी बाई और पिता का नाम अमर चन्द जी था। जब आप के पिता जी ने आप से दीक्षा के लिये अनुमति ली तो उत्तर में आप तुरन्त बोल उठे कि आपके साथ ही मैं भी दीक्षा अंगीकार करूंगा। पिताजी ने कहा कि तेरी छोटी अवस्था है और साधुपना बड़ा कठिन है। इस पर आपने उत्तर दिया कि कठिनाइ कायरों को हुआ करती है। आखिर आप व आपके पिता श्री ने सम्वत् १९३८ में पूज्य श्री उदयचन्द जी महाराज के सहवासी रतनचन्द जी महाराज के पास दीक्षा ली। तब से लेकर १८ वर्ष तक आप पूज्य श्री की सेवा में रहे और ज्ञानाभ्यास किया। थोड़े ही समय में अनेक शास्त्र कण्ठस्थ कर लिये। आपकी बुद्धि आरम्भ से ही बड़ी प्रखर है। साथ ही स्वभाव भी बड़ा सुशील। द्वेष तो आप से कोसों दूर भागता है। एक बार दर्शन करने वाला हमेशा आपका भक्त बन जाता है। आपने मालवा, मेवाड, मारवाड आदि प्रान्तों में विचरण कर जैन-जनता का बहुत उपकार किया है। अनेकों को त्याग प्रत्याख्या-कराया। मारवाड से विचरते हुए एक बार आप पंजाब

-प्रान्त में पधारे। वहा आपने स्यालकोट, अमृतशहर, रावल पिण्डी और जम्मू का भ्रमण किया। आपके साथ जो तपस्वी बालचन्द जी महाराज हैं वे हर समय आपको धार्मिक सहायता देते रहते हैं और पूज्य श्री भी तपस्वी जी की प्रत्येक विषय में अनुमति लिया करते हैं। तपस्वी जी एकान्तर करते हैं। पालने * म सब प्रकार का मीठा व घृत तेल में तली हुई वस्तु को सदा के लिये छोड रखा है। पांच द्रव्य (जल, रोटी, रधोन थूली आदि, साग, दुध) से अधिक त्याग हैं। बीच २ में बेले, तेले, चोले पचोले किया ही करते हैं। तपस्वी जी की परोपकार में बडी दीर्घ दृष्टि है। जब आप जम्मू (काश्मीर) में विराजते थे तो वहा ८००० गो को अभयदान कराया था। इस बात की और तपस्वी जी की तपस्या की स्वयम् काश्मीर महाराजा सर प्रतापसिंह जी साहब समय २ पर प्रशंसा करते रहते हैं। अस्तु वहा तपस्वी जी चलने में अशक्त होगये थे। ८ वर्ष तक वहीं विराजे। इस अवसर पर श्री मन्नालाल जी महाराज को सम्वत् १९७५ वैशाख शुक्ला १० के दिन आचार्य्य पद पर आरूढ किये गये और साथ ही मुनियों की ओर से शास्त्र विशारद की उपाधि भी दीगई। आपका ज्ञान दर्शन व चारित्र प्रशंसनीय एवम् अनुकरणीय है। जिस समय आप उपदेश देते हैं (उदाहरणार्थ, भगवती जी पन्नवणा जी स्थानाङ्ग जी आदि का मूल पृति पादित करते हैं) तब लोगों को यही मालूम होता है कि आपको सर्वशास्त्र कण्ठस्थ हैं। और वस्तुतः है भी कुछ ऐसा ही।

---

* तपस्या की प्रतिज्ञा करने पर उसकी समाप्ति पर जो भोजन किया जाय उसे पारण या पारना कहते हैं।

पेर में कुछ आराम होजाने पर जम्बू से धीरे धीरे विहार कर बीच २ में उपदेश देते और चतुर्मास करते हुए आप रतलाम पधारे। सो अभी तक वहीं हैं। आपकी जितनी प्रशंसा की जाय थोडी है आपके विषय में मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज व बालकृष्णजी ने संस्कृत में कुछ रचना की है जो इस प्रकार है —

अथ पट्टावलिरुच्यते

शार्दूल विक्रीडित वृत्तम्

सज्ज्ञानं निजतत्त्वबोधनिचयं सार्वज्ञमात्मप्रदं
सद्विर्वेद्यमलं स्वकीयसुधिया सन्दर्शनेनाङ्कितम्
साधूनां चरितैरलङ्कृतमुखो विज्ञाय निर्ज्ञीभवन्
पूज्याग्रिः श्रमणोत्तमो विजयतां हुक्मीन्दुनामा मुनिः॥१॥

साधुओं के चरित्र कथन से मुख को भूषित करने वाले, तत्त्व भूत सम्यक्त्व को बढाने वाले मुक्तिदायक सत्यन्दर्शन से चिन्हित सज्जनों के जानने योग्य जिनेश्वरों के शुद्ध ज्ञान को अपनी शुद्ध बुद्धि से जान कर निज कहलाने वाले पूज्य पाद साधु शिरोमणि श्री हुक्मीचन्द जी महाराज की विजय हो॥ १ ॥

श्रीरामगोपालसुतेन चारु-शार्दूलवृत्तेन विनिर्मितानि ।
श्रीबालकृष्णेन हि शास्त्रिणा वै पद्यानि सन्मोदकराणि सन्तु ॥

श्रीरामगोपाल जी के पुत्र बालकृष्ण शास्त्री के शार्दूल विक्रीडित छन्द में रचे हुये श्लोक सज्जनों के आनन्ददायक हों।

मुनिसद्गुणवर्णनम्

शार्दूलविक्रीडितम्

योगीशव्रतिहुक्मचन्द्र-विमलोत्पत्तसम्प्रदायाम्बर-
सञ्जातिकिरणार्करूप उदयं बिभ्रद्धि पूज्योऽनिशम्।
अर्हच्छास्त्रविशारदोऽमलमतिः सिद्धान्ततत्त्वे पटु-
र्मुन्नालालमुनिः सदा विजयते सज्जनभाग्याङ्कुरः ॥ १ ॥

योगीन्द्र व्रत धारी हुक्मीचन्द जी महाराज के निर्मल सम्प्रदाय रूप आकाश चमकीली किरणों वाले सूर्य रूप निरन्तर उदय पाते हुए, जैनागम में निपुण, निर्मल बुद्धि, सिद्धान्त के तत्वों में पारगत, जैन लोगों के भाग्य के अङ्कुर पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज की सदा जय हो ॥ १ ॥

१ -मुन्नालाल -मुदा हर्षेण धर्मध्यानानन्देन इत्यर्थः तेन युक्त ना पुरुष इति मुन्ना तथा धर्मोपदेशेन लालयति प्रमोदयतीति लालः । मुन्नालाल । अर्थात धर्म ध्यान के आनन्द से युक्त होकर आगमोपदेश द्वारा लोगों को प्रसन्न करने वाले



श्रीमान हिज हाईनेस महाराजा सर मल्हारराव बाबासाहेब
पँवार के सी एस आई देवास २ (मालवा) सेंट्रल इन्डीया
परिचय–प्रकरण ३२ परिशिष्ट प्र० ३

यो जैनागमपार्गमार्गगमथिः सदेहिना देहिना,
शङ्कादाः सुसमाहिति प्रकुरुते सम्यङ्प्रनस्तोषिणीम् ।
शुद्धज्ञानसुवर्णवर्णनकष तं शान्तचित्त परं,
मन्नालाल मुनि मनोविषयिणं कुर्वे च कुर्वे नमः ॥२॥

जो जैनागमों के मार्ग के पथिक (यात्री) थाकर सदेह में पड़े हुए लोगों का अच्छी तरह सतोषजनक समाधान करते हैं, शुद्ध ज्ञान रूपी सुवर्ण के परखने की कसौटी परम शान्त चित्त उन पूज्य श्री मन्नालाल जी महाराज को मैं स्मरण करता हूँ और नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

तपोराशिर्जैनागममननविचारणा—मुखैः,
सुकार्यैः कालं विलसति नयन् योगनिरतः ।
मुनिर्मुन्नालालो ललिततरभालो मृदुवचाः,
स तीर्थेश ध्यानामृतरसरसी राजतुतराम् ॥३ ॥

जो तपोनिधि जैन सिद्धान्तों का मनन और विचारण आदि सुकार्यों से और योगनिष्ठ होकर आप अपना समय बिताते हैं सुन्दर ललाट वाले, कोमल वचन वाले और तीर्थंकरों के ध्यान रूप अमृत-रस के रसिक वे पूज्य मुनि श्री मुन्नालाल जी महाराज खूब यश पावें ।

---

२ मन्नालाल —मान्त्रि त मत्ता भवन्तीति मन्ः कामक्रोधादयः तान् न आलालयति प्रमोदयति, परास्तीकरोतीत्यर्थ । मन्नालाल । अर्थात् कामक्रोधादि को नहीं बढ़ने देने वाले ।

सदा यो व्याख्यानामृतरसमुपानाद्विनयतो,
नताना श्राद्धाना मन उपगताना प्रमदयन् ।
स्वभक्ताना काम्य सलिलधरसाम्य प्रकुरुते,
मुनिर्मुन्नालालो जयति स समालोचन पर: ॥४॥

जो आये हुए विनय से नम्र अपने भक्त श्रावकों के मन को व्याख्यान रूपी अमृत पिलाकर प्रसन्न करते हुए मनो वाञ्छित मेघ की बराबरी करते हैं । वे तत्त्वों की परीक्षा करने वाले पूज्य श्री मन्नालालजी महाराज की सदैव जय हो ॥४॥

देष्णोर्ज्ञानधन सदा जलदवल्लोके गुणोद्द्योतकं,
वीचीराशिविशोभितेन रविणा नो तुल्यता ते मुने ? ।
लाभो नोऽधिकमाप्यतेऽत्र निबुधैर्दिनान्धकारापह,
लब्धमज्ञानपरैरहर्निशमहो नाराऽधकारापह ॥५॥

हे पूज्य मुनि महाराज ! गुणकारी मेघ के सदृश ज्ञान रूपी धन को देने वाले आपकी बराबरी प्रकाश राशि से चमकते हुए सूरज से नहीं हो सकती । क्योंकि विद्वज्जन केवल सूरज से दैनिक अन्धकार मिटाने के सिवा और अधिक लाभ नहीं देख सकते । पर आप ज्ञान-रूपी किरणों से मनुष्यों के हृदय स्थित अज्ञान रूपी अन्धकार को मिटाके रात दिन प्रकाश करने वाले हैं ॥ ५ ॥

मुग्धाना जगतीह मोददलने ते वाक् सदाऽसीतते,
निर्त्तेऽस्मात् समुदो पदाम्बुजनखाभा स्वा गुरोर्वन्दने ।

---

१ असीयते—असि खड्ग इवाचरतीति असीयते ।

वन्द्य लोकजनैः सुरैश्च दिवि तैः कीर्तिर्मुदा गीयते,
देय मोक्षसुख जरादिरहित भूयोऽपि वन्दे स्वयम् ॥६॥

हे पूज्य मुनि महाराज ! इस जगत में आपकी वाणी मोही लोगो के मोह काटने में तलवार के समान है । इसी से प्रसन्न हुए गुरु जी महाराज को वन्दना करने के समय उन के चरण-कमलों के नखों की काति आप पर पडती है । इसी बात से यहा के लोग और स्वर्ग में देवता आनन्द से आप की कीर्ति को गाते हैं । अत मैं भी आपको बारम्बार वन्दना कर आपसे यही याचना करता हू कि जन्म मरण आदि दु ख रहित मोक्ष सुख को देवें ॥६॥

प्रसिद्धवक्तृ पण्डित मुनि श्रीचतुर्थमल्लजिन्महाराजः-
शिष्येन साहित्यप्रेमि पण्डित मुनिना प्रियचन्द्रेण निर्मितानि पद्यानि

प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमल जी महाराज के शिष्य साहित्य प्रेमी पण्डित मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज ने उपरोक्त पद्यों की रचना की ।

मुनि श्री हीरालाल जी महाराज

आप हमारे चरित नायक जी के गुरू हैं । आप का जन्म इन्दौर स्टेट के रामपुरे जिले में कभाडा गाव में सम्वत् १६०६ म हुआ । आप के पिता श्री का नाम रतनचन्द जी था । वे ओस वश के जैनी थे । आप की माता श्रीमती राजा बाई तथा एक ज्येष्ठ भ्राता जवाहिरलाल जी थे । उनका

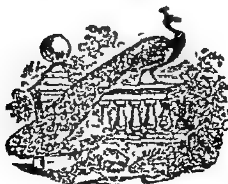
जन्म सम्वत् १६०३ में हुआ था और एक छोटे भ्राता थे जिनका जन्म सम्वत १६१२ में हुआ था। कुछ दिन के पश्चात् प्रातः स्मरणीय पूज्य श्री हुकमीचन्द जी महाराज की सम्प्रदाय के राजमल जी महाराज का उस कफाडां ग्राम में पदार्पण हुआ। उनका वैराग्योत्पादक उपदेश सुनकर रत्नचन्द जी ने स० १६१४ में अपने तीन पुत्रों व पत्नी को त्याग कर दीक्षा ग्रहण की। तदनुसार कुछ समय पश्चात् सांसारिक कुटुम्ब को प्रतिबोधित करने के लिये सम्वत् १६२० में कफाड़ें पधारे और उपदेश दिया। तब तीनों ही पुत्र और मातेश्वरी ने मुनि महाराज की अत्यन्त मधुर वाणी सुनकर वैराग्य भाव ग्रहण किया और इस जगत को निःसार जानकर माता जी तीनों पुत्रों को साथ लेकर पूज्य श्री शिवलाल जी महाराज व रत्नचन्द जी महाराज के पास आकर कहने लगीं कि हे पूज्य मुनियो ! ये मेरे तीनों ही लाल मुझे अतीव प्रिय हैं। पर आपका उपदेश सुनकर मेरी अटल सुखकी प्राप्तिके लिए संयम लेनेकी इच्छा है। अतः आप अनुग्रह कर मुझे और साथही इन तीनों को दीक्षा दीजिये इसमें मेरी आज्ञा है। अत: आज्ञा होनेके बाद पूज्य श्री ने तीनोंको दीक्षा ग्रहण कराई। यद्यपि बालकों की अवस्था कम थी तथापि उन्होंने प्रसन्नता और आनन्द पूर्वक दीक्षा ली। पूज्य जी ने ज्येष्ठ पुत्र जवाहिरलाल जी को उनके पिता श्री रत्नचन्द जी महाराज का शिष्य बनाया तीनों शिष्यों ने समय पाकर अपने गुरू श्री रत्नचन्द जी महाराज से विनय पूर्वक ज्ञानाभ्यास किया। थोड़े ही समय में स्वशास्त्र, परशास्त्र में निपुण होगये। जो कोई भी प्रश्न करता उसका सन्तोषजनक उत्तर देते। हमारे चरित नायक जी के दादा गुरु का इतना उच्च ज्ञान था कि (वेद कल्प उत्तराध्ययन)

दशवैकालिक आदि सूत्रो का अर्थ चाहे जिस समय पूछा जावे उसे वे जबानी समझा देते थे। प्राचीन इतिहासो की कई मौके की बातें उन्हें याद थीं। आप की आत्मा राग द्वेष कदाग्रह, मत्सरत्व, ईर्षा भाव आदि से दूर रहती थी। आप क्षमा वैराग्य, धैर्य्य, विनय आदि की साक्षात मूर्ति थे। आप की सेवा में राजा, महाराजा, दीवान, सेठ चाहे सो आवे परन्तु, उनसे आप 'दयापालो' इतना ही उच्चारण किया करते आप के हाथों में जपनी (ईश्वर स्मरण माला) तो सदैव रहा करती थी। आप बडे आत्म ज्ञानी और शान्त मुद्रा वाले थे। उन्हीं के शिष्य कविवर सरल स्वभावी मुनि श्री हीरालालजी महाराज जो हमारे चरित्रनायक जी के गुरूथे, आप के शिष्य समुदाय में चरित्रनायकके सिवा और भी निम्नोक्त शिष्य थे थे। मुनि श्री शाकरचन्दजी महाराज पण्डित मुनि श्री हजारीमल जी महाराज मुनि श्री गुलाबचन्द जी महाराज तपस्वी मुनि श्री हजारीमल जी महाराजमुनि श्री शोभालाल जी महाराज मुनि श्री मयाचन्दजी महाराज मुनि श्री मूलचन्दजी महाराज उक्त शिष्यसमुदाय मे पण्डित मुनि श्री हजारीमल जी महाराज के सुशिष्य और चरित्रनायक के गुरुवर के पौत्र शिष्य व्याख्यी मुनि श्री नाथूलालजी महाराज हैं। अस्तु चरित्रनायक के गुरुवर्य बडे ही सरल स्वभावी और आशुकवि थे। उनकी कविता अबतक जनता को उपदेश दे रही है। उनका उपदेश बडा मनोहर, मधुर और प्रभावोत्पादक होता था। काल की गति विचित्र है। आप सम्वत् १६७२ में देवलोक होगये।

आप के छोटे भ्राता मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज विद्यमान हैं। आप भी बडे ही विद्वान् हैं आप की उपदेश पद्धति

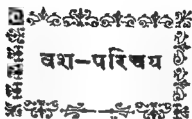
अतीव प्रशंसनीय है। आप के शिष्य मुनि श्री खूबचन्द जी महाराज बडे शान्त स्वभावी प्रति समय स्वाध्याय करते हैं आप के बनाये सैंकडो स्तवन लावनियें हैं। उनमें से कुछ प्रकाशित हो चुकी हैं।

हमारे चरित नायक जी के दादा गुरू श्री जवाहरलाल जी महाराज के शिष्य तपस्वी माणिकचन्द जी महाराज थे उनके शिष्य मुनि श्री देवीलाल जी महाराज हैं। आप बडे विद्वान् और शास्त्रवेत्ता हैं। आप का उपदेश भी प्रभावोत्पादक होता है आप ने जनोपयोगी कई ग्रन्थों की रचना की हैं जिनमें से कुछ प्रकाशित हुई और कुछ होंगी। आप के बनाये हुए अनेक मधुर स्तवन आदि भी हैं। आप का जीवन चरित्र (मास्टर विश्वम्भर नाथ जी द्वारा) दिल्ली से प्रकाशित हुआ है।



॥ वन्दे श्रीजिनवरम् ॥

प्रकरण पहला ।



हमारे चरित नायक के स्वर्गीय दादा साहब श्रीयुत ओंकार जी ओसवंश के चोरडिया जैनी थे। आप दाऊ (ग्वालियर) के ठाकुर साहब के यहां कामदार के पद पर नियुक्त थे। दैव-वशात् एक दिन ठाकुर साहब और उनमें कुछ मन-मुटाव हो गया, जिसके कारण वे मध्य भारतान्तर्गत् बी० बी० एण्ड सी० आई० रेल्वे के किनारे, नीमच गांव में जा बसे। वहां उनके पुत्र रत्न गंगाराम जी का शुभ जन्म हुआ। जिन का विवाह श्रीमती केशरीबाई के साथ हुआ। इन के घर गृहस्थी की स्थिति उस समय बडी ही साधारण थी। श्रीयुत गंगारामजी विशेष कर घीका व्यापार किया करते थे। और उसी पर आपके समस्त सांसारिक जीवन का दारोमदार था। इस के अतिरिक्त अपने गार्हस्थ्य जीवन को सुख शान्ति पूर्वक चलाने के लिए आपके पास उपर्युक्त साधन के अतिरिक्त पैतृक-सम्पत्ति में थोडी जमीन, कुछ आम के पेड और एक कुआ भी था। ये साधारण गृहस्थ, परन्तु नगर में मान की दृष्टि से देखे जाते थे। जैसे गंगाराम जी एक भले मानस थे,

उसी प्रकार श्रीमती केशराबाई भी परम विदुषी थीं। श्री चौथमल जी महाराज इन्हीं गंगाराम जी और श्रीमती केशरा बाई के सुपुत्र हैं। आपके दो भाई और तीन बहिनें थीं। भाइयों में आपसे बड़े का नाम कालूराम जी और छोटे का फतहचन्द जी तथा बहिनों के नाम नवलबाई, सुन्दरबाई थे। नवलबाई बड़ी थी जो मौजूद नहीं है। और छोटी सुन्दरबाई मौजूद है। तथा सब से बड़ी और थीं, जो असमय में ही देवलोक हो गई।

प्रकरण २ रा

गर्भाधान में माता के विचार

और उनका

गर्भस्थित बालक पर प्रभाव।

गतामर्षो मर्षेण च जनित हर्षेण सहितः।
समायो निर्मायो विषदसमायोग रचना
स्वमुक्त्यै यस्तृष्णा दधदपिच तृष्णा परिजहृ—
चतुर्थ सन्मानो मुनिरयमानो विजयते॥

एक रात्रि को ब्रह्म मुहूर्त में हमारे चरित नायक जी की माता [सौभाग्यवती केशरबाई धर्मपत्नी—श्रीयुत गंगाराम जी] को जब कि वे कुछ २ निद्रित और कुछ २ जागृतावस्था में सोती हुई थीं, आम का एक शुभ स्वप्न हुआ। स्वप्न दर्शन होते ही मातेश्वरी सजग होकर धर्म स्मरण करने लगीं

प्यारे पाठकों! गर्भाधान की अवस्था में स्वप्न दर्शन प्रायः सभी माताओं को होता है, पर अन्तर केवल इतना ही है, कि यदि गर्भस्थित बालक सदाचारी, धर्मनिष्ठ, सत्यव्रत और जिज्ञासु होने वाला हो, तो शुभ स्वप्न दर्शन होता है। और इसके विपरीत यदि गर्भस्थित बालक—

अत्यन्त कोपा च कुटिला च वाणी दरिद्रता बन्धु-
जनश्च वैरम्।
नीचः प्रसंग पर दार सेवा नरकस्य चिन्हम् वसन्ति देहे"॥

—चाणक्य नीति।

इस कथन को चरितार्थ करनेवाला होता है, तो अवश्य ही अशुभ स्वप्न दर्शन होता है। ऐसे अवसर पर जब कि शुभ स्वप्न दर्शन होता है, प्रत्येक माता को स्मरण रखना चाहिए, कि वह शुभ स्वप्न के पश्चात् रात्रि के अवशेष भाग में निद्रा न ले, अन्यथा उस शुभ स्वप्न का फल नष्ट हो जाता है स्वप्नके शुभाशुभ फलोंको जानने वाले विद्वानों की धारणा है, कि अशुभ स्वप्न दर्शन पर निद्रा लेने से उसके अशुभ फल में न्यूनता हो जाती है। और शुभ स्वप्न दर्शन पर उसके फल में कमी हो जाती है। हमारे चरित नायक जी की माता को आम का स्वप्नाभास हुआ था। यह उन्होंने भी श्रीमुख से स्वीकार किया था, कि "जिस दिन चोथमल मेरे गर्भ में आया था, उस दिन ब्राह्म-मुहूर्त में मुझे आम का स्वप्न दर्शन हुआ था"। अस्तु। हम ऊपर कह आये हैं कि आम का स्वप्न दर्शन होते ही मातेश्वरी केशरांबाई सजग होकर उठ बैठीं और

परमात्मा का चिन्तन करने लगीं। तत्पश्चात् आप शौच, स्नान और नैमित्तिक कार्यों से निवृत्त हो गृहोचित कार्यों में लगीं। इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत होने पर, जब मासिक अवर्तन के समय रजो दर्शन न हुआ, तब आप का विश्वास होगया कि "मैं गर्भवती हूँ"। उसी दिन से आप ऐसी बातों पर ध्यान रखना अपना ध्येय समझने लगीं, जिनका जानना और पालन करना प्रत्येक स्त्री का कर्तव्य है।

माता का गर्भाधान प्रकृति देवी की एक अद्भुत और अलौकिक प्रयोग शाला है। इस प्रयोग शाला में माता पिता के जिस २ प्रकार के चित्त और चरित्र, आचार और विचार, सौजन्यता और दुष्टता, रहन और सहन, आहार और विहार, विद्या और बुद्धि, वीरता और कायरता, दानशीलता और कदर्यता, परहितपरता और स्वार्थपरता, आदि का रासायनिक प्रयोग होता है। बस, उसीके ठीक अनुरूप सन्तान रसायन की उत्पत्ति होती है। या यो कहिये कि माता के इस गर्भाशयरूपी प्रयोगशाला में बहु मूल्य तथा अमूल्य और सस्ते तथा निकम्मे हर तरह के मनुष्य रत्न ठीक उसी तरह तैयार होते हैं, जिस प्रकार कि रसायनशाला में भिन्न २ रसो के मिश्रण और प्रयोग से रसमात्राएं। जिस प्रकार रसायनशाला में रासायनिक की बुद्धि, यन्त्रों की उत्तमता और पदार्थों के उचित अंश के मिश्रण पर औषधियों की उपयोगिता में अधिकता या न्यूनता होती है, काच के कारखाने में काच के मावे की जाति के अनुसार जिस प्रकार न्यूनाधिक उज्ज्वल, निर्मल और पारदर्शक काच की वस्तुएँ बनती हैं, कारीगर के ज्ञान और मशीन की उत्तमता के अनुसार जिस प्रकार सुन्दर या टिकाऊ या भद्दे काम

चलाऊ तथा कमजोर कपड़े बनते हैं, जिस प्रकार कि मिट्टी का व्यवहार कुम्हार करता है, चाक के ऊपर घुमा फिराकर जैसा २ उसे आकार प्रकार देता है, जिस सावधानी और चतुरता से उन्हें पकाता है, वैसे ही उत्तम या निकम्मे पात्र तैयार होते हैं, भट्टी में से निकलने के पश्चात्, पात्रो पर फिर चाहे जेसा रंग चढ़ाया जाय, चाहे जेसी उनपर पालिश की जाय या कैसी ही चित्रकारी और पच्चीकारी उनपर की जाय, परन्तु स्मरण रहे कि यों करने से उनकी सुन्दरता में कुछ घटा बढ़ी अवश्य हो सकती है। परन्तु, पात्रो का वास्तविक मूल्य तो उनके निर्माण समय में लाई हुई मृत्तिका से साचे में चाक पर दिये हुए आकार प्रकार से और भट्टी में चतुरता पूर्वक पकाने से ही आका जाता है। उसी प्रकार बालक रूपी पुतला भी माताके गर्भ रुपी साचेमें ढलकर तैयार होता है। और जेसे २ उत्तम या अधम, मध्यम या निकृष्ट सात्विक, राजसिक और तामसिक पदार्थों का रासायनिक प्रयोग, गर्भाधान के समय ही से, इस महान रसशाला में किया जाता है, वैसा ही उत्तम या अधम, मध्यम या निकृष्ट सन्तान रूपी पुतला तैयार होता है। यदि चतुर पारखी और रासायनिक माता पिता ने हीरा बनाने का मसाला इकट्ठा करके, उसे उचित समय में और निश्चित रीति से, सावधानी के साथ मिलाया, तो वह बहु मूल्य अथवा अमूल्य हीरा बनता है। यदि नीलम के कुछ नीचे मसाले से काम लिया तो नीलम तैयार होता है। अथवा यदि कम कीमत के काच बनाने के पदार्थों का सम्मिश्रण किया तो काच ही प्राप्त होता है। राम और रावण कृष्ण और कंस, युधिष्ठिर और दुर्योधन, पृथ्वीराज और जयचन्द आदि उत्तम और अधम मनुष्यों

की रचना माता के इसी गर्भाशय रूपी अलौकिक रसशाला में हुई, और होती है, तथा होती रहेगी। अन्तर केवल रासायनिक पदार्थों की उत्तमता और अधमता का रहता आया है। बस, जैसे ही पदार्थों का सम्मिश्रण हुआ, प्राकृतिक प्रयोग शाला में वैसी ही रसायन भी बन कर बाहर निकली। महावीर, ऋषभ और पारस से महा पुरुषों तथा रावण, कंस और हिरण्य कशिपु से राक्षसों का पैदा करना, अब भी हमारे ही हाथ में है—हमारे ही आधीन है। जैसे ही मसालों का प्रयोग किया जायगा। वैसी ही दयालु और क्रूर, दानी और कृपण, वीर और कायर, परोपकारी और स्वार्थी सन्तति माता के प्रयोग शाला से तैय्यार होकर बाहर निकलेगी। प्रकृति देवी का यह अटल और निर्विवाद नियम है। अस्तु ! हर एक उत्तम माता का परम कर्त्तव्य और एक मात्र धर्म है, कि वह अपनी इच्छानुसार और उत्तम सन्तान उत्पन्न करने के लिये इन बातों पर ध्यान रक्खें —

१ प्राकृतिक प्रयोगशाला गर्भाशय का रहस्य।

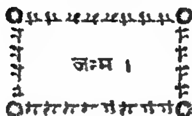
२ वंश परम्परा से उतरने वाले गुण।

३ पुरुष तथा स्त्री की मन शक्ति और प्रेम का प्रभाव।

४ सन्तान के पालन पोषण तथा शिक्षण का सुप्रबन्ध।

इस प्रकार के अनेक सद्विचार हमारे चरित नायक की माता भी नित्य प्रति किया करती थीं। जिस से गर्भस्थ सन्तति के ऊपर सम्पूर्ण स्वर्गीय गुणों का पूरा पूरा रङ्ग बैठ जाय, जिस से उसकी गर्भस्थ सन्तति मनुष्य के रूप में सच्ची

प्रकरण २ रा -

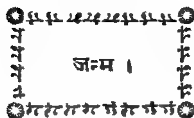


श्री मुनि महाराज का शुभ जन्म कार्तिक शुक्ला १३ रविवार सम्वत् १६३४ विक्रमीय के दिन ५० घड़ी १३ पल समय व्यतीत होने पर अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण में ६० घड़ी के पश्चात् व्यतीत योग में सूर्य ७—८ हुए घड़ी ३५—६ के शुभ योग में दैवी गुण और सिंह वर्ग के साथ मध्य भारतान्तर्गत 'नीमच' नगर में हुआ था। दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में, श्री कृष्ण चन्द्र के कथनानुसार निम्नलिखित छब्बीस धर्म होते हैं।

"अभय सत्त्वसशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दान दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यम् क्रोधस्त्यागः शान्तिपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्व मार्दव ह्रीरचापलम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृति शौचम द्रोहो नाति मानिता ।
भवन्ति सम्पद दैवी मभिजातस्य भारत ॥३॥

[श्रीमद्भगवद्गीता अ० १६ श्लोक १,२,३

प्रकरण ३ रा -

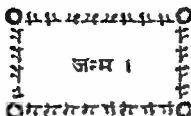


श्री मुनि महाराज का शुभ जन्म कार्तिक शुक्ला १३ रविवार सम्वत् १६३४ विक्रमीय के दिन ५० घडी १३ पल समय व्यतीत होने पर अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण में ६० घडी के पश्चात् व्यतीत योग में सूर्य ७—५ इष्ट घडी ३५—६ के शुभ योग में दैवी गुण और सिंह वर्ग के साथ मध्य भारतान्तर्गत 'नीमच' नगर में हुआ था। दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में, श्री कृष्ण चन्द्र के कथनानुसार निम्नलिखित छब्बीस धर्म होते हैं।

"अभय सत्त्वसशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दान दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यम् क्रोधस्त्यागः शान्तिपेशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्व मार्दव ह्रीरचापलम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृति शौचम द्रोहो नाति मानिता ।
भवन्ति सम्पद दैवी मभिजातस्य भारत ॥३॥

[श्रीमद्भगवद्गीता अ० १६ श्लोक १,२,३

प्रकरण ३ रा -

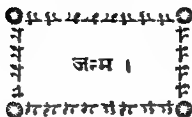


श्री मुनि महाराज का शुभ जन्म कार्तिक शुक्ला १३ रविवार सम्वत् १६३४ विक्रमीय के दिन ५० घड़ी १३ पल समय व्यतीत होने पर अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण में ६० घड़ी के पश्चात् व्यतीत योग में सूर्य ७—० हुए घड़ी ३५—६ के शुभ योग में दैवी गुण और सिंह वर्ग के साथ मध्य भारतान्तर्गत 'नीमच' नगर में हुआ था। दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में, श्री कृष्ण चन्द्र के कथनानुसार निम्नलिखित छब्बीस धर्म होते हैं।

"अभय सत्त्वसशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दान दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यम् क्रोधस्त्यागः शान्तिपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्व मार्दव ह्रीरचापलम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृति शौचम द्रोहो नाति मानिता ।
भवन्ति सम्पद दैवी मभिजातस्य भारत ॥३॥

[श्रीमद्भगवद्गीता अ० १६ श्लोक १,२,३

प्रकरण ३ रा -



श्री मुनि महाराज का शुभ जन्म कार्तिक शुक्ला १३ रविवार सम्वत् १६३४ विक्रमीय के दिन ५० घडी १३ पल समय व्यतीत होने पर अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण में ६० घडी के पश्चात् व्यतीत योग में सूर्य ७—५ इष्ट घडी ३५—६ के शुभ योग में दैवी गुण और सिंह वर्ग के साथ मध्य भारतान्तर्गत 'नीमच' नगर में हुआ था। दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में, श्री कृष्ण चन्द्र के कथनानुसार निम्नलिखित छब्बीस धर्म होते हैं।

"अभय सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दान दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यम् क्रोधस्त्यागः शान्तिपशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्व मार्दव ह्रीरचापलम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृति शौचम द्रोहो नाति मानिता ।
भवन्ति सम्पद दैवी मभिजातस्य भारत ॥३॥

[श्रीमद्भगवद्गीता अ० १६ श्लोक १,२,३

की रचना माता के इसी गर्भाशय रूपी अलौकिक रसशाला में हुई, और होती है, तथा होती रहेगी। अन्तर केवल रासायनिक पदार्थों की उत्तमता और अधमता का रहता आया है। बस, जैसे ही पदार्थों का सम्मिश्रण हुआ, प्राकृतिक प्रयोग शाला में वैसी ही रसायन भी बन कर बाहर निकली। महावीर, ऋषभ और पारस से महा पुरुषों तथा। रावण, कंस और हिरण्य कशिपु से राक्षसों का पैदा करना, अब भी हमारे ही हाथ में है—हमारे ही आधीन है। जैसे ही मसालों का प्रयोग किया जायगा। वैसी ही दयालु और क्रूर, दानी और कृपण, वीर और कायर, परोपकारी और स्वार्थी सन्तति माता के प्रयोग शाला से तय्यार होकर बाहर निकलेगी। प्रकृति देवी का यह अटल और निर्विवाद नियम है। अस्तु ' हर एक उत्तम माता का परम कर्त्तव्य और एक मात्र धर्म है, कि वह अपनी इच्छानुसार और उत्तम सन्तान उत्पन्न करने के लिये इन बातों पर ध्यान रक्खें —

१ प्राकृतिक प्रयोगशाला गर्भाशय का रहस्य।

२ वंश परम्परा से उतरने वाले गुण।

३ पुरुष तथा स्त्री की मन शक्ति और प्रेम का प्रभाव।

४ सन्तान के पालन पोषण तथा शिक्षण का सुप्रबन्ध।

इस प्रकार के अनेक सद्विचार हमारे चरित्र नायक की माता भी नित्य प्रति किया करती थीं। जिस से गर्भस्थ सन्तति के ऊपर सम्पूर्ण स्वर्गीय गुणों का पूरा पूरा रङ्ग बैठ जाय, जिस से उसकी गर्भस्थ सन्तति मनुष्य के रूप में सच्ची

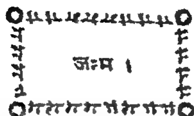
मनुष्यता लिये हुए इस जगतीतल में पुष्टे और जिस के द्वारा सदाचार, सत्य निष्ठा दृढ निश्चय, बुद्धि की विलक्षणता व्यवहार चातुर्य्य सम्पन्नता, उदारता, कर्त्तव्य परायणता, अध्यवसाय, आत्म-निर्भरता, उद्योग, विनय, धैर्य्य, सन्तोष, परोपकारिता, कृतज्ञता, निष्कपटता, साहित्य प्रेम, देशप्रेम प्रकृति-प्रेम, धार्मिक भाव आदि देवोपम गुणों का उस के साथियों में, उस के कुटुम्ब में, उस के समाज में, उस की जाति में, तथा उस के पड़ोसी किसी भी साम्प्रदायिक संसार में विशेष विकास और वृद्धि हो।

यह कहना ही नहीं होगा, कि माता ने अपने उपर्युक्त पवित्र विचारों के अनुसार अपने गर्भ जात (चौथमल) पर कितना विचित्र और आदर्श प्रभाव डाला, और उसके द्वारा मध्य भारतीय वर्तमान जैन श्वेताम्बरियों में—श्वेताम्बरीय समाज में तथा अन्य दर्शकों में किस जागृति का विद्युत सञ्चार हुआ। यह पाठकों का प्रत्यक्ष और भली प्रकार से विदित है। इस पुस्तक में भी यथा स्थान और प्रसङ्गानुकूल उसका विवेचन किया जायगा।

इस प्रकार मातेश्वरी केशरबाई ने आनन्द मुद्रा के साथ गर्भस्थित बालक की प्रति पालना करते हुए क्रम से दो मास, तीन मास पांच मास व्यतीत किये। बाद में अच्छी २ भावनाएं अर्थात् दिव्य दोहले का विचारोत्पन्न हुआ। तदनुसार आप के पतिदेव ने यथाशक्ति धर्म पत्नि की अभिरुचि के अनुसार उन्हें पूर्ण किया। यों करते २ साढे सात अहोरात्र होने पर नौ मास और दश दिन की अवधि पूरी हुई और हमारे चरित नायक का इस जगती तल में शुभ जन्म हुआ।

आगे चलकर आप में उन्हीं सद्गुणों और साधु भावनाओं का प्रत्यक्ष और प्रचुरता से प्रदुर्भाव हुआ, जिन सद्भावनाओं और स्वर्गीय गुणों का आभास, आप पर माता ने अपने गर्भाधान के समय से गर्भ स्राव के समय तक, अपने सत्कार्यों से डाला था।

प्रकरण ३ रा -



श्री मुनि महाराज का शुभ जन्म कार्तिक शुक्ला १३ रविवार सम्वत् १९३४ विक्रमीय के दिन ५० घड़ी १३ पल समय व्यतीत होने पर अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण में ६० घड़ी के पश्चात् व्यतीत योग में सूर्य ७—०, १९ घड़ी ३५—१ के शुभ योग में दैवी गुण और सिद्ध वर्ग के साथ मध्य भारतान्तर्गत 'नीमच' नगर में हुआ था। दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में, श्री कृष्ण चन्द्र के कथनानुसार निम्नलिखित छब्बीस धर्म होते हैं।

"अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यम् क्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥३॥

[श्रीमद्भगवद्गीता अ० १६, श्लोक १-३"

अर्थात् श्रीकृष्ण बोले, कि " हे अर्जुन ! (१) अभय (२) शुद्ध सात्विक वृत्ति (३) ज्ञान योग, व्यवस्थिति अर्थात् ज्ञान (मार्ग) और (कर्म) योग की तारतम्य से व्यवस्था (४) दान (५) दम (६) यज्ञ (७) स्वाध्याय और स्वधर्म के अनुसार आचरण । (८) तप (९) सरलता (१०) अहिंसा (११) सत्य (१२) क्रोधहीनता (१३) कर्म फल का त्याग (१४) शांति (१५) अपेशुन्य अर्थात् दोष दृष्टि छोड़कर उदार भाव रखना (१६) सब प्राणियों के प्रति दया । (१७) तृष्णा न रखना । (१८) मृदुता [१९] लज्जा [२०] अचपलता अर्थात् फिजूल कार्यों का छूट जाना । [२१] तेजस्विता [२२] क्षमा [२३] धैर्य [२४] शुद्धता [२५] द्रोह न करना और [२६] अति मान न करना, ये छब्बीस धर्म देवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में होते हैं ।

नीमच नगर लगभग २५° उत्तरी अक्षांस और ७१° पूर्वी देशान्तर पर, महाराजा सेंधिया के राज्य में राजपूताना मालवा रेलवे लाइन के किनारे पर अवस्थित है । यहा श्वेताम्बर स्थानकवासी समाज के वीतराग मुनियों की खासी स्थिति और सत्संगति रहती है । इस का प्रधान कारण, यहा की लोक संख्या में अधिकांश भाग स्थानकवासी जैन बन्धुओं ही का है । इसके अतिरिक्त यहा एक रेलवे स्टेशन और आस पास के गावों की व्यापारिक मण्डी होने से भी कई साधू सन्त लोग, यहा समय २ पर विचरते हुए आ निकलते हैं । और अपने पावन चरण तथा पीयूष वर्षी वचन वृष्टि से यहा की भूमि और नागरिक जनों को हृदय रसा प्लावित करते रहते हैं । आगे चल कर हमारे चरित नायक जी पर इस स्थान और यहा समय २ पर पधारे



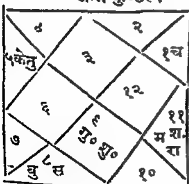
श्रीमान् धर्मप्रेमी मिश्रीमलजी मुणोत ब्यावर

परिचय-परिशिष्ट प्रकरण ३

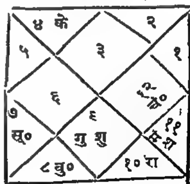
हुए साधुओं का बड़ा प्रभाव पड़ा। प्रभाव ही नहीं पड़ा, बल्कि उन की प्रति दिन की संगति और वचन संघर्ष से आप का गार्हस्थ्य जीवन एक दम सन्यस्थ जीवन के रूप में बदल गया। इस परिणति के साथ ही साथ आप का संकुचित कौटुम्बिक प्रेम भी विश्व बन्धुत्व के व्यापक प्रेम से जा मिला। अब आपका निज का सुख जीवमात्र का सुख हो गया, आपका जीवन अब अपने ही जीवन के लिए नहीं रहा, वरन् उसने प्राणी मात्र के जीवन का जामा पहिन लिया। आंगिक क्रियाए और चेष्टाए अपने ही अंगो के भरण पोषण के लिए नहीं रही वरन उनका सम्पूर्ण व्यापार और चालन अब विश्व के विराट शरीर के भरण पोषणार्थ है। व्यक्ति गत माया ममता ने अब विश्व की माया ममता से अपना नेह नाता जोड लिया। अन्तत अब आप के निज के सम्पूर्ण स्वार्थ युक्त काम काज अनन्त और आनन्दमय विराट विश्वात्मा क काम काज हो रहे हैं, जिसमे आप का, अपना सच्चा और परम स्वान्तः सुखाय है।

चरित नायक जी की जन्म कुण्डली —

जन्म कुण्डली



चलित चक्रम्



आप का शुभ जन्म होने पर कुटुम्बियों का हृदय सहज ही में आनन्दित हो उठा। और समस्त पारिवारिक लोगो ने बडा उत्सव मनाया। उन्होंने श्रद्धा और प्रेम से दीन हीन लोगों को अनेक प्रकार के दान दिये। आपके पिता के सब मित्र, स्नेही और बन्धु बान्धवों ने भी इस आनन्द में उन को बधाई दी। सब ने मिल कर आशीर्वाद दिया कि ईश्वर करे आप की यह संतान चिरायु हो। और भविष्य में यह बालक दीर्घायु होकर खूब यश और मान प्राप्त करे। यद्यपि यह आशीर्वाद केवल वर्तमान समय के विचारों पर दृष्टि रख कर साधारण रीति से ही दिया गया था। जैसा कि प्रायः होता है। तथापि समय पाकर वह सार्थक हुआ। पहिले दिन 'जात कर्म' किया गया। दूसरे दिन जागरण हुआ तीसरे दिन बालक को चन्द्र सूर्य के दर्शन कराये गए। इस प्रकार एक के बाद एक क्रियाओं को करते हुए दस दिन पूरे हुए। ग्यारहवें दिन अशोच कर्म से निवर्तन कार्य की विधि पूरी की गई। और बारहवें दिन यथाशक्ति सम्बन्धियों और ब्राह्मणों को भोजन बनवा कर खिलाया पिलाया गया। उसी दिन विद्वान् ब्राह्मणों को बुलवा कर आपके पिता जी ने उन की उचित अभ्यर्थना की और उनके द्वारा "नाम करण" संस्कार की विधि पूरी कराई। तदनुसार ब्राह्मणों ने बालक के शारीरिक लक्षणों और अनु व्यञ्जनो की परीक्षा कर उस का नाम "चतुर्थमल" रक्खा। अहा! ज्योतिष भी क्या ही विचित्र विद्या है जिसका वास्तविक ज्ञान प्राप्त होजाने पर, भूत भविष्य और वर्तमान तीनों कालों को ज्योतिर्विद एक ही साथ अपनी गोदी में खेल खिला सकता है। बस, ज्योतिषियों ने भी हमारे चरित नायक का ज्योतिष

की जानकारी से यही नाम रखा जिससे भविष्य में चलकर बालक में वे ही सब गुण उतरें और जिससे "यथा नाम तथा गुणा" की उक्ति पूर्णतया चरितार्थ हो। इस प्रकार गर्भजात बालक प्रति दिन चन्द्रकला की भांति बढ़ता हुआ अपने अड़ोस पड़ोस के समस्त लोगों को सुख देने लगा। जोधपुर के पण्डित श्री नित्यानन्द जी आशु कवि ने आप के विषय में कहा है, यथा —

युगत्रये पूर्वमतीतपूर्वे जातास्तु जाता खलु धर्ममल्लाः।
अथ चतुर्थो भवताच्चतुर्थे धातेति सृष्टोऽस्ति चतुर्थमल्लः॥

अर्थात् पहिले के तीनों युग में कई धर्मोपदेशक तथा धर्म प्रवर्तक हो चुके हैं परन्तु चौथे युग में भी कोई एक प्रतिभा शाली चौथा उपदेशक होना चाहिये इसी विचार से विधाता ने आप की रचना की।

प्रकरण ४ था



आप एक मास के हुए, दो मास के हुए, और छ मास के हुए। घुटनों के बल सरकने लगे ६ मास के होते ही तोतले वचनो से अपने अभिभावकों को प्रमुदित करने लगे यथा —

"बालक की सुनि तोतरि बाता।
मुदित होहिं मन पितु अरु माता" ॥

पिता जी ने आप को चिड़ियों का झूठा जल पिलाया जिसका अभिप्राय यह था कि बालक बड़ा होने पर स्पष्ट और चतुरता से बोलेगा। गर्भावस्था में माता की सयम शीलता और अब शैशव काल में सदाचारी पिता एवम् माता दोनों की सुयोग्यता से मुख्य उपदेशक होने का सूत्र पाठ प्रारम्भ हुआ। सुयोग्य माता पिता सन्तान समय पाकर कैसी सच्चरित्र और आदर्श होती हैं, इसका हमारे चरित नायक जी ज्वलन्त उदाहरण हैं।

सात वर्ष तक अपने माता पिता की सुशीतल छत्र छाया और लालन पालन में रहने के अनन्तर नियमानुसार आप का

विद्यारम्भ हुआ। शुभ मुहूर्त में आप को गांव की पाठशाला (चटशाला) में प्रविष्ट कराया गया। जहां आप ने गणित आदि के साथ साधारण हिंदी का ज्ञान प्राप्त किया, और कुछ अंग्रेजी और पांचवीं पुस्तक तक उर्दू का अध्ययन किया। अवस्थानुसार आप को गान विद्या का भी शौक हो चला। स्वर आप का बड़ा कर्णप्रिय और मधुर था। आगे चलकर आप ने कुछ काव्य ग्रन्थ और फुटकर कविताओं की रचना भी की, जिनका उल्लेख अन्यत्र किया जायगा। पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक आप की आरम्भिक शिक्षा हुई। पुस्तक प्रेम आप को बाल्यकाल से ही खूब था। उस समय आप प्रायः यहां नन्दराम जी पसारी (पुस्तक विक्रेता) की दुकान पर बैठे पुस्तकें पढ़ते रहते थे।

इस प्रकार आप का बाल्य काल खेल कूद में, और तरुणावस्था का आरम्भिक समय पठन पाठन में, व्यतीत हुआ। मनुष्य की अवस्था का यह समय वास्तव में बड़ा आनन्ददायी होता है घर की स्थिति चाहे साधारण ही क्यों न हो, किंतु मनुष्य सांसारिक चिन्ताओं से रहित होने के कारण इस अवस्था में अपने जीवन को बड़ी सुख शांति से व्यतीत करता है। माता पिता की सुखद छत्र छाया, उसी के अनुरूप ज्येष्ठ भ्राता का नेतृत्व, और स्वतन्त्र जीवन, इन सब सुख साधनों से युक्त हमारे चरितनायक जी का जीवन बड़े आमोद प्रमोद में व्यतीत होरहा था। किंतु, यदि आप के जीवन का लक्ष्य सांसारिक सुख प्राप्ति ही रहता तो न हमें आज प्रस्तुत विषय पर इस प्रकार रचना करने का अवसर आता और न आपका चरित्र ही आदर्श होता। वरन लोकोपकार के बदले

बहुत करके आप के द्वारा संसार का अपकार ही होता। उस विधाता प्रेरक को लाख २ धन्यवाद है, जिसकी प्रेरणा ने मुनि महाराज के लक्ष्य को एक दम बदल दिया।

प्रकरण ५ वां

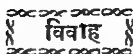
भाई का वियोग और माता का धैर्य्य

आपके ज्येष्ठ भ्राता कालूराम जी उस समय पटवारी थे। कुसङ्गति में पड़ कर ये जुआ खेलने लगे थे। पाठक जानते ही होंगे कि यह कैसी बुरी चाट है, और आये दिन इसके फल स्वरूप जो दुष्परिणाम होजाते हैं, उन्हें सब जानते हैं। अत इस विषय पर कुछ अधिक लिखना व्यर्थ का विस्तार करना है। अस्तु। कालूराम जी अपने जुआरी मित्रों के साथ हमेशा जुआ खेला करते थे। एक दिन ये लोग इन्हें किसी बहाने से जंगल में जुआ खेलने को लेगये और वहां इनके पास का सारा द्रव्य छीन कर उन्हें मार डाला। यह बात सम्वत् १९४८ विक्रमीय की है। उसी रात्रि को उनकी माताने स्वप्न में देखा कि मेरे पुत्र को किसी ने मार डाला है। दूसरे दिन जब यह प्रकट होगया कि उन्हें किसी ने मार डाला है तो माता पिता और कुटुम्बियों को अपार दुःख हुआ। कुछ समय पश्चात् संयोग से घातकों का भी पता चल गया। किन्तु, जब कुटुम्बियों ने उन पर मुकद्दमा चलाने का विचार किया तो चौथमल्जी की माता ने जो बड़ी धर्मनिष्ठा और परदुःख कातरा थीं- उसका निषेध करके कहा कि ऐसा न करो। जो कुछ हुआ सो हमारे भाग्य का। गई वस्तु लौट नहीं सकती। व्यर्थ में परस्पर वैमनस्य बढाना, अथवा अपनी ऐसी हानि की क्षति पूर्ति की आशा करना, जिस की पूर्ति और बदला हो ही नहीं

सकता, सर्वथा अनुपयुक्त है। उस में किसी का यश नहीं। घात कारियों ने या तो कर्मों का बदला लिया हो अथवा कुछ और हुआ हो। किन्तु, अब बात यहीं समाप्त करो। प्रिय वाचक! देखा आप अपने सम्यक्त्व का लक्षण! अहा! कैसी दिव्य भावना है! त्याग का कैसा अद्भुत उदाहरण है!! कम से कम इस कलिकाल मे तो ऐसा उदाहरण विरला ही मिलेगा। हा, हमारे चरित नायक जी की माता के इस त्याग में सतयुग की झलक अवश्य है। धन्य है, उस मातृ हृदय को! जो परोपकार, त्याग, और "आत्मवत् सर्वभूतेषु" से भरा हो।

हमारी जैसी साधारण लेखनी की क्या शक्ति जो उसका गुण-गान कर सके। वास्तव में त्याग और धर्म की साक्षात् मूर्ति ऐसी ही माताएं किसी भी देश के इतिहास को गौरवान्वित करने वाली होती हैं। स्वर्णाक्षरों से लिखे जाने योग्य ऐसी ही माताओं के चरित्र होते हैं। केसरा बाई तुम धन्य हो।

प्रकरण ६ ठा



विवाह

पहिले कह चुके हैं, कि हमारे चरित नायक जी के तीन बहिनें भी थीं। इन में से दो बड़ी थीं जिन का विवाह होचुका था, और एक छोटी थी जिन के लिये आप की माता जी यह सोच रही थीं कि यदि यह होशियार होजाय तो मैं और यह दोनो साध्वी बन जाय। परन्तु—

"अपने मन कुछ और है कर्त्ता के कुछ और"

अनुसार माता जी की यह इच्छा पूर्ण न होसकी। बीच ही में उस बाई का देहान्त होगया।

इसके पश्चात् हमारे चरित नायक जी का विवाह का विचार किया गया कि प्रतापगढ (राजपूताना) वाले जो सगाई का दस्तूर मिलाने का आग्रह कर रहे हैं। स्वीकार कर लिया जाय। विचारनन्तर आपकी सगाई प्रतापगढ होगई और शीघ्रही विवाह का शुभ मुहूर्त भी निश्चित होगया। परिस्थिति अनुकूल न होने के कारण आप के पिता को विवाह कार्य्य के लिये अपनी खेती की जमीन और आम के पेड बेच देने पड़े।

प्रतापगढ पहुंच कर उन्हों ने सम्वत् १९५० विक्रमी में चतुर्थमलजी का विवाह (बैठा विवाह) कर दिया। अपनी शक्ति के अनुसार विवाह कार्य अच्छे आनन्द और समारोह से सम्पन्न हुआ। इसके पश्चात् नव वधू को अपने साथ लेकर ये लोग नीमच आगये।

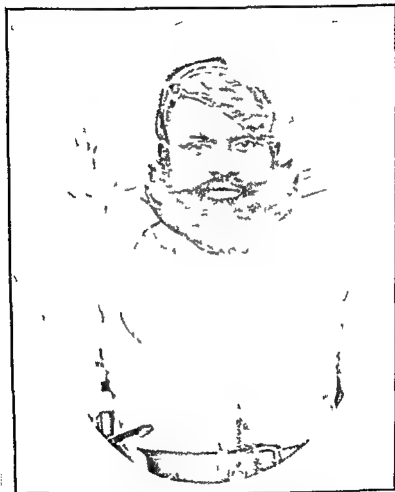
तर वैराग्य की ओर ही देखी तो एक दिन पूनमचन्द जी (चरित नायक जी के ससुर) इनकी माता से कहने लगे कि —"ओ" बुढी व्याण जी ! मेरे जंवाई को दीक्षा दिलाती है। मुझे नहीं जानती कि मैं कौन हू ? मेरा नाम पूनमचन्द है। देखता हूँ मेरे जीते जी कौन इन्हें दीक्षा दिलाता है?" इस पर माता जी ने उत्तर दिया कि —"मैं बैठी हूँ इस को दीक्षा दिलाने वाली, यदि अपने पुत्र को दीक्षा दिलाकर तुम को पूनमियाँ का अमावस्या बनाऊँ, तो मेरा नाम केसर है।" आदि और भी बातचीत हुई।

- कुछ दिन और इसी प्रकार निकल गए। परन्तु, अब इन के ससुर को इनके भाग जाने की उतनी आशङ्का न रही थी। क्योंकि रहते २ कुछ समय हो गया था और कभी २ प्राय गाँव में या गांव से बाहर भी जाते आते रहते थे। एक दिन आप सवारी भाडे कर चुपके से वहा से नीमच को चल दिए। वहा आकर एक दिन किसी मृतक की दाह क्रिया में शमशान गये। यह पहिला ही अवसर था जब इन्होंने मृतक की दाह-क्रिया देखी। इस पर से इनको विचार हुआ कि एक दिन अपने को भी इसी मार्ग से चलना होगा। आदि २ विचारों से आपको ससार से और भी विरक्ति हुई और शनै २ आप की प्रवृत्ति ईश्वर-भक्ति में प्रवृत्त हुई।

इसके पश्चात् हमारे चरित नायक प्रतापगढ आये। उन दिनों वहा अमोलक ऋषि जी विराजते थे। आपने उनके दर्शन

माताजी के शब्द —

म्हारा पुत्र ने दीक्षा देवाडी ने तने पूनमिया को अमावस्यो बणाऊँ तो म्हारो नाम केसर है।



चरित्र नायकजीके परमभक्त,
श्रीमान् जीवनसिंहजी साहिब हाकिम आसिन्द (मेवाड)
परिचय प्रकरण २३

किये तथा व्याख्यान सुने जिस से वैराग्य और भी दृढ हुआ वहां से एक पूजणी (जिसे लघुजीव रक्षिका) की डाडी भी तैयार करा कर लाये। वहां से आप छोटी सादडी (मेवाड) गये जहाँ मुनि श्रीलालजी महाराज और शकर लालजी महाराज विराजते थे। उस समय श्रीलालजी महाराज को पूज्य पदवी नही थी। उनके दर्शन किये और उनके आदेश से चार रात्रि का आगार रख तेविहार (रात्रि भोजन) का यावज्जीवन त्याग कर दिया। चार रात्रि का जो आगार [१] रक्खा था वह माता से प्रकट नहीं किया। एक दिन रात्रि के समय आपने दही बडे खा लिये। रात्रि भोजन का परित्याग कर चुकने के कारण उनको रात्रि में खाने से इन्हें स्वाद नहीं आया अच्छे नहीं लगे। इसका, और साथ ही अपनी प्रतिज्ञा का भी ध्यान आने पर इन्हे दुःख और पछतावा हुआ। घर पर आकर चुपके से हाथ धो रहे थे कि माता जी ने कहा —बेटा! मालूम होता है आज तूने कुछ खाया है? किसी बात की प्रतिज्ञा करके उसको भग न करना चाहिये अभी तेरी छोटी अवस्था है। अपने मन और इन्द्रियोंको वश मे न रखेगा तो वे आगे चलकर स्वच्छन्द हो जायगी और तेरे जीवन को कलुषित बना देंगी।

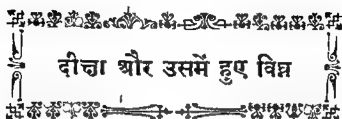
इस पर माता पुत्र में परस्पर वार्तालाप होकर ससार परित्याग की दृढ प्रतिज्ञा हो गई। अवशिष्ट आम के पेड तथा

---

[१] आगार —भूल से किसी दिन रात्रि भोजन कर लिया जाय उसको कहते हे। चार रात्रि का आगार रखने से यह मतलब है कि महीने में चार बार यदि रात्रि भोजन कर लिया जाय तो वह क्षन्तव्य हो सके।

ज़मीन और कुए को बेच दिया। किसी का मकान गहने रख रखा था उससे रुपये लेकर मकान उसको सौंप दिया। माता ने कहा—कि "चौथमल! तेरी बडी बहिन का विवाह किया था उस समय १५०) रु० दहेज में लिये थे। किसी प्रकार वे रुपये देदेने चाहिये" इस पर विचार कर वे रुपये दे दिये गये। एक दिन घर का नाई बाल बनाने को आया और बोला,"" जजमान! अब तो आपके न रहने से मेरे एक घर की कमी हो जायगी। आपके घर से मुझे जो प्राप्ति होती थी वह अब न रहेगी। इस पर माता जी ने कहा कि "बेटा! इस घर के नाई को भी कुछ न कुछ देना चाहिए।" बस, माता का इतना कहना था कि आपने कान में से सोने की मुरकियें निकाल कर नाई को दे दीं।

प्रकरण ८ वां ।



दीक्षा और उसमें हुए विघ्न

सम्वत् १९५२ ।

उन्ही दिनों जहा निम्बाहेडा निवासी सूरजचन्द जी वैरागी नीमच आये । उन्होंने आप ही के यहा भोजन किया और वहीं ठहरे । जब चलने लगे तो कह गये कि—भाइ तुम भी जल्दी ही आना । इधर दोनों मा बेटे नीमच से चलकर उदयपुर पहुँचे । वहा नन्दलाल जी महाराज का चतुर्मास था । दोनों मा बेटे वहा रह कर प्रतिक्रमण आदि सीखने लगे । कोई भोजन के लिये कह जाता तो उसके यहा जाकर भोजन कर आते । यदि कहीं का निमन्त्रण न आता तो बाजार से लाकर खा लेते । इस प्रकार कुछ समय तक वहा रह कर प्रतिक्रमण तथा दशवैकालिक के तीन अध्याय सीख गये ।

फिर वहा से नये शहर (ब्यावर) आये । वहा चौथमल जी की सगी मौसी (मासी) साध्वी रत्ना जी थीं । उन के दर्शन किये । वहा से बीकानेर गये । और बत्तीस शास्त्र की ज्ञाता गट्टूबाई के यहा ठहरे । वहीं महासती नन्दकुंवरि जी की साध्वियें भी थीं । उन्हों ने चौथमल जी से कहा कि कच्चे पानी को पीने का त्याग करले । इस पर आपने उत्तर में

यह कहा कि यह तो ठीक है परन्तु, रेल में निभना मुश्किल है। इस लिये कुछ समय बाद इसका त्याग करूंगा जब मैं यह समझलू कि अब निभ जायगा। वहा से रवाना होकर भीना सर आये। वहा हजारीमलजी बाठिया ने कुछ शास्त्र दिये उन्हें लेकर वहा से देशनूर आये। वहा पूज्य हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के रघुनाथजी महाराज और हजारीमलजी महाराज के दर्शन किये। सेवा में बैठे तो रघुनाथ जी महाराज ने कहा कि कौन हो ? कहा रहने हो ? और कैसे आये हो ? उत्तर में चौथमल जी ने कहा कि वैरागी हूं। नीमच रहते हैं। दर्शन के लिये आये हैं। तब रघुनाथ जी महाराज ने कहा कि ठीक है, दीक्षा लो। क्या पहिले कुछ सीखा भी है ? इस पर आपने कहा कि हा, प्रतिक्रमण और दशवैकालिक सीखा है। स्वामीजी ने कहा.-"अच्छा, सज्झा (स्वाध्याय) करो। इस पर चौथमल जी ने सज्झा की जो स्वामी जी को बडी प्रिय लगी। तब उन्हा ने कहा कि तुम हमारे पास ही दीक्षा लेलो। एकान्तर * करना होगा। यदि यह न सधे तो एक बार खाना"। तब आपने कहा कि दीक्षा तो नन्दलाल जी हीरालाल जी महाराज के पास लूंगा इस पर स्वामी जी ने कहा कि वे तो बारह बजे आहार पानी से निवृत्त होते हैं फिर कब ज्ञान ध्यान करोगे इत्यादि। तब चौथमल जी ने कहा कि अभी तो मैं सन्तों की सेवा करूंगा यह कह कर वहा से विदा हुए और जयपुर गये वहा जौहरी काशीनाथ जी के यहा ठहरे। वहा से निम्बाहेडा

* एकान्तर—एक दिन भोजन करना और दूसरे दिन निराहार रहना तथा तीसरे दिन भोजन करके चौथे दिन निराहार रहना इसको एकान्तर कहते हैं।

(टोंक) गये जहा हीरालाल जी महाराज विद्यमान थे। उनके दर्शन कर शास्त्र, पात्र, ओघा पूंजणी वस्त्रादि लेकर जावद (ग्वालियर) गये। वहा पूज्य चौथमल जी महाराज और श्रीलाल जी महाराज विराजते थे। पूज्य चौथमल जी महाराज ने आप से कहा कि — "तू म्हारा कने दीक्षा लई ले" इसी प्रकार श्रीलाल जी महाराज ने भी कहा। तब आपने विचार किया कि चौथमल जी महाराज तो वृद्ध हैं। ओर श्रीलाल जी महाराज बराबरी के। इस कारण दीक्षा तो इन्हीं से लेनी चाहिये। यहा पर यह लिखना अप्रासङ्गिक न होगा कि हमारे चरित नायक जी मे एक गुण विशेषत वाल्यावस्था से ही देखा जाता था। वह यह कि आप को देख कर कोई मनुष्य सहज ही आपकी ओर आकर्षित होजाता था। यह सब आपकी बुद्धिमता, चतुरता, शान्त वृत्ति, धार्मिक भाव आदिके कारण था। जो कोइ भी आप से मिलता बडे प्रेम और अनुराग से आगे चल कर आप में जिन गुणों का समावेश हुआ उनका आविर्भाव आप में लडकपन से ही होगया था। तभी तो जेसा कि ऊपर कहा गया है प्रत्येक व्यक्ति आपको हृदय से चाहता था। उत्तम वस्तु किस को प्रिय नहीं होती सभी चाहते हैं कि वह मेरे पास आ जाय। अस्तु, ओघे, पात्र, जावद ही रख कर आप फिर निम्बाहेडे आए। और वहां से हीरालाल जी महाराज के साथ २ केरी (टोंक स्टेट) यहा से फूलचन्द जी और भोगीदासजी चौथमलजी को दीक्षा देने की आज्ञा लेने को प्रतापगढ़ गये। सेठ जो गुमान मल जी के यहा ठहरे। और चौथमल जी के ससुर पूनमचन्द जी को बुलवा कर आज्ञा के विषय में पूछा तो वे लाल नेत्र कर तमक कर बोले, कि खबरदार! याद रखना। यह मेरे

पास दो नाली बन्दूक है। एक नाल से गुरू को और दूसरी से शिष्य को परमधाम पहुचा दुगा। बस, इतना सुनते ही वे लोग वहा से चल दिए। जब फेरी लौट कर आए तो सब वृत्तान्त कह सुनाया। इससे साधु चमके और पूज्य चौथमल-जी महाराज ने दीक्षा देने से साफ इन्कार कर दिया। इसी समय हीरालाल जी महाराज ने वहाँ से मन्दसौर विहार किया। और इन से कहा कि तुम वहा दया पालो (अर्थात् वहा आओ) हम दीक्षा देंगे। पीछे चोथमल जी महाराज अपनी माता के साथ मन्दसौर आये और रहने लगे। उन दिनों आप जरा सफेद पोश (जेन्टिलमन) रहा करते थे। वहा गौतम जी बागिया नामक एक शास्त्र-वेत्ता श्रावक थे। वे चौथमल जी के रहन सहन को देखकर कहने लगे कि तुम से क्या साधुपना निभेगा। मेरे विचार से तो तुम्हारी यह चेष्टा व्यर्थ है। अच्छा, तो यही है कि तुम बुगली* में दूकान लगाकर निर्वाह करो। और भी कई लोग ऐसे थे जो प्राय इन का उपहास कर कहा करते थे कि "चोथमल जी" जाओ साधु बन कर अपने ससुराल से भिक्षा ले आओ।" आदि एक दिन आपकी माता बोली कि बेटा, यदि तू कहे तो अपने पास जो जेवर है उसे तेरे ससुर को दे आऊ। और उन से आज्ञापत्र लिखवा लाऊ ताकि तुझको दीक्षा देने में किसी को आपत्ति न हो। इस पर चौथमल जी सहमत हो गये। माता इनके ससुर के पास जो उस समय वमोत्तर थे, गई। और उनसे जाकर कहा कि यह अपना कुल जेवर मैं तुम्हें देती हू। हमको दीक्षा मिल जाने के लिये तुम आज्ञा लिख दो।

*बुगली = मन्दसौर का एक बाजार।

इसको पूनमचन्द जी ने स्वीकार कर लिया। परन्तु उनसे जेवर लेकर कपट किया। जो इस प्रकार है कि —उन्होंने जो आज्ञापत्र लिखा उसमें लिख दिया कि मेरी व्याणजी अगर दीक्षा लें तो मुझे कोई ऐतराज नहीं। लेकिन अपने जंवाई के लिये मेरी आज्ञा नहीं है। उस पत्र में दो व्यक्तियों की साक्षी भी करवा दी। जब माता जी ने उस पत्र को कहीं और जगह जाकर पढ़ाया तो पूनमचन्द जी की कुटिलता पर उन्हें बड़ा विचार हुआ। किन्तु, क्या करती? वहा से ठाकुर साहब के पास गई और उन से सारा वृत्तान्त कह कर मन्दसौर आ गई। अपने पुत्र से कहने लगीं कि बेटा! अब कोई भय की बात नहीं है। मैं बहू के लिए सारा जेवर तेरे ससुर को सौंप आई हूं। अब वह यह न कहेगा कि मेरा कुछ प्रबन्ध न किया इसके पश्चात् हीरालाल जी महाराज जावरे पधारे। तब माता और पुत्र दोनों वहा पहुचे। किन्तु यहाँ भी ससुर की आज्ञा न होने से श्री सङ्घ ने दीक्षा होने में आपत्ति की। फिर जब हीरालाल जी महाराज बड़लिये होते हुए ताल पधारे तो मार्गमें चम्बल नदी पर ठहर साथमें चौथमल जी, आपकी माता और हजारीमल जी वैरागी भी थे। संयम का सामान सब साथ में था। पात्र भी मन्दसौर में रंगाये थे वे मौजूद थे। उनमें से एक पात्र आपने निकाल कर उस को नदी में फेंक कर तिराया और उसके द्वारा बड़ा कौतूहल किया। हीरालाल जी महाराज वहा से ताल उणे ल होते हुए बोलिये (इन्दौर स्टेट) पधारे। वहा पर चौथमल जी व आपकी माता ने विचार किया कि अब तो संसार परित्याग कर देना चाहिये। इस प्रकार कहा तक फिरते रहेंगे यह चौथमल जी ने भी ठीक समझा, और माता से कहा कि

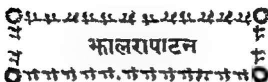
अपने उत्सव से क्या काम है। साधुपने से गरज है। उत्सव से केवल लोग दिखावा होता है। अब जब हमें संसार से विरक्त ही होना है तो फिर लोग दिखावे का ढोंग भी व्यर्थ है। आदि। इसके पश्चात् आपने केवल हाथ पैरों में मेहदी* लगवाई। फिर आपके भावी गुरु हीरालालजी महाराज ने जब छावनी (झालरापाटन राजपूताना) की ओर विहार किया तो आप भी माता सहित साथ हो लिये। मार्गमें बोलिये से थोडी दूर पर एक नदी आती है जिसके एक किनारे की ओर वट वृक्ष है-उसके नीचे जाकर आपकी माता केसर बाई ने सम्वत् १९५२ की फाल्गुण शुक्ला ५ रविवार पुष्य (पुष्यक) नक्षत्र मे आपको साधुवेष धारण कराया। इसके पश्चात् आपको हीरालाल जी महाराज के सन्मुख खडे किये और प्रार्थना की कि आपको शिष्य रूप भिक्षा देती हूँ इसे स्वीकार कीजिये मुनि हीरालाल जी महाराज ने शिष्य की परीक्षा तो कर ही ली थी। अत भिक्षा स्वीकार कर दीक्षा देदी। इसके पश्चात् आप जब यहा से विहार करते पचपहाड पधारे तो पीछे में केसर बाई भी वहा आगई और इस प्रकार हमारे चरित नायक जी की सातवे दिन (अर्थात फाल्गुण शु० १२ सम्वत् १९५२) को खूब समारोह के साथ वहीं दीक्षा हुई।

* दीक्षा लेने से पहिले जिसको दीक्षा दी जाती है उसके मेहदी लगाई जाती है। और इसी प्रकार के और भी उत्सव आदि किये जाते हैं जैसा कि विवाह के समय होता है।



प्रकरण ६ वां

संवत १६५३



धार्मिक ग्रन्थ परिचय।

इसके अनन्तर नये शिष्य और गुरु (हीरालाल जी महाराज) छावनी (झालरापाटन) पधारे। उधर केसरबाई पचपहाड़ से विदा होकर जावरे गई। वहां आपने भी फूलाजी आर्या जी महाराज से दीक्षाली। हीरालाल जी महाराज जब छावनी का चतुर्मास स्वीकार कर वापिस जावरे पधारे और फिर नये शिष्य चौथमल जी महाराज तथा हजारीमल जी महाराज (जिन्हा ने चौथमलजी महाराज के पश्चात् दीक्षा लीथी)के साथ सम्वत १६५३का चतुर्मास छावनी किया। इस चतुर्मास में चौथमलजी महाराज ने दशवैकालिक के शब्दार्थ का अध्ययन किया, अणुत्तरोववाई वांची और कुछ थोकड़े भी सीखे। आप अपने गुरु की सेवा भक्ति में बिल्कुल त्रुटि न होने देते थे। ज्ञान भी विनय पूर्वक सीखते थे, और अपना अध्ययन भी नियमित रूप से कर रहे थे।

% तत्वों का समूह।

प्रकरण १० वां ।

सम्वत १९५४—५५

रामपुरा और बड़ी मादड़ी (मेवाड़)



छावनी (झालावाड़) का चतुर्मास शान्ति और आनन्द पूर्वक पूर्ण होने पर हीरालाल जी महाराज ने वहा से विहार किया। उस समय आपके साथ चैनराम जी महाराज तथा कालूरामजी महाराज भी थे । दो तोगः* किए । चैनराम जी महाराज और चौथमलजी महाराज छोटे २ गावो मैं होते हुए कोटे पधारे। तब चैनराम जी महाराज पूछने लगे कि चौथमल जी, व्याख्यान कौन बाचेगा ? इसका मुझे बड़ा विचार है। तब आपने उत्तर दिया कि मैं बाचूंगा। वहा आपने दो व्याख्यान दिये। इसके पश्चात् हीरालाल जी महाराज भी पधार गये। कुछ दिन के पश्चात् वहा से फिर हीरालाल जी महाराज ने विहार किया तो श्रावक लोग कहने लगे कि नये महाराज (चौथमल जी महाराज) के मुख से एक व्याख्यान सुनने की हमारी और इच्छा है। आप की व्याख्यान शैली यहीं से ऐसी तीव्र और हृदय ग्राही हो गई

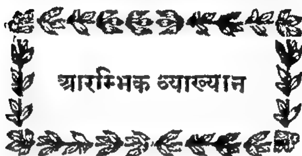
* विभाग।

थो। तभी तो श्रावकों की इच्छा और व्याख्यान सुनने की हुई। परन्तु गुरु देव की सेवा से विलग न रह सकने के कारण आप भानपुरा, रामपुरा, मणाँसा और नीमच होते हुए जावरे पधारे। वहा कुछ दिन ठहर कर फिर सम्वत् १६५४ का चतुर्मास आपने गुरुदेव के पास रामपुरे में आकर किया। इस चतुर्मास में आप ने अपनी बुद्धि के अनुसार ज्ञान ध्यान सीखा। और फिर चतुर्मास की समाप्ति पर गुरु के साथ ही जावरे पधारे। जावरे अधिक आने जाने का प्रयोजन यह था कि यहा हमारे चरित नायक जी के परदादा गुरु (रतनचन्द जी महाराज) विराजते थे। उनके दर्शन तथा सेवा भक्ति कर आपने सम्वत् १६५५ का चतुर्मास गुरुदेव के साथ बड़ी सादड़ी (मेवाड) में किया। वहा भी आप ने ज्ञान ध्यान की खूब वृद्धि की।

प्रकरण ११ वां,

सम्वत १९५६—५७—५८

जावरा रामपुरा, मदसौर



आरम्भिक व्याख्यान

बडी सादडी का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहा से निम्बाहेडा और चित्तौड होते हुए पारसोली (मेवाड) पधारे। वहा राव जी साहब रत्नसिंहजी जो (श्रीमान् मेवाडाधीश हिन्दवा सूर्य्य) महाराणा साहब के सोलह जागीरदारों में से एक थे। जैन धर्म्म से परिचित थे और उसमें आप की श्रद्धा भी थी। जैन मुनियों को बडे आदर और भक्ति की दृष्टि से देखते और उनका सन्मान करते थे। वे प्राय कहा करते थे कि जैन साधुओं जैसा त्याग और वृत्ति अन्यत्र नहीं पाई जाती।

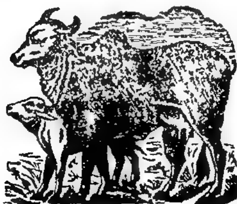
रावजी साहब के हृदय में जैन धर्म के प्रति इतनी श्रद्धा और भक्ति तपस्वी महाभागी रतनचन्द जी महाराज, गुरु जवाहरलालजी महाराज, पण्डित मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज, सरल स्वभावी कविवर हीरालाल जी महाराज की सत्सङ्गति के कारण हुई थी।

उपर्युक्त मुनिवरों का रावजी पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे स्वयम् कहा करते थे कि यदि मुझे कोई लकडी या पत्थर से मारभी दे तो मैं उससे बदला लेने की चेष्टा नहीं करूंगा और न कुछ दण्ड ही दूंगा। शिकार खेलने का विचार तो उनके हृदय से बिल्कुल निकल ही गयाथा। यदि उनको जैन श्रावक की पदवी दीजाय तो भी अनुचित न होगा। क्योंकि उनके आचार विचार वैसे ही थे जैसे एक श्रावक के होने चाहिये। एक दिन रावजी साहब ने चौथमल जी महाराज से शिक्षा के तौर पर कुछ कहा कि आपकी अवस्था अभी थोडी है अतएव जितना भी ज्ञान उपार्जन किया जासके, कीजिये। इसके साथ ही गुरु की सेवा और भक्ति में तत्पर रहना भी आपका खास लक्ष्य होना चाहिये। आपने दुपहर और सायकाल को जो व्याख्यान दिया बहुत ही उत्तम था। उसको सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। और भविष्य के लिये पूर्ण विश्वास होगया है कि यदि आपकी यही गति रही तो गुरुदेव के शुभाशीर्वाद से समय पाकर जैन सिद्धान्त के धार्मिक क्षेत्र में आपका एक खास और अत्यन्त आदरणीय स्थान होगा आदि

यहा से विहार कर आप नारायण गढ पधारे। यहा नृसिंहजी महाराज का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था अत गुरुदेव (हीरालालजी महाराज) आप को उनकी सेवा में छोड गये। जब नृसिंहजी महाराज का स्वास्थ्य ठीक होगया तो आप वहा से विहार कर मन्दसौर पधारे। एक दिन भूरा मगनीराम जी महाराज ने आपसे कहा कि चौथमल जी आज तुम व्याख्यान वाचो। इसी समय वही शास्त्र वेत्ता मोतीलाल जी बागिया जो चौथमल जी महाराज से पहिले कहा करते थे कि तुम में साधु होने के लक्षण नहीं है, साधुस्थित उपाश्रय में आकर

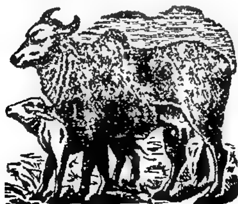
गई और उसको गुरुदेव ने चौथमल जी महाराज ही का शिष्य बना दिया। उसके पश्चात् वहां से विहार कर रामपुरे पधारे। गुरुवर के साथ रह कर सम्वत् १६५८ का चतुर्मास रामपुरे किया। इस अवसर पर ज्ञान ध्यान में और भी वृद्धि हुई। कई बालकों को तत्वज्ञान सिखा कर होशियार किया। समय २ पर व्याख्यान भी दिये।

रामपुरे का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहां से विहार कर हमारे चरित्तनायक मन्दसौर पधारे। मार्ग में व्याख्यान के द्वारा अनेक त्याग और प्रत्याख्यान हुए। सम्वत् १६५९ का आपका चतुर्मास स्वतन्त्र रूप मन्दसौर में हुआ एवम् गुरु जवाहरलाल जी महाराज तथा हीरालाल जी महाराज का भनकपुरा मन्दसोर में। चौथमल जी महाराज के व्याख्यान चार मास तक बराबर धडाके से शहर मे होते रहे। जनता सुन २ कर चकित होती थी कि देखो पूर्व जन्म के पुण्य के व्याख्यान की कैसी उत्तम शक्ति आगई। आदि।



गई और उसको गुरुदेव ने चौथमल जी महाराज ही का, शिष्य बना दिया। उसके पश्चात् वहा से विहार कर रामपुरे पधारे। गुरुवर के साथ रह कर सम्वत् १६५८ का चतुर्मास रामपुरे किया। इस अवसर पर ज्ञान ध्यान में और भी वृद्धि हुई। कई बालकों को तत्वज्ञान सिखा कर होशियार किया। समय २ पर व्याख्यान भी दियें।

रामपुरे का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहा से विहार कर हमारे चरितनायक मन्दसौर पधारे। मार्ग में व्याख्यान के द्वारा अनेक त्याग और प्रत्याख्यान हुए। सम्वत् १६५८ का आपका चतुर्मास स्वतन्त्र रूप मन्दसौर में हुआ एवम् गुरु जवाहरलाल जी महाराज तथा हीरालाल जी महाराज का झनकपुरा मन्दसौर में। चौथमल जी महाराज के व्याख्यान चार मास तक बराबर धड़ाके से शहर मे होते रहे। जनता सुन २ कर चकित होती थी कि देखो पूर्व जन्म के पुण्य के व्याख्यान की कैसी उत्तम शक्ति आगई। आदि।





श्रीमान् तुकोजीराव बापु साहिब महाराज, पंवार

के सी एस आई

देवास मालवा (सेन्ट्रल इंडिया)

परिचय–प्रकरण ३२

प्रकरण १२ वां

सवत् १६५६ नीमच ।

OOOOOOOO
O प्रसिद्ध वक्ता । O
OOOOOOOO

मन्दसौर का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहा से गुरू महाराज व चोथमल जी महाराज विहार कर खाचरोद पधारे । वहा चौथमल जी महाराज, गुरू जवाहरलालजी महाराज की सेवा में रह । नन्दलालजी महाराज हीरालालजी महाराज आदि मुनिवर वहा से धार इन्दौर को ओर पधारे । और वहा से विचरते हुए खाचरोद ही में सघ सन्तो का सगठन होगया । वर्षा के दिन भी निकट आगयेथे अत इन्दौर मे श्री सघ की विनती, धार से मोतीलाल जी सेठ आदि श्री घ, और उज्जेन से श्रीयुत हजारीमल जी आदि श्रीसघ चतुर्मास के लिए अपनी २ प्रार्थना लेकर खाचरोद आये । इसमें उज्जेन श्री सघ ने खास तौर पर चौथमलजी महाराज के लिए प्रार्थना की किंतु, उनके भाग्य में यह नहीं था कि आप की पीयूष वाणी स‚लाभ उठावे । गुरुवर ताल (जावरा स्टेट) के लिये आज्ञा देने वाले थे इतने ही म बडी सादडी (मेवाड) का श्री सघ खाचराद आगया । तब चोथमल जो महाराज न विचार किया कि ताल में श्रावकों के घर थोडे हैं और सादडी में अधिक । अत वहा व्याख्यान मे अधिकाश लोग आयेंगे और

ज्ञान प्रचार का अच्छा सुयोग रहेगा। यह सोचकर आप ने गुरुवर से सादडी का चतुर्मास करने की आज्ञा मागी जिसे गुरुदेव ने स्वीकार किया। आप के साथ नवदीक्षित हजारी मल जी महाराज को भी भेजे। वहा से आप दोनो ने सादडी (मेवाड) विहार करने का विचार किया तो हजारीमल जी महाराज के पाव में नहरू का छाला पड गया तब आप ने गुरुवर से कहा कि इनके पेर से नहरू निकलना दीखता हे यदि मार्ग मे चलने से अधिक सूजन आगई तो बडा कष्ट होगा, इस पर गुरुवर ने फरमाया कि ऐसा हो तो कहीं भी चतुर्मास कर लेना। क्योंकि मार्ग मे कइ बडे २ गाँव आते हें। इस प्रकार वहा से विहार करते हुए मन्दसौर पधारे शहर मन्दसौर मे दो रात्रि से अधिक नहीं कल्प सकता था अत, खानपुरे मे निवास किया। जब शहर मे यह सूचना हुई तो वहाँ के निवासी दर्शनार्थ आये और प्रसिद्ध श्रावक श्रीयुत पन्नालाल जी कीमती न महाराज श्री से शहर मे पधारने के लिये प्रार्थना की। आपने फरमाया कि दो रात्रि से अधिक शहर मे कल्पता नहीं हे। इस पर पन्ना-लाल जी ने निवेदन किया कि केवल दो रात्रि के लिये ही पधारिये। आखिर उनके विशेष आग्रह करने पर आप शहर में पधारे और दो व्याख्यान दिय जिनका ऐसा प्रभाव पडा कि सुप्रसिद्ध श्रावक श्रीमान् पन्नालालजी कीमती तथा उनकी धर्मपत्नी दोनों ने व्याख्यान मण्डप मे खडे होकर हमेशा के लिये शील—व्रत धारण किया। इसके अतिरिक्त अन्यान्य लोगो पर भी अच्छा प्रभाव पडा। वहा से विहार कर आप,नीमच पधारे। वहां जेन तथा अजैन जनता को उपदेश दिया। वहा आप के उपदेश का खूब प्रभाव पडा। एक १८

वर्ष के ओसवाल बालक हुकमचन्द ने [illegible] दीक्षा लेने की प्रार्थना की। उससे महाराज श्री ने फरमाया कि हम यहाँ नहीं ठहर सकते। बडी सादडी चतुर्मास [illegible] तुम भी साथ में दया पाले। * यह कह कर वहाँ से विहार किया तो मार्ग में एक काले नाग ने आडे आकर मार्ग रोक दिया। तब आपने सोचा कि सादडी जाने में कुछ लाभ नहीं मालूम होता। किन्तु फिर भी वहा से चलकर [illegible]। [illegible]। वाहा बडे जोर की वर्षा हुई। वर्षा से [illegible] जी महाराज के पैर में नहरू ने जोर दे दिया। इस से आपको चलने समय बडा कष्ट होने लगा। नीमच जाने का विचार कर रहे थे कि इतने ही मे नीमच से श्रीमान [illegible] आये। तथा मन्नालाल जी राठौड आदि श्रावक वहा पर आकर कहने लगे कि नीमच पधारिये। इस पर महाराज श्री ने फरमाया कि आप लोग क्यों आये हम तो आ ही रहे थे। सब को साथ लेकर नीमच पधारे वहाँ [illegible] हुआ और बड़ा आनन्द रहा। कई श्रावकों को [illegible] ध्यान में प्रतिबोधित किये। जनता [illegible] कर [illegible] और अचम्भित होगई। [illegible] चर्चा होने लगी कि हम नहीं समझते थे कि [illegible] जी दीक्षा लेकर ऐसे होशियार और प्रसिद्ध [illegible] हो जायेंगे। हम तो बाल्यावस्था में इनकी हसी किया करते थे। बल्कि यहाँ तक कहते थे कि लोगों का ठगने का रास्ता ले रहे हैं आदि। परन्तु बात ही कुछ और हो गई। इस प्रकार संवत् १९[illegible] चतुर्मास नीमच में बडा [illegible] और आनन्द से [illegible]

* साथ रहा।

इसी अवधिमें वैरागी हुकमीचन्दजीको प्रतिक्रमणादि भी सिखा दिये। तब उनकी दीक्षा के लिये नीमच श्री सघ ने—महाराज श्री से प्रार्थना की जिसे आपने स्वीकार किया। वैरागी हुकमीचन्दजी के श्री सघ ने विनौरा विठाया। और दीक्षा दिलाने का उपक्रम प्रारम्भ किया। किन्तु, जैसा कि प्राय, देखा—जाता है शुभ कार्य में विघ्न आ ही जाते हैं, यह कार्य भी निर्विघ्नता से कैसे सम्पूर्ण हो सकता था। कवि ने क्या ही ठीक कहा है —"श्रेयासि बहु विघ्नानि" इनकी दीक्षा में रोक लगाने वाला कोई कुटम्बी न मिला तो राज की ओर से सूबे साहिब ने दीक्षा होना रोक दिया। इससे श्री सघ में बड़ी खलबली मची। श्रीमान् पन्नालालजी चौधरी ने कहा कि सूबा साहब हुक्म नहीं देंगे तो लश्कर (ग्वालियर) जाकर ले आऊ गा। ऐसा निश्चय करके स्टेशन पर आये। सूबा साहिब भी कार्य वश कहीं जा रहे थे वहा उनकी पन्नालाल जी से भेंट हुई। सूबा साहिब ने पन्नालाल जी से पूछा कि आप कहां जा रहे हो? तब उत्तर में कहा कि —'लश्कर दीक्षा का हुक्म लेने को" इस पर सूबा साहिब ने स्वय ही कह दिया कि जाओ, मेरा हुक्म है कि खुशी के साथ उस वैरागी को दीक्षा दी जाय। बस। पन्नालाल जी लौटकर शहर में आ गये और हाथी के हौदे पर बिठला हुकमीचद जी को मगसर वुदि १ सम्वत १९५९ के दिन बडे समारोह से दीक्षा दी गई।



प्रकरण १३वां

सवत १९६० नाथद्वारा

अस्वस्थता और धारा प्रवाह व्याख्यान

श्रोताओं की अपार भीड

नीमच से विहार कर छावनी जावद होते हुए आप कणोरे पधारे। मार्ग के सब स्थानों में व्याख्यान सुनने को जैन और अजैन सभी लोग बहुत अधिक सख्या में आते थे। अनेको ने कई प्रकार के त्याग—प्रत्याख्यान किये। वहा से विहार कर महाराज श्री ठाणा ३ से* बडाण पधारे। यहा भी सब स्थानो की भांति जैन, अजैन, मजदूर, काश्तकार बहुत बडी सख्या में सम्मिलित हुए। वहा के रावजी साहब ने भी कई बार व्याख्यान में योग देकर लाभ लिया। महाराज श्री की मुक्त—कण्ठ से प्रशसा की। वहा से विहार कर आप केरी, निम्बाहेडे, नकुम, भदसर और सावे होते हुए चित्तौड पधारे। वहा भी व्याख्यान का बडा आनन्द आया इन दिनो महाराज श्री निर्बल होगये थे। और होते जा रहे थे कारण कि आपको सम्वत् १९५७ से पेट में फोये+ की तकलीफ थी। इस से स्वास्थ्य प्राय बिगडा हुआ रहा करता था। उन दिनो वहा किसी रोगी का इलाज करने को घोसडे से एक नाई आता था। उसको आपने अपना पेट

* तीन साधुओं से + रोग विशेष।

दिखा कर एक दवा ली। और उसका तीन दिन तक सेवन किया, जिस से आपको बहुत कुछ लाभ प्रतीत हुआ। इस पर नाई ने कहा कि दो रोज तक और ले लीजिये तो आपका यह रोग समूल नष्ट होजायगा परन्तु आप बहुत अशक्त होगये इस लिये बोले कि अब मुझ से यह दवा नहीं ली जाती। इस पर उस नाई ने कहा कि और दवा न लेना चाहें तो मत लीजिये। इतना अवश्य करते रहें कि भोजन कर चुकने के पश्चात् बाईं ओर कुछ मलना (मालिश करवाना) और उसी बाजू लेट जाना। ऐसा करने से भी आपका यह रोग जाता रहेगा। आपने कुछ दिन तक ऐसा ही किया तो आपका वह उदर रोग समूल नष्ट होगया। वहाँ से आप कपासण होते हुए सारोल पधारे। यहां प्रताप बाई, धर्म पत्नी रूपचन्दजी सियाल, को २० वर्ष अन्न जल ग्रहण किये होगये थे न उस को भूख लगती थी और न प्यास और घर गृहस्थी के सब कार्य्य वह बराबर किया करती थी। अस्तु आपने इस के पश्चात् विहार करने का विचार किया कि किधर चलना चाहिये। यहा से नाथद्वारा सन्निकट है और दूर २ के लोग वहा आते हैं यदि वहा श्वेताम्बर स्थानक वासियों के भी घर हों तो वहा चलना ठीक है। किसी जैन श्रावक से पूछने पर विदित हुआ कि वहा श्रावकों के घर हैं। तब महाराज श्री विहार कर नाथद्वारे पधारे। बाजार में पहुचे तो सब श्रावकों ने अपनी २ दुकान पर खड़े हो होकर आपको वन्दना की। महाराज श्री ने पूछा कि निवास स्थान कहां है तब उत्तर मिला कि द्वारकाधीश की सदूग पर। तब महाराज श्री वहाँ जाकर ठहरे और दूसरे दिन प्रातः काल से व्याख्यान शुरू किया। वहा आरम्भ में केवल जैन सम्प्रदाय के मनुष्य आते थे। व्याख्यान स्थल भी

बीच बाजार में नहीं था। इन सब कारणों से श्रोताओं की उपस्थिति में वृद्धि नहीं हुई। इतना अवश्य था कि साम्प्रदायिक लोग व्याख्यान सुन २ कर लट्टू हो जाते थे। व्याख्यान का स्थान शहर के एक कोने में था जिससे अधिक लोग लाभ नहीं ले सके थे अत: वह आपको ठीक नहीं जचा। तब एक दिन आपने श्रोताओं से कहा कि व्याख्यान बाजार में होना चाहिये ताकि और २ लोगों को भी लाभ हो। इस पर लोगों ने कहा कि —महात्मन्! बाजार का नाम न लीजिये यह तो विष्णुपुरी है। यहा प्रथम तो अजैन लोग आयेंगे नहीं और यदि आगये और कोई कुछ प्रश्न कर बैठा तो आप क्या उत्तर देंगे। आपको दीक्षा लिये हुए थोड़ा ही समय हुआ है। इस लिये यहीं पर व्याख्यान देना अच्छा है इस पर महाराज श्री ने बेधड़क होकर उन से कहा कि —श्रावको! हम अलग विचरने को आये हैं तो गुरु महाराज की कृपा से किसी के भरोसे नहीं। तुम को इन बातो से क्या प्रयोजन? हम सब कुछ विचार कर व्याख्यान देंगे और जो व्यक्ति जैसा प्रश्न या शङ्का करेगा उसको उसी के अनुसार उत्तर देंगे और उसका समाधान करेंगे। किन्तु इसका भी श्रावकों के हृदय में कुछ प्रभाव न हुआ। उदयपुर निवासी राजमलजी ताकरिया ने महाराजश्री से प्रार्थना की मैं अच्छा व्याख्यान स्थल बताता हूं। महाराज श्री ने फरमाया कि बतलाओ, और वहा बैठकर व्याख्यान सुनो। तब राजमल जी ने लिलिया कुण्ड की जगह बतलाई। महाराज श्री भी पुट्ठा* लेकर लिलिया कुण्डकी पेड़ी पर जा विराजे। और सन्मुख ही राजमल जी व्याख्यान सुनने को बैठ गये। व्याख्यान आरम्भ होने पर श्रावकों को विदित

---

* शास्त्रादि व्याख्यान की सामग्री।

इन्हीं का व्याख्यान हो तो अति उत्तम । सबने मिलकर आप से प्रार्थना की। जिसे आपने सहर्ष स्वीकार कर लिया। व्याख्यान आरम्भ हुआ। श्रोताओं की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ने लगी। रात्रि में भी व्याख्यान देना शुरू कर दिया। श्रोताओं से सारा बाजार ठसाठस भर जाता था। और लोग बड़े ध्यान से आप का उपदेशामृत पान करते थे। उस मार्ग से होकर ठाकुर जी का विमान जाया करता था। एक दिन जब कि विमान आया तो श्रोताओं के कारण वहां विमान निकल जाने तक को जगह नहीं मिली। सारा रास्ता रुका हुआ था। इस कारण लोग विमान को दूसरे रास्ते से घुमाकर लेगये। धार्म्मिक ऐक्यता और मेल का यह भी एक प्रमाण है। और उसका श्रेय हमारे चरित नायक जी को ही है इसके पश्चात् महाराज श्री वहा से विहार कर चित्तोड होते हुए खजीत (जावरा) पधारे और वहा गुरु श्री हीरालाल जी महाराज का दर्शन लाभ किया। वहा गुरु देव की सेवा में तपस्वी हजारीमल जी महाराज छाछ के आधार से तपस्या कर रहे थे। उसका पारणा* भी यहीं हुआ और गुरु श्री ने कस्तूरा बाई को सम्वत् १९६० की वैशाख सुदि ८ के दिन दीक्षा भी दी। इसके पश्चात् चौथमल जी महाराज गुरुदेव के साथ वहा से विहार कर जावरे पधारे। वहा नाथ द्वारे का श्री सघ महाराज श्री के चतुर्मास के लिये फिर प्रार्थना लेकर आया। यह देख कर जावरा के श्री सघ को बडा आश्चर्य हुआ रतलाम निवासी तत्वज्ञ श्रीमान सेठ अमीरचन्द जी साहब पीतलिये ने पूछा कि महाराज क्या नाथ द्वारे

---

* पालना। उपवास के अनंतर भोजन करना।

में भी जैनियों के घर हैं? इस पर नाथ द्वारा श्री सघ ने उत्तर दिया कि हा हैं तो सही परन्तु थोडे।

महाराज चौथमल जी के लिये तो हमारा इसी लिये आग्रह है कि नाथ द्वार के जैन, अजैन, हिन्दू मुसलमान सब उत्सुकता से महाराज के पधारने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यहा तक कि श्रीनाथ जी के भक्ततक महाराज श्री को हृदय से चाह रहे हैं। इस पर अमीरचन्द जी ने कहा कि "यदि ऐसा है तो महाराज श्री का चतुर्मास यहा जरूर कराना चाहिये' अस्तु आपने नाथ द्वारा श्री सघ की प्रार्थना स्वीकार की और यहा से साधुओं सहित विहार कर रतलाम पधारे। उस समय यहा कतिपय साम्प्रदायिक मुनि विराजे हुए थे। उन्हों ने आप से व्याख्यान के लिये कहा तो आपने व्याख्यान दिया। एक घण्टे तक शास्त्र जी बाचे। उसके पश्चात् अमरचन्द जी श्रावक जी ने प्रार्थना की कि 'महाराज अब कुछ ऐसे उपदेशात्मक चुटकले फरमाइये जिन से मनो रजन भी हो। इस पर आपने सर्व साधारण के समझने योग्य कुछ रुचि कर उपदेश सुनाया। फिर यहा से विहार कर जावरे पधारे। यहा से सम्वत् १९६० का चतुर्मास नाथ द्वारे करने के लिये तीन साधुओं सहित विहार किया। मार्ग में कई प्रकार के उपकार कराते हुए यथा समय श्री नाथ द्वारे पहुचे।

सैकड़ों स्त्री पुरुष स्वागत के लिये नगर से बाहर आये और आपके शुभागमन पर बडा हर्ष प्रकट किया। इस प्रकार वीर जयध्वनि के साथ आप का नगर में पदार्पण हुआ। और उसी द्वारिकाधीश की पट्ट पर निवास किया। इस चतुर्मास

कारण बडा आनन्द आयगा। इस पर महाराज श्री ने उत्तर दिया कि गुरुवर की आज्ञा लेना आवश्यक है। इस पर तपस्वी जी ने कहा कि मैं नये शहर में तुम्हारी प्रतिक्षा करूगा वहा पर तुम आज्ञा लेकर आ जाना। तदनुसार आप वहा से विहार कर उदयपुर पधारे। वहा भी व्याख्यान होने लगे और सदा की भाति वहा भी सब सम्प्रदाय के लोग बडी सख्या म इकट्ठे होने लगे। राज्य कर्मचारी भी आते थे। सुप्रसिद्ध कोठारी बलवन्तसिंह जी जागीरदार तथा भूतपूर्व दीवान उदयपुर स्टेट भी प्रेमपूर्वक व्याख्यान लाभ लेते थे। वहा खूब धर्म वृद्धि हुई। रतनलाल जी महता आदि चार श्रावकों ने यावज्जीवन हमेशा चार २ सामयिक * करने की महाराज श्री से प्रतिज्ञा की इसी प्रकार की ओर भी धर्म वृद्धि हुई। तत्पश्चात् महाराज श्री वहा से विहार कर बडे गाव पधारे। वहा के कृषिको ने आपके उपदेश से जीव हिंसा का परित्याग किया। वहा से लौटकर उदयपुर भिण्डर होते हुए कानोड पधारे। कानोड से डूगरे पधारे वहा भी कई त्याग हुए। एक दिन महाराज श्री विराजे हुए थे कि प्रतापमल जी डग की दूकान पर बैठे हुए एक लडके की ओर आप की दृष्टि गई। आप ने अनुमान किया कि यह लडका स्वतन्त्र और निराश्रित है। दीक्षा के लिये उपयुक्त दिखता है। यह सोचकर आपने उसको बुलवाया और पूछा कि तुम कौन हो? इस पर उसने उत्तर दिया कि मेरा नाम शकर है। जाति का राजपूत हू। पहिले धरियावद रहता था। माता पिता कोई न होने और

* ४८ मिनिट तक सासारिक विचारों को छोड कर एकाग्र चित्त से ईश्वर की वन्दना करने को सामयिक कहते हैं।

राजकीय अनबन के कारण में यहा प्रतापमल जी के यहा आकर रहने लगा हूँ। यह सुनकर महाराज श्री ने फरमाया कि तुम भी हमारे जैसे साधु बन जाओ केवल अन्न वस्त्र के लिये क्या व्यर्थ में अपना अमूल्य मनुष्य जीवन खोते हो? इस पर शङ्करलाल ने कहा कि —"हो, महाराज आप जैसा साधु बन जाऊ।" इतने ही में यहा के श्रावक लोग आये और शङ्करलाल को दीक्षा देने के लिये प्रार्थना की। इस पर महाराज श्री ने उत्तर दिया कि मेरे ध्यान में तो ठीक २ आगई। यदि श्री सघ दीक्षा दिलावे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। निदान दीक्षा देना तय होगया। शङ्करलाल ने आज्ञा के लिये अपने जाति वालो को अपने कान की सोने की मुरकियें दे दीं। उन्होंने भी उसको दीक्षा दिलाने में अपनी अनुमति प्रगट की। उसी रोजबिनोरे पिठाय गये और दूसरे रोज अर्थात वैशाख सुदि ८ सम्वत् १९६? को दीक्षा होगई। यहा से महाराज श्री चार साधुओं सहित विहार कर कानोड पधारे। यहा आहार पानी किया। पश्चात् विचार आया कि नयेशिष्य शङ्करलाल को कभी ऐसा तीक्ष्ण पीना पीने का मोका नहीं आया होगा और यहा इसको दीक्षा लेते ही पीना पड़ा जिसे इसने खुशी होकर पिया, इससे मालूम होता है कि इसके उच्च भाव हैं। फिर परीक्षा के लिये आपने शङ्करलाल जी महाराज से पूछा कि "कहो, धोवण* (जल) कैसा है?" इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि —"बहुत ही अच्छा है, साधा के कोई-स्वाद" फिर विहार करआप बडी सादडी और नीमच मन्द-

*दाख, बादाम, पिस्ते चावल आदि के धुले हुए जल को कहते हैं।

कारण बडा आनन्द आयगा। इस पर महाराज श्री ने उत्तर दिया कि गुरुवर की आज्ञा लेना आवश्यक है। इस पर तपस्वी जी ने कहा कि मैं नये शहर में तुम्हारी प्रतिक्षा करूंगा वहा पर तुम आज्ञा लेकर आ जाना। तदनुसार आप वहा से विहार कर उदयपुर पधारे। वहा भी व्याख्यान होने लगे और सदा की भाति वहा भी सब सम्प्रदाय के लोग बडी संख्या में इकट्ठे होने लगे। राज्य कर्मचारी भी आते थे। सुप्रसिद्ध कोठारी बलवन्तसिंह जी जागीरदार तथा भूतपूर्व दीवान उदयपुर स्टेट भी प्रेमपूर्वक व्याख्यान लाभ लेते थे। वहा खूब धर्म वृद्धि हुई। रतनलाल जी महता आदि चार श्रावकों ने यावज्जीवन हमेशा चार २ सामयिक * करने की महाराज श्री से प्रतिज्ञा की इसी प्रकार की और भी धर्म वृद्धि हुई। तत्पश्चात् महाराज श्री वहा से विहार कर बडे गाव पधारे। वहा के कृषिको ने आपके उपदेश से जीव हिंसा का परित्याग किया। वहा से लौटकर उदयपुर भिण्डर होते हुए कानोड पधारे। कानोड से डूंगरे पधारे वहा भी कई त्याग हुए। एक दिन महाराज श्री विराजे हुए थे कि प्रतापमल जी डंग की दूकान पर बैठे हुए एक लडके की ओर आप की दृष्टि गई। आप ने अनुमान किया कि यह लडका स्वतन्त्र और निराश्रित है। दीक्षा के लिये उपयुक्त दिखता है। यह सोचकर आपने उसको बुलवाया और पूछा कि तुम कौन हो? इस पर उसने उत्तर दिया कि मेरा नाम शंकर है। जाति का राजपूत हूं। पहिले धरियावद रहता था। माता पिता कोई न होने और

* ४८ मिनिट तक सांसारिक विचारों को छोड कर एकाग्र चित्त से ईश्वर की वन्दना करने को सामयिक कहते हैं।

राजकीय अनवन के कारण मैं यहा पूतापमल जी के यहा आकर रहने लगा हूँ। यह सुनकर महाराज श्री ने फरमाया कि तुम भी हमारे जैसे साधु बन जाओ केवल अन्न वस्त्र के लिये क्यो व्यर्थ में अपना अमूल्य मनुष्य जीवन खोते हो ? इस पर शङ्करलाल ने कहा कि —"हो, महाराज आप जैसा साधु बन जाऊ।" इतने ही म यहा के श्रावक लोग आये और शङ्करलाल को दीक्षा देने के लिये पूर्थना की। इस पर महाराज श्री ने उत्तर दिया कि मेरे ध्यान म तो ठीक २ आगई। यदि श्री सघ दीक्षा दिलावे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। निदान दीक्षा देना तय होगया। शङ्करलाल ने आज्ञा के लिये अपने जाति वालो को अपने कान की सोने की मुरकियें दे दीं। उन्होंने भी उसको दीक्षा दिलाने में अपनी अनुमति पूगट की। उसी रोजबिनोरे पिठाये गये और दूसरे रोज अर्थात वैशाख सुदि ८ सम्वत् १९६१ को दीक्षा होगई। वहा से महाराज श्री चार साधुओं सहित विहार कर कानोड पधारे। वहा आहार पानी किया। पश्चात् विचार आया कि नयेशिष्य शङ्करलाल को कभी ऐसा तीक्ष्ण पीना पीने का मोका नहीं आया होगा और यहा इसको दीक्षा लेते ही पोना पड़ा जिसे इसने खुशी होकर पिया, इससे मालूम होता है कि इसके उच्च भाव हैं। फिर परीक्षा के लिये आपने शङ्करलाल जी महाराज से पूछा कि "कहो, धोवण* (जल) कैसा है ?" इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि —"बहुत ही अच्छा है, साधा के कोई-स्वाद" फिर विहार करआप बडी सादडी और नीमच मन्द-

*दाख, बादाम, [illegible] धुले हुए जल को कहते हैं।

सार होकर जावरे पधारे। इन सब स्थानों में अच्छा उपकार हुआ। जावरे में आपने अपनी माता आर्याजी केशर जी के नेश्राय में डूगरेवाली बाई को दीक्षा दी। वहा से गुरुवर ने आप को खाचरोद जाने की आज्ञा दी। क्योंकि देव जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक नहीं था अत महाराज श्री तीन साधुओं सहित विहार कर खाचरोद पधारे। सम्वत् १९६१ का चतुर्मास खाचरोद ही हुआ। वहा के चतुर्मास मे प्रशसनीय धर्म ध्यान हुआ।





र्म प्रेमी श्रीमान सेठ मुकनमलजी यालियाके सुपुत्र
हस्तिमलजी मोहनलालजी पाली. (मारवाड)

प्रकरण १५ वा।

सम्वत् १९६७।

रतलाम

माताजी का संथारा और देहांत

खाचरोद का चतुर्मास शान्तिपूर्वक हुआ ही था कि रतलाम से प्रतापमल जी महाराज की अस्वस्थता का समाचार आ गया। तब आपने लक्ष्मीचन्द जी महाराज दो साधू सहित भेजे। परन्तु वे नव दीक्षित थे। इस कारण पीछे से आप स्वयम् भी पधारे। आखिर प्रतापमल जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक नहीं हुआ और वे देवलोक होगये। वहां से आपने विहार करने का विचार किया। आपकी माता जी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। अतः उन्होंने आपसे कहा कि मेरा जीवन थोड़े ही दिनों में अशेष होने वाला है अतः आप आसपास ही विचरना ताकि समय पर मुझे आपके द्वारा कुछ ऐसा उपदेश मिल सके जिससे परलोक में मेरा हित सम्भव हो। इस पर आप "जो आज्ञा" कह कर रतलाम के निकटवर्ती स्थान धामणोद होते हुए सलाने पधारे। पीछे से माताजी की तबियत कुछ ठीक होने लगी औरसैलाने में ही उनके स्वास्थ्य समाचार मिले तो आप कुछ निश्चिन्त से होकर नीमच पधार गये। जहाँ नन्दलाल जी महाराज आदि विराजते थे। वहाँ

रतलाम श्री सङ्घ की ओर से श्रीमान तेजा जी साहिब आदि श्रावक चतुर्मास की विनती के लिए आए उन्हें उत्तर मिला कि सब सन्तो का सङ्गठन रामपुरे होगा अत. चतुर्मास का भी वहीं निर्णय हो सकेगा फिर वहा से महाराज श्री विहार कर रामपुरे पधारे। वहा सब मुनिवरों का सङ्गठन हुआ। रतलाम श्रीसङ्घ चतुर्मास की प्रार्थना के लिए रामपुरे आया। उसने वडे आग्रह से चतुर्मास के लिए अनुनय विनय की जो स्वीकार हुई। कुछ दिन पश्चात् अमावस्या के दिन महाराज श्री को एक रात्रि के पिछले पहर में स्वप्न आया। मानों माताजी सम्मुख खडी हैं और कह रही हैं कि मुझे वडा कष्ट हो गया था तब मैंने सन्थारा किया और अब देवलोक होगई हूँ। वास्तव में माता जी का चतुर्दशी को देहान्त हो चुका था। अस्तु', महाराज श्री निद्रावस्था में इससे अधिक और कुछ न पूछ सके, इतने ही म नींद खुल गई और प्रात काल हो गया। गुरुवर से स्वप्न का वृत्तान्त कहा। गुरु जवाहरलाल जी महाराज आदि विचार कर ही रहे थे कि इतने ही में एकम को रतलाम से माता जी के सथारे का पत्र आया। वृद्ध मुनिवर (जवाहरलाल जी महाराज) बोले कि— निकट होते तो हम भी चलते परन्तु वहुत दूर है, हमसे जल्दी चला नहीं जाता। तब महाराज श्री वहां से विहार करते हुए जावरे के पास कलारे पधारे।

वहा आपको विदित हुआ कि माता जी देवलोक होगई सुनकर पश्चात्ताप हुआ कि माता जी ने मुझसे आस पास ही विचरने को कहा था किन्तु मैं दूर चला गया। यदि म वहीं होता तो उन्हें अन्तिम समय पर कुछ ज्ञान चर्चा सुनाता

खैर ! जो कुछ हुआ सो ठीक। मोह से कर्म बधते हैं ऐसा विचार कर यहां से वापिस लौटते थे कि इतने ही में जावरा श्री सङ्घ वहां आकर आपको जावरे ले गया। अहा ! मातृप्रेम भी संसार में कैसी अद्भुत वस्तु है। जिसका यथार्थ रूप से वर्णन करना मनुष्य की शक्ति से बाहर है। संसार में परमात्मा ने मनुष्य मात्र को जितने सद्गुण दिए हैं, उनमें मातृ भक्ति एक असाधारण और अलौकिक है। अन्यथा क्या यह सम्भव था कि सांसारिक ममता से वैराग्य रखने वाले निर्गुणब्रह्म के ज्ञाता, अहंकारादि से पराँगमुख और काम, क्रोध, लोभ, मोह के परित्यागी सच्चे साधु मुनि महाराज मृत्यु के अनन्तर पञ्च तत्त्वों में विभक्त और मृत्तिका के रूप में परिणत मानुषिक शरीर पर शोक प्रकट करते हैं ? किन्तु, यह संसार में जन्म ग्रहण करने के कारण जीव के उस स्वाभाविक मातृ प्रेम का एक प्रमाण है कि जिससे जगत की तुच्छ से तुच्छ जातियाँ और पशु पक्षी आदि भी शून्य नहीं हैं। अस्तु ! जावरे जाकर आपने माता जी के सँथारे का हाल सुना कि एक दो दिन तो आपका स्मरण करती रहीं फिर कहने लगीं कि किसका पुत्र है ? अपना तो शरीर तक नहीं है। फिर मोह ममत्व किस लिए किया जाय। इस पर रतलाम श्री सङ्घ उनको देख कर बोला कि इनकी अवस्था तो ठीक है, फिर संथारा क्यों कराया जाय ? एक साध्वी ने कहा कि मैंने इन्हें तेविहार कराया है। इस पर माताजी बोलीं कि नहीं, मैंने तो चौविहार किया है। यदि राज्य की ओर से तुम लोगों को कुछ भय हो तो मैं अन्यत्र चली जाऊं आदि इस प्रकार बड़ी दृढ़ता के साथ आपने शरीर छोड़ा इस प्रकार माता जी का कथन सुन कर महाराजश्री कहने लगे कि मेरी

यही भावना है कि उस आत्मा को शीघ्र मोक्ष मिले।

इसके पश्चात् सम्वत् १९६२ के चतुर्मास के लिये आप रतलाम पधारे। सैकड़ों नर नारी आप के स्वागत के लिये नगर से बाहर उपस्थित थे। उस समय का दृश्य देखने योग्य था। श्रावकों में उस समय बड़ी एकता थी। अत धर्म ध्यान त्याग प्रत्याख्यान अच्छा हुआ, सो क्षमापन्ना में यथा समय प्रकाशित हो चुका है। इस चतुर्मास में बम्बई निवासी वाडीलाल मोतीलाल शाह आपके दर्शनार्थ रतलाम आये। उन्होंने कभी भी उपवास नहीं किया था। किंतु महाराज श्री के उपदेश से उन्होंने व्रत किया। और पोषध* बम्बई जाकर किया। रतलाम श्री सघ ने इस चतुर्मास में आपकी बड़ी भक्ति और उत्साह से सेवा की। फिर जब वहा प्लेग शुरू हो गया ओर उसका ज़ोर बढ़ने लगा तो श्री सघ ने महाराज श्री से प्रार्थना की कि सब श्रावकगण जा रहे हैं आप यहां से विहार करें इस पर स्वामी भैरव ऋषि जी ने भी महाराज श्री से कहा कि पहिले आप यहा से विहार करें तब हम करेंगे क्योंकि यदि हम पहिले करेंगे तो वह लोक विरुद्ध होगा लोग कहेंगे कि लघुवय वाले चोथमल जी महाराज तो यहीं विराजमान हैं और वृद्धावस्था वाले विहार कर गये। तब महाराज श्री रतलाम से विहार कर पचेड पधारे। वहा पर महाराज श्री दोनों समय व्याख्यान देते शास्त्र बाचते। पचेड वालों को उनके भाग्य ओर पुण्योदय से ही ऐसा अवसर प्राप्त हुआ था। व्याख्यान में बहुत लोग आते थे। वहा के ठाकुर

---

* रात्रि को उपाश्रय आदि किसी एकान्त धर्मस्थान में विश्राम करना।

साहब रघुनाथसिंह जी व उनके सुयोग्य भ्राता चेनसिंह जी जेन धर्म से पहिले पहिल इसी वार महाराज श्री के द्वारा परिचित हुए। आप पर मुनि महाराज के व्याख्यान और सदुपदेशो का ऐसा प्रभाव पडा कि आप ने कतिपय जानवरो को न मारने की प्रतिज्ञा कर ली।

नोट—पूज्य श्रीलाल जी महाराज के जीवन चरित्र में जो ऐसा उल्लेख है कि "आप ने सवत् १९६२ का चतुमास रतलाम किया" सो ऐसा नहीं है। उस वर्ष उनका चतुमास जोनपुर में था। सवत् १९६२ में तो हमारे चरित नायक जी का ही चतुमास रतलाम में हुवा है।

अस्तु। पचेड के ठाकुर साहब का परिचय जेन, साधु से प्रथम वार महाराज श्री से ही हुआ था और आप ही के उपदेशामृत का उन पर ऐसा प्रभाव पडा। तब से उनकी जेन धर्म और जेन साधुओं में बडी श्रद्धा हो गई।

इस प्रकार उस वर्ष के चतुर्मास में रतलाम में ओर भी अगणित त्याग प्रत्याख्यान हुए। वहा से नीमच, जावद और कणॅरे होते हुए वेगम पधारे। इन सब स्थानों पर भी खूब धर्म प्रचार और त्याग प्रत्याख्यान हुआ। अनेक मासाहारियों ने मास परित्याग किया। मदिरा छोडी ओर धर्म से स्नेह जोडा। फिर वहा से विहार कर कुछ श्रावको के साथ माडल गढ पधारते थे कि मार्ग में उधर से आने वाले लोगो ने आप से कहा कि आप इधर से न पधारिये क्योंकि आगे की भाडियों में कुछ मनुष्य बन्दूकें ले लेकर वेठे हैं। तब श्रावको ने कहा कि सत्य है। यह मार्ग ऐसा ही है कि दिन दहाडे लोग लुट जाते हैं। महाराज श्री ने फरमाया कि भय तुमको

है, और भय की वस्तु भी तुम्हारे ही पास है। हमने तो जब से दीक्षा ली तभी से चौकीदार (ब्रह्मचर्य) हमारे साथ है इतना कहने पर भी वे श्रावक तो गाव में चौकीदार को लेने गये। किन्तु,इधर महाराजश्री निर्भय होकर उसी मार्ग से माडलगढ पधार गये पीछे से श्रावक लोग भी आये वहा बहुत कम निवास हुआ किन्तु उस अत्यल्प समय में ही अच्छा धर्म प्रचार हुआ। फिर वहाँ से विहार कर पुन बेगम पधारे। यहा यह सूचना मिली कि प्रवर्तिनी रत्नाजी ने जो आपकी ससार पक्ष की मासी जी और धार्मिक पक्ष की साध्वी थी संथारा किया है अत आप यहा से विहार कर शीघ्र गति सेके साथ सर वाणिये, नीमच, मल्हारगढ मन्दसौर होते हुए जावरे पधारे। वहा ऐसा सवाद मिला कि आपकी मासी जी आर्य्या-जी देव लोक हो गई तब आप रतलाम न जा कर मन्दसौर होते हुए मल्हारगढ पधारे। वहा साधु लोग कम ठहरा करते थे इस कारण आप से वहा की जनता ने कुछ ठहरनेका आग्रह किया। तब महाराज श्री कुछ दिन वहा ठहरे और उपदेश किया। इसके पश्चात् नारायणगढ पधारे वहाँ बाजार में कई व्याख्यान हुए। उन दिनों वहा मंदिरमार्गी श्वेताम्बर आम्नाय के अमीविजयजी साधु थे उनसे वार्तालाप हुआ। वहा से महाराज श्री जावद पधारे जहा पूज्य श्रीलालजी महाराज विराजते थे। और साथ में मुनिवर थे। यहा पर आपको सवाद मिला कि कफेडे में एक भाई दीक्षा लेने वाला है। इस पर सब ने विचार किया कि उसको भावोत्तेजना के लिये किसको वहा भेजा जाय। पूज्य श्री ने महाराज श्री को आज्ञा दी कि तुम जावो और इस कार्य को करो। तब आपने पूज्य श्री से विनय का कि मुझ से कैसे होगा—

आर क्या होगा। इस पर पूज्य श्री ने अपने मुखारविंद से फरमाया कि जाओ तुम्हारे तो जंगल में मगल हो जाता है, और दूसरी बात यह कि मैं तुम्हारा चतुर्मास कानोड का स्वीकार कर आया हूँ। वहा वालोने मेरे और तुम्हारे लिये—बहुत आग्रह किया है। इस कारण अपने दोनों में से किसी एक को चतुर्मास अवश्य करना चाहिये। आज्ञा पाकर महाराज श्री कम्भेडा पधारे वहा उपदेश द्वारा उस वैरागी को उत्तेजित कर महाराज श्री भाटखेडी पधारे और फिर वहा से मणासे। अस्वस्थ थे किंतु उस अवस्था में भी वहाँ अपनी मधुर वाणी से आपने सब को प्रफुल्लित किया। ऐसे आदर्श महात्मा के उपदेश का किस पर प्रभाव नहीं पडता जो रुग्णावस्था और विवशता के समय भी परोपकार और समाजोन्नति के लक्ष्य को हृदय में रक्खे। अस्तु वहा के निवासी कजौडीमल जी बोहथरे को भी आपके उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया स्त्री पुत्र तथा धन सम्पत्ति सब को छोड़कर उन्होंने दीक्षा लेने की प्रतिज्ञा प्रकट की और इस के लिये प्रार्थना की तो महाराज श्री ने फरमाया कि जब तुम्हारा यही विचार है तो क्षण मात्र का भी प्रमाद मत करो और अपनी इच्छा को शीघ्र पूर्ण करो। इतना फरमाकर आप वहाँ से विहार कर नीमच पधार गये। और नीमच से छोटी बडी सादडी होकर सम्वत् १९६३ के चतुर्मास के लिये कानोडे पधारे।

प्रकरण १६ वां -

सवत् १९६२

शान्त प्रकृति कानोड़

इस चतुर्मास मे यहां दया पौषध तथा स्कन्ध* आदि बहुत हुए। रात्रिके समय महाराज श्री ने अन्यान्य उपदेशो के साथ रुक्मिणी कार्इतिहास फरमाया। एक दिन ठाकुर जी का विमान उसी मार्ग से निकला और लोग उसे रोकने लगे तब महाराज श्री ने कहा कि —" भाइयो ! झगड़ा न करो। यह रास्ता आम है।" किन्तु, फिरभी लोगो को अज्ञानता वश जोश आगया और उन्होंने विमान को रोक दिया। इस पर महाराज श्री ने अपना उपदेश बन्द कर दिया इस पर से प्रत्यक्ष है कि आपकी प्रकृति कितनी शान्त है। आपके जीवन में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जिनसे आपकी शात प्रकृति के प्रमाण प्रत्यक्ष न मिलते हों। कानोड से चतुर्मास के पश्चात् विहार कर आप धर्म प्रचार करते हुए जावरे पधारे। मार्ग के सब स्थानों में अच्छा उपकार हुआ।

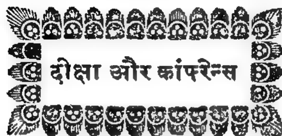
स्कन्ध चार प्रकार के होते हैं यथा =

१ पहिला स्कन्ध—रात्रि भोजन न करना।
२ दूसरा स्कन्ध—सब्जी हरी साग का त्याग।
३ तीसरा स्कन्ध—कच्चे जल का त्याग।
४ चौथा स्कन्ध—ब्रह्मचर्य्य से रहना।

प्रकरण १७ वां ।

सम्वत् १९६४

जावरा ।



स० १९६४ का चतुर्मास आपने जावरे किया यहा भी खूब उपकार हुआ चतुर्मास में ही मणासे से वेरागी कजोडीमल जी वहाँ आगये थे। इनके परिवार में इनके बडे भाई, उनका पुत्र तथा पत्नी मौजूद थीं। जब उन्होंने दीक्षा की आज्ञा के लिए सब से स्वीकृति मागी और वह न मिली तो वह जावरे आगये। और साधु वेष धारण कर लिया चतुर्मास की समाप्ति पर महाराज श्री उनको अपने साथ लेकर उनके ससुराल निम्बाहेडे में गए और वहा वालों को समझाया। साथ ही उनकी स्त्री को भी उपदेश देकर राजी किया। उन्होंने आज्ञापत्र लिखा दिया फिर आप वहा से विहार कर रामपुरा पधारे वहा गुरुवर के दर्शन लाभ कर उनके साथ डग, वडौद, सारंगपुर, सीहोर की छावनी, भूपाल, आष्टा काष्टा होते हुए देवास पधारे। इन सब स्थानों में भी अच्छा धर्म्म प्रचार और उपकार हुआ। देवास में रतलाम के श्रीमान् अमरचन्द जी पीतलिये की ओर से निमन्त्रण मिला कि यहा

'पर कान्फ्रेन्स होने वाली है। अत कृपा कर अवश्य पधारें तब महाराज श्री वहा से विहार कर उज्जैन पधारे और बाजार में पब्लिक व्याख्यान दिया आपको हमेशा से बन्द मकान में व्याख्यान देना पसन्द नहीं है, अत प्राय बाजार में ही व्याख्यान दिया करते हैं और तभी सर्व साधारण को लाभ भी होता है। अस्तु। यथासमय आप रतलाम पधारे, वहा और भी कई सत विराजमान थे। बाहर से भी हजारों लोग आये हुये थे। व्याख्यान सरकारी स्कूल में होना निश्चित हुआ। चेत सुदी ११ और १२ को महाराज श्री के व्याख्यान हुए। लोगो की भीड अपार थी, इस व्याख्यान में मोरवी (गुजरात) नरेश भी सम्मिलित हुए थे। सर्वसाधारण ने तो व्याख्यान की भूरि २ प्रशसा की ही। परन्तु, कान्फ्रेन्स के जन्मदाता महाशय श्रीमान् अम्बावीदास जी दोषाणी ने भी उठकर व्याख्यान की समाप्ति पर अपना सक्षिप्त वक्तव्य दिया, जिसमें सबको यह प्रेरणा की गई थी कि कान्फ्रेन्स का उद्देश और साराश सब महाराज श्री के व्याख्यान में आ गया है। हम सब को आपके उद्देश के अनुसार कार्य करना चाहिये। आदि ---



प्रकरण १८ वां

सम्वत् १९६५ मन्दसौर।

सार्वजनिक व्याख्यान

हमारे चरित नायक रतलाम से विहार कर सेलाने पधारे वहां आप से लोगों ने प्रार्थना की, कि यदि अभी रात्रि को ही व्याख्यान देंगे तो हमें सहज में ही सुनने का सौभाग्य प्राप्त होगा। इस प्रार्थना को स्वीकार कर आपने उसी रात्रि को व्याख्यान दिया। प्रात काल वहां से विहार कर जावरे होते हुए मन्दसौर पधारे। और सम्वत् १९६५ का चतुर्मास भी वहीं किया, खूब धर्म वृद्धि हुई। इसी चतुर्मास में बीसे ओसवाल मन्दलाल जी को दीक्षा हुई। और शान्ति पूर्वक चतुर्मास समाप्त हुआ



प्रकरण १९ वां।

सम्वत १९६६ उदयपुर।



इसके पश्चात् आपने वहा से विहार किया। नीमच निम्बाहेड़ा होते हुए उदयपुर पधारे। इन सब गावो में अच्छा उपकार हुआ और उदयपुर में भी आपके व्याख्यान होने लगे। आपकी पीयूष वाणी से श्रोताओं की उपस्थिति दिन प्रतिदिन अधिकाधिक होने लगी। यहा तक कि कई जागीरदार और राज्य कर्मचारी भी उपदेश श्रवण करने को आने लगे। और हिन्दवा सूर्य्य महाराणा श्री फतहसिंह जी साहब बहादुर के दीवान और खास सलाहकार श्रीमान् कोठारी बलवन्त सिंह जी साहब ने भी महाराज श्री की अच्छी सेवा भक्ति की फिर वहा से विहार कर गन्दलाल जी महाराज के साथ नाई पधारे। वहा ३—४ हजार भीलो के अग्रमुखी भीलो ने आप का व्याख्यान सुना, इससे इन लोगो के हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा, और कुछ दया का भी सञ्चार हुआ। उन लोगो ने महा राज श्री से प्रार्थना की कि यदि हम लोगो से हिंसा कराने का प्रण करावें तो फिर यहां के महाजनों को कमी वेशी तोलने की शपथ दिलावें। इसी के अनुसार महाजनो को एकत्रित कर उनको सौगन्ध दिलवाई गई। और भीलो ने अपने सकल्प के

अनुसार हिंसा न करने की प्रतिज्ञा की। इस जाति के हृदय में यह हिंसा न करने का भाव जो पैदा हुआ है, वह महाराज श्री के व्याख्यान का ही प्रभाव है। भीलो ने निम्नलिखित और भी प्रतिज्ञाएं कीं —

(१) वन में दावाग्नि नहीं लगाएंगे।

(२) मनुष्य को किसी प्रकार से पीडित नहीं करेंगे।

(३) व्याह शादियों के मौके पर मामा की ओर से जो भैंसे, बकरे आदि आते हैं—वे मारे जाते हैं किंतु आज से हम कभी भी ऐसा नहीं होने देंगे। और उन आने वाले पशुओं को अमरिये (अमर) कर दिया करेंगे।

ये जो प्रतिज्ञाएं हमने आप के सन्मुख की हैं–इन्हें हम लोग हमेशा निभाते रहेंगे। इसी प्रकार भीलो की इस की गई पृतिज्ञा से वहां जैन अजैन सभी को बडी पृसन्नता हुई। और वे लोग चरित्र नायक की भूरि २ प्रशंसा करने लगे। और प्रार्थना की कि यह जो कुछ उपकार हुआ है, आप ही के अमृतमय उपदेश और कृपा का फल है। इस से हम लोगो को बहुत कुछ सन्तोष हुआ है। बल्कि ऐसा उपकार तो कहीं भी न हुआ होगा। यह कहना भी कुछ अत्युक्ति नहीं है। हमारी आत्माएं तो इससे सन्तुष्ट हैं ही, किंतु बलिदान होनेवाले जीव भी आप का गुणगान करेंगे। एक दिन जब कि आप वहां से विहार कर रहे थे उदयपुर के भूतपूर्व दीवान कोठारी श्री० बलवन्तसिंह जी महाराज श्री के दर्शनो को पधारे। कुछ देर उनसे धार्मिक चर्चा हुई। फिर वहां से विहार कर बडे गांव (गोगूदे) पधारे। राव जी

साहिब श्रीयुत पृथ्वी सिंह जी व उनके पौत्र श्रीयुत दलपत-सिंह जी ने व्याख्यान में योग दिया। और आप की अच्छी सेवा भक्ति की। इस व्याख्यान के प्रभाव से राव जी साहब ने प्रति वर्ष २ बकरे अमरिये (अमर) करनेकी प्रतिज्ञा की जो वहा पर प्रति वर्ष बलिदान में दिये जाते थे। इस प्रकार वहा और भी कितने ही कृषकों ने जीव हिंसा व मदिरा का त्याग किया।

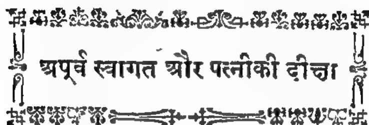
वहा से विहार कर घोडच (देलवाडे) होते हुए श्री नाथद्वारे पधारे। जैन, अजैन सब लोगो ने व्याख्यान का लाभ लिया। चरित्र नायक महोदय के आगमन से उस समय जनता में अपूर्व उत्साह था, और वे अपने को कृतार्थ मान रहे थे। फिर आप वहा से विहार कर सरदारगढ, आमेट, देवगढ होते हुए नयेशहर पधारे। और कुछ सार्वजनिक व्याख्यान दिये। जिसका जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। वहा से अजमेर पधारे।

अजमेर में उस समय जैन कान्फ्रेंस का अधिवेशन होने वाला था। उसमें योग देकर कई गावो में उपदेश देते हुए भीलवाडे पधारे। वहा ब्राह्मण, ओसवाल, माहेश्वरी, अग्रवाल, राजपूत आदि जातिके लोगो ने यहा तक कि भगी, चमारो ने भी आप का व्याख्यान बडे प्रेम से श्रवण किया, और कई जीवो के न मारने की प्रतिज्ञा की। फिर चित्तोड निम्बाहेडा होते हुए जावद पधारे। उदयपुर श्री संघ की ओर से चतु-र्मास की विनती हो हो रही थी। मुनि श्री देवीलाल जी महाराज मुनि श्री चाथमल जी महाराज दोनो मुनियो का आग्रह होने पर आप ने उदयपुर चतुर्मास की विनती स्वीकृत

की। फिर वहा से नीमच होते हुए उदयपुर पधारे। सम्वत् १९९६ का चतुर्मास वहीं किया। वहा पर दोनो मुनियो के सङ्गठन ने जनता में और भी अधिक स्फूर्ति उत्पन्न की। प्रथम श्री देवीलाल जी महाराज उपदेश देते। बाद में चरित नायक जी व्याख्यान देते, जिसे सुनकर श्रोतागणो को आप की वाक्पटुता और मधुर भाषण का बड़ा ही आनन्द आता। इस प्रकार वहा का चतुर्मास बड़े आनन्द से पूर्ण हुआ।

प्रकरण २०वां।

सम्वत् १९६७ जावरा



अपूर्व स्वागत और पत्नीकी दीक्षा

यथा समय उदयपुर से विहार कर देलवाडे, श्रीनाथद्वारे, कांकरोली, कुणज कुवेर होते हुए नाणदा पधारे। वहा के ठाकुर साहब तेजसिंह जी प्रति मास बकरे का बलिदान किया करते थे वह बन्द—करवाया और एक व्याख्यान दिया फिर आप बागोर पधारे वहा श्वेताम्बर स्थानकवासी का एक भी घर नहीं है। तेरह पन्थियो के घर हैं। वे लोग स्थानक-वासी साधुओं का उपदेश प्राय ग्रहण नहीं करते हैं। किंतु जब चरित्र नायक जी के आगमन की सूचना उन लोगो को हुई तो वे बडे प्रसन्न हुए। और बडी उत्सुकता के साथ स्वागत के लिये आये। वहा अन्यान्य जातियो के साथ माहेश्वरी व श्रावको बन्धुओं की सेवा भक्ति वास्तव में प्रशसनीय थी। अपने हृदय में उन्हें जितना प्रमोद हुआ उसे वे ही लोग जानते हैं। उन्होंने ८ रोज तक निरन्तर सेवाभक्ति करके अपने प्रेम का खासा परिचय दिया। वे लोग प्रति दिन के व्याख्यान में स्त्रियो सहित उपस्थित होते थे। इसके अतिरिक्त ब्राह्मण, क्षत्री, शुद्र आदि सभी जातियो के लोग आते

गया । लोग, व्याख्यान सुनते २ जोर २ से बातचीत करने लगे । तब आप को विदित हुआ कि यह वही स्त्री है जो मेरे संयम लेने में बाधक हुई थी । अब भी यह उसी अभिप्राय से आई मालूम होती है कि मैं पुनः गृहस्थाश्रम में प्रवृत्त हो जाऊं । यह सोच कर आपने वहा अधिक ठहरना उचित नहीं समझा । और मन्दसौर पधार आये । स्त्री वहा भी आगई और झगडा मचाने लगी । किन्तु श्री सघ ने उसे समझा बुझाकर वापिस प्रतापगढ भेज दी । मन्दसौर में आपने जो हृदयग्राही उपदेश दिया उसने रतनलाल जी चीसे पोर वाड के सुपुत्र छगनलाल व भिलाडे निवासी चान्दमल ओसवाल पर जिनकी आयु उस समय १४—१५ वर्ष की थी, ससार से विरक्ति का प्रभाव जमा दिया । उन लोगों ने चरित्र नायक से दीक्षा लेने का भाव भी दर्शाया । छगनलाल की माता तो पहले ही ससार से विरक्त हो चुकी थी । दोनों युवकों को बहुत समझाया किन्तु वे अपने निश्चय पर दृढ रहे और मुनि महाराज के साथ जावरे आगये क्योंकि महाराज श्री ने चतुर्मास के लिये जावरे की विनती स्वीकार करली थी ।

सम्वत् १९६७ का चतुर्मास वहीं किया । चतुर्मास के व्याख्यानों से जनता को अच्छा ज्ञान प्राप्त हुआ किसी कारण वहा एक हाथी का वध किया जाने वाला था । किन्तु, मुनि महाराज के सदुपदेश से उसको अभय दान मिला । श्रीमान् होरमजी डाक्टर एल० एम० एड० एस फिजिशयन एड सर्जन भी महाराज श्री के व्याख्यानों को सुनकर जैन धर्म के तत्वों से परिचित हुए । पचेड ठाकुर साहब श्री रघुनाथ सिंह जी व सुभ्राता श्रीचैनसिंह जी साहब चरित्र नायक जी के दर्शनार्थ

पचेड से जावरे पधारे। और दर्शन कर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की। इधर जावरे ठाकुर साहिब ने भी उपदेश सुनने का लाभ लिया। कई उपकार हुए। वैरागी छगनलाल जी चान्दमल जी को ज्ञानाभ्यास कराते रहे।

आपकी पत्नी फिर जावरे आई किंतु ताल निवासी श्रीमान् हुकमीचन्द जी की बहिन श्रीमती पेजाबाई की बेटी धूली बाई ने भी उसको बहुत समझाया। तब उसने कहा कि मुझे अपने सांसारिक आराध्यदेव के साथ एक बार बातचीत कर लेने दो फिर मैं जैसा वे कहेंगे वैसा ही करूंगी। निदान ४-५ भाई व बाई तथा कुछ साधुओंके समक्ष बैठकर चरित्रनायकजी ने उससे बातचीतकी। उसने कहा कि आपने तो मुझे छोड़कर वैराग्य ले लिया अब मैं किस के भरोसे रहूँ, और क्या करूं? इस पर मुनि महाराज ने उत्तर दिया कि तुम्हारे हमारे सांसारिक नाते तो जन्म जन्मान्तर में कई बार हो चुके। पर धार्मिक नाता नहीं हुआ, और यह दुर्लभता से ही प्राप्त होता है अत जिस प्रकार मैं साधु बन गया उसी प्रकार तुम भी साध्वी बन जाओ। क्षणिक और अस्थायी सांसारिक सुख को सर्वस्व मान कर अमूल्य मनुष्य जीवन को नहीं खोना चाहिये। संसार असार है। इसमें न कोई किसी का साथी है, और न इसमें आत्म-कल्याण ही है। जिस में मनुष्य जीवन की वास्तविक सार्थकता है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है —

" एको एव जायन्ते जन्तु एको एव प्रलायते,
एको एव अनुभुक्त, सुकृतमेव दुष्कृत "

माता, पिता, भाई, बहिन, पति, पुत्र कोई भी परलोक तो

दूर रहा पर इस लोक में भी सहायक नहीं होते। इस कारण अच्छा हो, यदि तुम भी मेरा कहना मानकर साध्वी बन जाओ।

मुनि महाराज के इस कथन का स्त्री पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वे बोलीं कि —"अच्छी बात है, मैं आपके कथन को मान लेती हू—आदर करती हू। और उस अलौकिक सुख को प्राप्त करने के लिये साध्वी बनने को सहर्ष तैयार हूँ।

अहा ! धन्य है, मुनि महाराज को कि आपके उपदेश का स्त्री पर ऐसा प्रभाव पड़ा। और साथ ही उस स्त्री को जिसने विरोधनी होकर भी मुनि महाराज के थोड़े से उपदेश को श्रवण करते ही संसार से विरक्त होने की ठान ली।

ताल निवासिनी श्रीमती पेमाबाई बड़ी दानशीला थीं उन्हीं के अनुरूप उनकी पुत्री श्रीमती धूली बाई भी बड़ी धर्मनिष्ठ हुई। साधु सन्त आपकी क्षेत्र स्पर्शना के लिये की हुई प्रार्थना पर बहुत ध्यान देते थे। उन्हीं की प्रेरणा ने हमारे चरित-नायक जी की सांसारिक पत्नी को वैराग्य में प्रवृत्त किया। अन्त में दीक्षा लेने का विचार पक्का होगया श्रीयुत् गुलाबचन्द जी दफड़िया ने दीक्षा दिलाने की तैयारी की। आपके उद्योग और सहायता से ४८ दीक्षा हुई। आप बड़े दयालु और धर्मज्ञ हैं। आपके द्वारा अनेक धार्मिक सुकृत्य हो चुके और हो रहे हैं। आप धर्म के लिये हमेशा तन, मन धन न्योछावर करने हेतु प्रस्तुत रहते हैं। और प्रत्येक साधु मुनिजन आप से सम्मति लिया करते हैं। हमारे चरित नायक जी के भी आप सच्चे सलाह कारक हैं।

श्रीयुत् पन्नालाल जी खारीवर भी धर्म के लिये हमेशा

अच्छा उद्योग करते रहते हैं। आप पूरे धर्मनिष्ठ और त
हैं। प्रत्येक धार्मिक कार्य्य में आप बड़े उत्साह और परि
से सहायता देते हैं।

जावरा श्री संघ पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज की
प्रदाय के साधुओं के साथ अपना बड़ा प्रेम प्रदर्शित करते
निदान सम्वत् १९६७ की विजया दशमी को जावरा श्री स
चरित्रनायक जी की पत्नी को बड़े समारोह के साथ द
दिलाई।

श्रीमती साध्वी जी अल्प काल में ही जैनधर्म के सिद्ध
से परिचित होगई। आपने अपने जीवन में कई उपवास,
तेले, चोले, पचोले, आदि निराहार तप किये और इस प्र
धर्म पालन करती हुई सम्वत् १९७३ की श्रावण शु० १०
परलोक सिधार गई।

जावरे का आनन्द पूर्वक चतुर्मास पूर्ण होने पर ह
चरित्रनायक जी वहां से विहार कर करजू पधारे। वहां
मान् सेठ पन्नालाल जी करजू वाले की ओर से दीक्षा
आग्रह होने पर सम्वत् १९६७ की अगहन सुदि १० को दे
युवकों को दीक्षा दी गई।



प्रकरण २१ वां,

सम्वत् १६६८ बडी सादडी

(मेवाड)

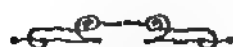
दीक्षा और धर्म वृद्धि

करजू से विहार कर कई गावों में उपदेश करते हुवे यथा समय आप बड़ी सादडी (मेवाड) पधारे सम्वत् १६६८ का चतुर्मास वहीं हुआ। धर्म की अच्छी वृद्धि हुई * उदयपुर निवासी किशनलाल ब्राह्मण जो वैराग्य भाव में थे, उन्हें १६६८ की भाद्रपद शुक्ला ५ को दीक्षा दी। फिर चतुर्मास पूर्ण होने पर आप वहां से विहार कर गुरुवर के दर्शन कर देसर, निम्बाहेडे नीमच होते हुवे सजीत पधारे इन सब गावों में धर्म का अच्छा प्रचार हुआ वहा से सीता मउ पधारे वहा पर भी पबलिक उपदेश दिया जैन जैनेतर जनता ने अच्छा योग लिया वहा से चरित्र नायक विहार कर लधूणे, भानपुर ताल आदि कई गावों में होते हुवे पचेड पधारे। और वहा से विहार कर शिवगढ पधारे।

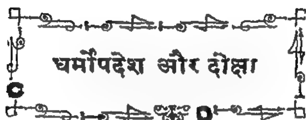
---

* चरित्रनायक का इतना हृदयग्राही और उदार उपदेश है कि जिस ब्राह्मण तक भी चरित्रनाय जी के पास दीक्षित होचुके और हो रहे हैं।

प्रकरण २२ वां



सम्वत् १९६९ रतलाम



धर्मोपदेश और दीक्षा

जब रतलाम श्री संघ को आपके शिवगढ़ पधारने की सूचना हुई तो उसकी ओर से एक डेपूटेशन आया। जिस ने रतलाम पधारने का बड़ा आग्रह किया। उनकी प्रार्थना मानकर महाराज श्री रतलाम पधारे। रतलाम निवासियो के मनोरथ सफल हुए उन्होंने अपनी प्रेम भक्ति का अच्छा परिचय दिया। उसी समय श्रीमान् सेठ अमरचन्द जी साहिब आदि श्रावकों ने मिलकर रतलाम के लिये चतुर्मास की विनती स्वीकृत करा-ली। फिर आप वहां से विहार कर धार पधारे और वहा कई व्याख्यान देकर इन्दौर। वहां बम्बई बाजार में अठारह व्याख्यान दिये। जनता को अच्छा उपदेश मिला, और उसके फल-स्वरूप खूब धर्म ध्यान की वृद्धि हुई वहा से आप विहार कर देवास होते हुये उज्जैन पधारे जहां एक सार्वजनिक व्याख्यान हुआ। उज्जैन से खाचरौद होते हुए रतलाम पधारे। सम्वत् १९६९ का चतुर्मास रतलाम ही किया। श्रीमान् अमरचन्दजो

वर्धभान जी, शास्त्रवेत्ता रूपचन्द जी, इन्द्रमल जी आदि श्रावक-गणों ने प्रेम पूर्वक भक्ति की। व्याख्यान को सुनते २ श्रोतागण चित्रित रह जाते थे। आपकी वाक् शैली बड़ी ही मनोहर और चित्ताकर्षक तथा सर्वसाधारण के समझने योग्य होती है। इसीसे लोगोंका विशेष आनन्दानुभव होता था। लोगों की इच्छा नहीं थी कि आप यहां से पधारें। किन्तु, मुनि अप्रतिबद्ध होते हैं, और चतुर्मास पूर्ण होनेपर उस स्थानमें अधिक ठहर नहीं सकते। अत उसी अवधि में कई श्रावकों को जैन तत्त्वों का रहस्य समझाया तथा श्रावक श्राविकाओं को द्वादश व्रत धारण कराये। कई उल्लेखनीय उपकार चरित नायक महोदय द्वारा हुये। यहां पर ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से सब का उल्लेख नहीं किया जा रहा है। इस चतुर्मास में चम्पालाल ताल वालों ने दीक्षा लेने की इच्छा प्रकट की। इस पर आपने उन्हें शिक्षा दी, कि इस जीवन में कई परिशहों को सहन करना होगा। संयम रखना होगा, दश यति धर्म पर विशेष लक्ष्य रखा जावेगा, आदि २। अन्त में सम्वत् १९६९ के अगहन कृष्णा ८ को रतलाम श्री संघ की ओर से बड़े समारोह के साथ चम्पालाल जी की दीक्षा हुई। रतलाम निवासी पूनमचन्द जी बोहतरे के सुपुत्र प्यारचन्द भी दीक्षा लेने को तैयार हुए। पर अपने हृदय में विचार किया कि पहिले साधु व्रत का साधना चाहिये ताकि आगे चल कर किसी प्रकार की कठिनाई न उठाना पड़े। अत प्यारचन्द आप के साथ २ मार्ग में कई प्रकार की कठिनाइयां सहन कर उदयपुर तक गये। महाराज श्री ने प्यारचन्द से कहा कि भाई! यदि तुम्हारी यही इच्छा है, तो फिर तुम अपनी सबन्धिनी दादी व भ्राता से आज्ञा पत्र लिखवा लाओ। प्यार-

चन्द ने 'जो आज्ञा' कहकर अपने गांवकी ओर प्रस्थान किया अपनी हार्दिक—इच्छा तथा मनोगत भावों को दादी पर प्रगट किया। उस समय वे धामनाेद (रतलाम) थीं। इनकी वैराग्य में इस बढ़ती हुई प्रवृत्ति को देख कर सगे सम्बन्धी विचार करने लगे। और इनको वैराग्य से च्युत करने के लिये अनेकानेक चेष्टाएं कीं। इस पर प्यार चन्द की वृत्ति गृहस्थाश्रम की ओर प्रवृत्ति हो गई। किन्तु, २ ४दिन बाद ही फिर उनकी चेष्टाएं वैराग्य में परिणित हो गईं और अपनी दादी तथा सगे सम्बन्धियों से रतलाम से कुछ क्रय-विक्रय का सामान लाने का बहाना कर चरित्र नायक जी के पास आने का दृढ़ संकल्प कर लिया। जब ये रतलाम आये, तो उस समय महाराज श्री की सेवा तक पहुंचने के लिये इनके पास आर्थिक साधन कुछ नहीं था। अतः तमाखू वाले श्रीयुत धूलचन्द जी अग्रवाल की माता ने इन्हें रेल किराया आदि अपेक्षित व्यय देकर महाराज श्री की सेवा ग्रहण करने का उपदेश दिया। हीराबाई के द्वारा अपना अभीष्ट सफल होता देख कर प्यारचन्द ने बड़ी प्रसन्नता हुई। और अब उन्हों ने महाराज की सेवा में पहुंचने के लिये प्रयान कर दिया। अब एक प्रकार से इनका मार्ग निष्कण्टक बन चुका। "इतना सब किस उदार विदुषी के द्वारा हुआ है मेरे वैराग्य पथ में कौन सहायक हुई है—मेरे जीवन को किसने वैराग्य का स्रोत बनाया है, यह विचार प्यारचन्द के हृदय में उठने लगे।" वे मन ही मन उस माता को धन्यवाद देने लगे। पाठको! क्या भाव है—कैसा त्याग है! विरक्ति का कैसा समुज्वल चित्र है!! मुनि जी के चरणारविन्दों की लौ मात्र ने प्यारचन्द के

हृदय को क्या से क्या बना दिया। और अपना मार्गावरोध होने पर किस माता के द्वारा उन्हें साहाय्य मिला, यह निष्काम सेवा का कैसा साक्षात् नमूना है। बात यह है, जैसी भी जिस की लगन होती है-ईश्वर उसे आप [redacted] सब सुविधाए दे देता है। यहा जिस प्रकार प्यारचन्द की वास्तविक प्रशसा की है, उसी प्रकार उस मातेश्वरी को भी धन्यवाद देना हम न भूलेंगे जिस की प्रेरणा से ही इन का पथ निष्कण्टक बना। इन के इस प्रकार का अधिकाश श्रेय उस माता ही को है। हीराबाई जैन-सिद्धान्तो से परिचित और तत्वज्ञ हैं। आप ने धर्म कार्य्य में बहुत रुपया लगाया है। गरीबो और अनाथों की सेवा के लिये तो उन का जीवन एक प्रकार से न्यौछावर हुआ ही समझना चाहिये। आप का धार्मिक कार्यों में बहुत लक्ष्य रहता आया है। चम्पालाल और प्यारचन्द दोनो की दीक्षा के लिये मातेश्वरी ने पूर्ण सहयोग दिया है इन दोनो सज्जनों पर माता जी का बडा आभार है। निदान प्यार-चन्द अपना मनोरथ सफल होता देख कर यहा से चित्तौड आये। यहा मालूम हुआ कि चरित्रनायक जी अभी उदयपुर ही हैं। किन्तु, इन्हाने श्रीमती माता जी से इतना ही खर्चा लिया था, जिस से चित्तौड तक पहुच सकें। अस्तु। जब यहा आगये तो इन के पास मुनि श्री के चरणो तक पहुचने के लिये कुछ रुपया पैसा नहीं रहा। तब विचार किया कि यहा अपना कोई परिचित तो नहीं। अब किस उपाय से उद-यपुर पहुचना चाहिये। निदान इन्होंने विचारोपरान्त अपने कानोमें जो सोने की मुर्किया थीं, उन्हें विक्रय करनेका विचार किया। किन्तु, नाबालिगी दशा होने से कोई सर्राफ इन्हें

लेगा नहीं। यह सोच कर आप के हृदय में अनेक प्रकार के सकल्प-विकल्प होने लगे। आखिर कुछ भी साधन जब न मिला तो बड़ी कठिनाई से किसी प्रकार आप उदयपुर पहुंचे। मुनि जी से सब घटित-घटना कह सुनाई मुनि जी ने फरमाया कि तुम्हारे बड़े ही उच्च भाव हैं जो ससार मे फंस कर पीछे निकल आये। फिर मुनि जी वहा से विहार कर चित्तौड़ पधारे। चित्तौड़ आने पर मुनि जी ने प्यारचन्द को फिर आज्ञा के लिये भेजा। तदनुसार ये वहा गये तो इनके कौटुम्बियो ने फिर फुसलाने की चेष्टा की। लेकिन, ये अपनी की हुई प्रतिज्ञा से विचलित न हुए। और स्पष्ट शब्दो में सब लोगो से कह दिया कि "अब मैं ससार के माया जाल में पीछा आने वाला नहीं हूँ, आप कृपा कर मुझे तङ्ग न करें।" इधर दादी और भाई आदि ने भी बड़े करुणा-पूर्ण शब्दो में प्रार्थना की। लेकिन इन्होंने उस पर कुछ ध्यान नहीं दिया। अन्तत उन्हें आज्ञापत्र लिखना पड़ा। जिसे लेकर अपनी दादी मा आदि के साथ ये चित्तौड आगये। बाद में श्री सघ ने बड़े समारोह के साथ सम्वत् १९६९ की फागुन सुदी ५ को दीक्षा दिलवाई। दीक्षा और आज्ञा दिलाने में श्री सङ्घ ने बड़ा प्रशसनीय उद्योग किया। श्रीमान जौधनसिंह जी हाकिम साहिब ने राज्य की ओर से पूरी २ सहायता की। एक यूरोपियन टेलर साहिब ने तथा जैन श्री सङ्घ और र अजैन बन्धुओं ने सम्वत् १९७० का चतुर्मास चित्तौड ही करने की प्रार्थना की। आप उस का कुछ निश्चित उत्तर न दे विहार कर निम्बाहेडे पधारे। उसी समय चित्तौड से श्री सङ्घ व माहेश्वरी ब्राह्मण आदि डेपुटेशन लेकर वहा आये, और चतुर्मास करने का आग्रह किया। जिसे आपने स्वीकार

किया। अन्त मे स्वीकृति की आज्ञा लेकर डेपुटेशन के सदस्य पुसन्न वदन वापस चित्तौड लौट गये।



प्रकरण २३ वां

सम्वत् १९७० चित्तौड़

यूरोपियन की श्रद्धा और भक्ति

निम्बाहेडे से विहार कर फेरी अठाणें होते हुए आप तारापुर पधारे। वहा पर अठाणे राव जी साहब की ओर से दो चोपदार आप के पास निमन्त्रण लेकर आये जिस में प्रार्थना की गई थी कि आपका उपदेश बडा बोधजनक और व्याख्यान बडा ही सरल एवम् मधुर होता है। बडी कृपा हो यदि आप यहा पधार कर हम लोगों को कृतार्थ करें। चरित्र नायक जी ने इस प्रार्थना को स्वीकार किया और आप अठाणें पधारे। वहा आप का उपदेश राव जी साहिब व लोगों को बहुत रुचिकर हुआ। अनेक त्याग हुये। और खासा धर्म प्रचार हुआ।

वहा से विहार कर तारापुर, जावद, नीमच, निम्बाहेडे, चित्तोड गगार होते हुए आप हमीरगढ़ पधारे। वहा हिन्दू छींपों में ३८ वर्ष से वेमनस्य चल रहा था। और कई धर्मोपदेशकों के प्रयत्न पर भी उन में मेल होना एक प्रकार से अशक्य सा हो गया था। आप के उपदेश का उन लोगों पर ऐसा प्रभाव पडा कि उन में मेल हो गया। इसी प्रकार वहा

आपके कारण माहेश्वरी महाजनों में भी मेल हो गया। और भी कई उपकार हुए।

वहा से विहार कर आप भिलवाड़े पधारे। जहा पर ३५ खटीकों ने हिंसा कृत्य बन्द कर दिया। फिर वहा से चतुर्मास के लिये आप चित्तौड पधारे। जैन, अजैन जनता तो पहिले ही उत्सुकता पूर्वक आप की प्रतीक्षा कर रही थी। बडी धूम धाम से आप का स्वागत हुआ। और बाजार में ही आप का सुललित व्याख्यान होने लगा। श्रीमान् जीवन सिंह जी साहब हाकिम तथा अन्यान्य प्रतिष्ठित जागीरदार राजकर्मचारी और यूरोपियन टेलर साहब नियमित रूप से आपके व्याख्यान में आने लगे। वहा भी ब्राह्मणो में कई वर्षों से पारस्परिक, ईर्षा, द्वेष से दो तडे हो रही थीं। वे भी आपके उपदेश से एक हो गये हाकिम साहब ने इस खुशी में सब को प्रीति भोज दिया -

महाराज श्री अपने व्याख्यान म भगवती सूत्र फरमाया करते थे, इसके कारण हाकिम साहिब की सारी मानसिक शङ्काओं का समाधान होता रहता था। धीरे २ जैन धर्म पर आप की बडी श्रद्धा हो गई। एक दिन यूरोपियन टेलर साहब ने परमाणु का कथन सुन कर चरित्र नायक जी से निवेदन किया कि यह एडियम (परमाणु)की चर्चा आपके ग्रन्थों में कब से है हमारे यहां तो इसका पता लगे २५० वर्ष हुये हैं, इस पर मुनि जी ने फरमाया कि हमारे यहा तो इसका खुलासा हुये २४०० वर्ष हो चुके हैं एक दिन साहब ने यह कहा कि

आप का धर्म वास्तव में प्रशसनीय एवम् आदरणीय है फिर क्यो न सारा ससार इस पर अपनी श्रद्धा प्रकट करे आप के जो धार्मिक तत्व हैं वे हैं तो प्रशसनीय, और साथ ही त्याग भी अनुकरणीय। परन्तु, ससार उन्हें स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव करता है। आप के नियम, आचार विचार आदि का पालन करना बडा दुरूह है। इसमें ऐश आराम की गन्ध तक नहीं। इसी कारण अजैन ससार इस से विमुख रहता है। और इसी से आपके धर्म का सम्बन्ध उस ने ३६* के अङ्क की भाति मान रक्खा है। यदि इस धर्म में यह खूबी और होती कि ऐश आराम भी करते रहते और धर्म भी साधते रहते तो इस ऐश आराम के जमाने में भी ससार का अधिकाश भाग इसका अनुयायी हो जाता। इतना तो मैं अवश्य कहूँगा कि मुक्ति तो आप के मार्ग से जल्दी हो सकती है।

साहब की लेडी (मेम साहिबा) भी अपने नोकर के द्वारा प्रति दिन महाराज श्री की सेवा में अपना प्रणाम पहुचाया करती थी। एक दिन उन्होंने महाराज श्री के लिये डाली भेजी। किन्तु, जो चपरासी लेकर आया था उसी के द्वारा आपने उसे वापिस करदी और कहला भेजा कि इसे ग्रहण करना तो एक ओर छूना तक हमारे यहा वर्जनीय है। इसके बाद एक दिन टेलर साहब एक शीशी में एक ऐसा यूरोपियन खाद्य पदार्थ लाये कि जिस को जल में डालने से वह दूधसा बन जाय। उसको भी चरित्र नायक ने अगीकार नहीं किया साहब ने बहुत कुछ प्रार्थना की कि यह पदार्थ

*३६ के अङ्कों में ३ और ६ एक दूसरे के प्रतिकूल रहते हैं।

निर्जीव है अतः आप इसे ग्रहण कीजिये। किन्तु जब आप ने इसे स्वीकार न किया तो साहब ने यह कह कर कि मैं इसे आप ही के भेंट के लिये लाया था अतः वापिस नहीं लेजा सकता शफाखाने में भेज दिया। एक दिन टेलर साहब एक यूरोपियन कप्तान को साथ लेकर चरित्र-नायक जी की सेवा में आये जो एक अंग्रेजी सेना के अध्यक्ष (कर्नल) थे, और वहां अपनी फौज के साथ आये हुए थे। वार्तालाप के अनन्तर चरित्र नायकजी ने उन्हें उपदेश दिया और कहा कि आप कम से कम यह प्रतिज्ञा तो अवश्य ही करें कि मोर और कबुतर का शिकार न करूंगा। कप्तान साहब ने उसी समय यह प्रतिज्ञा की। इस प्रकार टेलर साहब ने पूरे चतुर्मास तक आपकी खूब भक्ति की।

उन दिनों वहीं पर श्रीरंगूजी महासती की सम्प्रदाय के श्री सुन्दर कुंअर जी महासती की शिष्यणी सोनाजी महासती ने ७१ की तपस्या केवल गरम जलके आधार पर की ७१ की पूर समाप्ति के दिन बाहर से बहुत लोग आये बड़ा आनन्द रहा। इधर हाकिम साहब भी जैन धर्म पर बड़ी श्रद्धा रखते थे। उन्हों ने भी सम्यक्त्व धारण की। उसके पश्चात् मार्गशीर्ष कृष्ण १ को चरित्र-नायक जी ने वहा से विहार किया। जैन, अजैन जनता तथा टेलर साहब आदि नगर निवासी आपको बिदा करने के लिये आये सब यही चाहते थे कि आप यहा से न पधारें। इस प्रकार मुनिजी गगार पधारे। वहा भी पारस्परिक वैमनस्य से अनेक जातियो मे अनैक्य था। उन्हें आपने अपने उपदेश से मिटाया। वहा से विहार कर हमीरगढ़ विगोद होते हुए आप



श्रीमान् राजासाहिब अमरसिंहजी बनेड़ा (मेवाड)

कहने लगे कि अभी तक आपके किसी धर्मानुयायी का ऐसा ओजस्वी व्याख्यान हमारे सुनने में नहीं आया। यह हमारा सौभाग्य है जो इस नगरी में आप जैसे महात्मा का पदार्पण हुआ। यहा से विहार कर आप सवाई माधोपुर पधारे। वहा भी आप के उपदेश से अच्छा उपकार हुआ। ३० खटीकों ने खटीकपना अर्थात् कसाईपने का धन्धा छोड दिया और मजदूरी काश्तकारी करने लगे। इस समय वे लोग बडे सुखी है और कह रहे हैं कि आप ने हमारा जीवन सुधार दिया हम जब कसाईपना करते थे उस समय हमको भर पट अन्न भी नहीं मिलता था। ओर न पहिनने का वस्त्र मिलते थे। परन्तु अब सुख से जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यह सब चरित्र नायक महोदय के ही शुभाशीर्वाद और उपदेश का फल है।

इसी समय आगरा श्री सङ्घ भी आप की सेवा मे यहां आ उपस्थित हुआ। दर्शन लाभ कर वहा पधारने के लिये सब लोगों ने बडे आग्रह से प्रार्थना की जिसको आपने स्वीकार किया। यहा से विहार कर आप श्यामपुरे पधारे वहा से गगापुर। गगापुर आकर आप को सन्ध्या हो गई। गाव में ठहरने की समुचित व्यवस्था और लोगो की अरुचि देख कर आप ने गाव से बाहर श्मशान की छत्री म ही निवास किया। गाव म एक ही श्रावक रहता था। जब उसको मालूम हुआ तो वह आया और गाव में ले चलने को बहुत आग्रह करने लगा। उस को जब आप न स्वीकार न किया तो वह छत्री के आस पास टट्टे आदि की आड करने लगा। क्योंकि सर्दी के दिन थे। परन्तु चरितनायक जी ने उसको वैसा करने से मना कर के कहा कि हरिण, खरगोश आदि जानवरों

के पास तो बिलकुल कपड़े नहीं होते किन्तु वे नगे ही फिरते हैं। क्या उन के प्राण नहीं हैं। आखिर बड़े कड़ाके की शीत में रात्रि भर आपने वहीं विश्राम किया। प्रात काल प्रातिलेखणा कर आप गाव, में पधारे और दिगम्बर भाइयो की धर्मशाला मे निवास किया। और उस श्रावक से पूछा कि व्याख्यान कहा होगा। इसपर वह घबराया और बोला कि महाराज व्याख्यान तो यहा कहा होगा। मैं और मेरा लड़का दो ही व्यक्ति हैं। इस पर आपने बाजार में व्याख्यान देने को कहा और बोले कि डरता क्यों है। तुम दो हो सा ही बहुत हो। कहा भी है ' दो, जहा सौ।" अस्तु, आप उसी श्रावक की दुकान पर जा विराजे। २-३ शिष्य साथ में थे उन्होंने मगलाचरण किया। जिसे सुनकर कुछ लोग आये और आप का व्याख्यान आरम्भ होने पर तो लोगो के झुण्ड के झुण्ड आने लगे। जब व्याख्यान समाप्त हुआ तो लोग कहने लगे कि महाराज! हम ऐसा नहीं जानते थे। इसी से व्याख्यान में देर से उपस्थित हुए। कल जल्दी आयेंगे। कृपया २-१ दिन और बिराज कर हमें अपना उपदेशामृत पान कराइये। इसे चरित्रनायक जी ने स्वीकार किया और दो व्याख्यान और दिये। उसके पश्चात् वहाँ से विहार कर भरतपुर पधारे।

प्रकरण २४ वां

संवत् १९७१ आगरा

व्याख्यानों की धूम

भरतपुर से आप आगरे पधारे। यहां की जैन जनता वर्षों से आपके दर्शन को लालायित थी जाते ही आपने लोहामंडी में निवास किया। पहिले जैन धर्मोपदेशकों के जितने भी व्याख्यान यहां हुए उन सब से आपके व्याख्यान में श्रोताओं की संख्या अधिक होती थी। कारण कि आपका व्याख्यान न केवल जैन सम्प्रदाय पर ही, प्रत्युत सर्वसाधारण को उपयोगी हो ऐसा होता था। वहीं पर श्री महावीर स्वामी का उत्सव भी बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस के पश्चात् आप मानपाड़े में पधारे वहां एक अग्रवाल बन्धु मंजलाल जी ने आप से आज्ञा लेकर आपके सार्वजनिक व्याख्यान की योजना की। ५००० हेण्डबिल छपवा कर वितरण किये। और सब प्रकार का व्यय अपने ऊपर लिया। निर्दिष्ट समय पर बेलनगञ्ज में आपका बड़ा ओजस्वी और मनोरम व्याख्यान हुआ। श्रोताओं की उपस्थिति खूब थी धौलपुर निवासी सुप्रसिद्ध साहित्यरत्न ला० कन्नोमलजी एम ए सेशन जज भी वहां आपहुचे थे उन्होंने व्याख्यानकी सराहना करते हुए कहा कि ऐसे महात्मा का एक व्याख्यान भी लोगों का उद्धार कर सकता है उन्होंने धौलपुर के लिये चरित्रनायकजी से बहुत प्रार्थना की परन्तु उसी समय

लश्करश्रीसघ भी वहा आगया था उसने बहुत अनुनय विनय की जिस को आप अस्वीकार न कर सके। इस पर आगरे वालों ने सोचा कि यदि अभी हम लोग यहा के लिये चतुर्मास की स्वीकृति न लेलेंगे तो यह लाभ लश्कर वालों को मिल जायगा। यह सोचकर यहा वालों ने इसके लिये पूर्ण प्रयत्न किया और अन्त मे स्वीकृति लेकर ही छोडी। आपने स्वीकृति तो देदी परन्तु यह शर्त रखी कि यदि कहीं कोइ बडा उपकार या दीक्षा होने वाली होगी तो उसे म टाल न सकूं गा।

इस प्रकार कुछ दिन और आगरे मे उपदेश दे आपने धोलपुर के लिये विहार किया और वहा कुछ व्याख्यान दे मुरेना पधारे। जहा स्याद्वाद वारिधि गोपालदास जी वरेया तथा दिगम्बर जेन ऋषभ ब्रह्मचर्य्याश्रम के अध्यापकों की ओर से आपके लिये प्रार्थना आइ कि यहा पधार कर धर्मोपदेश करें। इस पर आपने फरमाया कि हम रात्रि के समय स्थान से अति दूर नहीं जासकते ऐसा हमारा नियम है। इस बात को जान कर वे लोग चुप होगये। किन्तु,उपदेश की लालसा बनी रही। अधिक निवास करने का अवकाश न था। अत सूर्योदय होने पर प्रति लेखणा कर चरित्र नायकजी ने लश्कर की ओर विहार करदिया। और यथा समय लश्कर पधारे। सर्राफाबाजार में आपका व्याख्यान हुआ। श्वेताम्बरों के लगभग ४० घर होते हुए भी ७००-८०० की उपस्थिति होना साधारणसी बात थी। सभी धर्मानुयायी व्याख्यान मे योग देते थे। राज्यकर्मचारियों में मेम्बर श्यामसुन्दरलालजी तथा सर सूबा बालमुकन्द भेया साहब के नाम विशेष उल्लेखनीय हें आप लोगों ने चरितनायक जी से चतुर्मास के लिये भी

आग्रह पूर्वक प्रार्थना की। इसके उत्तर मे आपने फरमाया कि बात तो ठीक है। परन्तु, हमारे दो साधु आगरे हैं उनसे बिना पूछे हम कुछ नहीं कह सकते । यह अवश्य है कि यहा विशेष उपकार की सम्भावना है। ऐसा कह कर आप आगरे पधारे ओर उन साधुओं से सम्मति ले लश्कर के लिये विहार करते ही थे कि उपाश्रय की सीढियें उतरते हुए श्रीमान दुर्गा प्रसादजी के भाई श्रीमान कस्तूरचन्द जी आन पहुँचे ओर विहार का ढग देखकर आश्चर्यान्वित हो प्रार्थना करने लगे कि आप यहा से विहार करें यह तो स्वप्न मे भी न होगा। इस प्रकार ओर भी कुछ बातें कहते हुए वे गद २ होगये और उन्हों ने चरितनायक जी के चरण पकड लिये। बोले कि हम कदापि यहा से आप को विहार न करने देंगे। इस पर आपने विचार किया कि लश्कर में उपकार अच्छा होगा इस मे तो कोई सन्देह नहीं परन्तु, यहा से विहार करने मे इन श्रावकों का दिल दुख पाता है यह भी ठीक नही। अन्त में वहीं ठहरना ठीक समझा । सब लोगों का चित्त प्रफुल्लित होगया उसी समय सर्व साधारण को सूचना देदी गई कि मान पाडे के उपाश्रय मे प्रतिदिन प्रात काल प्रसिद्ध व्याख्याता का व्याख्यान होगा। उसके अनुसार व्याख्यान होने लगा कुछ ही दिन मे श्रोताओं की सख्या इतनी अधिक होगई कि व्याख्यान की जगह बढानी पडी जिस के चिन्ह अब तक मोजूद हैं। उस चतुर्मास मे बहुत उपकार हुआ इसका विस्तृत उल्लेख यथा समय क्षमा पत्रों में होचुका है। स्थानाभाव से यहा नहीं दिया गया।

इस प्रकार दो मास तक आप का निवास मान पाडे मे

रहा। इस प्रकार दो मास लोहामडी मे चतुर्मास की समाप्ति का दिन निकट ही था कि आपको गुरु जवाहर लालजी महाराज की अस्वस्थता का सवाद मिला। जिस मे लिखा था कि आप आगरे से मन्दसौर की ओर विहार करे। अत चतुर्मास पूर्ण होते ही चरित नायक आगरे से शीघ्र विहार कर कोटे पधारे विश्राम के लिये वहा दो रात्रि निवास किया वहा से विहार करते समय मार्ग मे एक खटीक सोता हुआ मिला जिस के पास दो बकरे बधे हुए थे। आपने अनुमान से जाना कि यह कोई वधिक है। कन्हैयालाल जी और जुहारमल जी श्रावक आप के साथ थे। उन्होंने उसे जगाया तो अनुमान सत्य निकला। उसको आपने उपदेश दिया कि – "तू यह पाप किस के लिये करता है। जो कर्म करेगा उसका फल भी उसी को मिलेगा कोई दूसरा मनुष्य भोगने को थोडा ही आयगा। तेरे शरीर पर सुई चुभोइ जाय तो तुझे कैसा कष्ट हो। इसी प्रकार क्या इन जानवरों को तकलीफ नही होती। तुम मनुष्य होकर हिंसा करते हो जिसका दया करना मुख्य धर्म है। तुमने हिंसा करने वाले को कभी सुखी भी देखा है ? देखो

तुम्हारे शरीर पर पूरे वस्त्र भी नहीं है। और मेरा अनुमान है कि तुम्हारे घर में खाने को भी काफी साधन न होगा माधोपुर में भी मेरे उपदेश से ३०, ३५ करीब खटीकों ने वध करना छोड दिया और वे व्यापार खेती करने लगे तभी से सुखी हैं। क्या ससार में तुम्हारे लिये और कोइ धन्धा नहीं है। यदि अपना भला चाहो तो मेरा कहा मान कर इस धन्धे को छोड परभव के लिये प्रभु का भजन करो। दया करना मनुष्य मात्र का धर्म है। देखो ! तुलसीदास जी ने क्या ही अच्छा कहा है -

"दया धर्म को मूल है पाप मूल अभिमान"
तुलसी दया न छाडिये, जब लग घट म प्रान।"

यह उपदेश सुन कर वह खटीक कहने लगा कि हा वाप जी, आप कहते है सो सब ठीक है। मै परमात्मा को सर्व व्यापी मान कर चन्द्र सूर्य की साक्षी से—मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक जीऊगा कभी इस धधे को नहीं करूगा। परन्तु आपके साथ वाले भक्तों से मेरी प्रार्थना है कि ये जोदो बकरे मेरे पास हैं और ३० बकरे मेरे घर पर है इनको खरीद कर मुझे रुपये देदें। ताकि इनके द्वारा म दूसरा धन्धा कर सकू। इस पर दयालु श्रावकों ने उस खटीक को रुपया देना स्वीकार किया। और उसका कार्य कर दिया।

वहा से विहार कर सींगोली होते हुए आप सर वाणिये पधारे और फिर नीमच मल्हारगढ होते हुए मन्दसौर। इस समय श्री जवाहरलाल जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक होगया था। इस कारण आपने आगामी चतुर्मास के लिये पालनपुर श्री सघ की प्रार्थना स्वीकार करली थी। पूज्य श्री लाल जी महाराज भी वहां विराजते थे। गगापुर श्री सघ ने उस समय आकर प्रार्थना की कि थोडे दिन बाद वहा तेरह-पन्थियो का पाट महोत्सव होगा उस समय यदि बाईस सम्प्रदाय के सुयोग्य सन्तों का वहा विराजना होगा तो बडा उपकार होने की सम्भावना है। पूज्य श्री लाल जी महाराज के यह बात जच गई कि बेशक यही होना चाहिये। तदनुसार पूज्य श्री ने हमारे चरित्र नायक जी को आज्ञा दी कि तुम वहीं जाओ। तब आपने उत्तर दिया कि इस अवसर पर

यहा आपकी आवश्यकता है तो प्रत्युत्तर में पूज्य श्री लालजी महाराज ने फरमाया कि तुम्हारा व्याख्यान प्रभावोत्पादक होता है, जहा एक भी स्थानक वासी का घर नहीं होता वहा भी तुम्हारे व्याख्यान में सैकडों अजैन आते हैं और उन पर तुम्हारे कथन का असर पडता है अत तुम ही गगापुर जाओ। यह आज्ञा पाकर चरित्र नायक जी ७-८ कोस का विहार कर नीमच निम्बाहेडे होते हुए गगापुर पधारे। यहा बीच बाजार में ठहरे और प्रात काल सायकाल वहीं व्याख्यान देने लगे। श्रोताओं से चारो ओर के मार्ग ऐसे ठसाठस भर जाते थे कि मनुष्य भी इधर से उधर न जा सके। उन दिनों उज्जैन से सरसूबा बालमुकुन्द भैया साहब दौरे में यहा आये हुए थे। वे एक रोज आपके दर्शन को आये। दर्शन कर प्रसन्नता प्रगट की। आपने उन से कहा कि आप अधिकारी हैं वाणी द्वारा ही बहुत कुछ उपकार और पुण्य उपार्जन कर सकते हैं। उज्जैन के परगने में जितने देवी देवताओं के स्थान हैं उन पर जो हिंसा होती है वह बन्द करादें तो बडा अच्छा काम हो। इस पर आपने वचन दिया कि उज्जैन पहुच कर मैं अवश्य इसके लिये प्रयत्न करूगा। इसके अतिरिक्त और भी बहुत सा उपकार हुआ यहा १०-१२ घर मोचियों के थे उन्हों ने चरित्र नायकजी के उपदेश से मदिरा मास का सेवन छोड दिया। बहुतो ने जैन धर्म के तत्त्वों से परिचय प्राप्त किया, कितनो ही ने नवकार मत्र, सामायिक प्रतिक्रमण आदि सीखा। यहा तक धर्म ध्यान के लिये उन्होंने अपना एक उपाश्रय भी नियत कर लिया। सायकाल को वहीं पर वे मुहपत्ति * बाध कर सामायिक प्रतिक्रमणादि

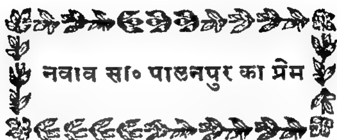
* मुख वस्त्रिका।

करने लगे जो अब तक जारी है प्रतिवर्ष सवत्सरी के पोषधादि भी करते हैं। इस प्रकार और भी कई जाति के लोगो ने अभक्ष्य त्याग किया जिसे बराबर निभा रहे हैं।

वहा से विहार कर आप लासोरा होते हुए राश्मी पधारे वहा भी आपके उपदेश से कई जाति के लोगों ने अभक्ष्य त्याग किया और एक देवी के यहा जो प्रतिवर्ष भैंसे का वध होता था उसको बन्द किया। इसके पश्चात् वहा से विहार कर गगरण्ड होते हुए आप पोटला पधारे। वहा भी आपके उपदेश से माहेश्वरियो में जो कई वर्ष से फूट हो रही थी मिट गई वहा से विहार करते समय जैन अजैन लोग आपके उपदेश से अतृप्त रहे फिर चरित्रनायक जी परिये, कोसीथल रायपुर और मोगरणदे होते हुए आमेट पधारे इन स्थानों पर अच्छा उपकार हुआ अरणोदा के ठाकुर साहब हिम्मतसिंह जी ने शिकार करने का यावज्जीवन त्याग किया और कोसीथल के ठाकुर साहब श्रीमान् पद्मसिंह जी ने वैशाख श्रावण और भाद्रपद इन तीन मास में शिकार न खेलने की प्रतिज्ञा की। साथ ही उनके जेष्ठ पुत्र जवानसिंह जी ने वैशाख व भाद्रपद में शिकार न खेलने का त्याग किया।

प्रकरण २५वां

सम्वत १९७२ पालनपुर



नवाव सा० पालनपुर का प्रेम

भिन्न २ स्थानों में उपकार कराते हुये आप आमेट पधारे वहा के राव जी श्रीमान् शिवनाथसिंह जी साहब महाराज श्री के दर्शन करने को आये। व्याख्यान मण्डप राव जी साहब के महलों के सामने ही सजाया गया था। श्री महावीर स्वामी का महोत्सव बड़े समारोह से मनाया गया ' यहा से विहार कर चार भुजा जी घाणेराव होते हुये सादड़ी (मारवाड) पधारे। और फिर सोजत, पाली, सान्डेराव होते हुये पालन पुर की ओर मार्ग में एक गाव में लगभग ११ बजे गये वहा एक भक्त ने आप को देखते ही गाव म जाकर ओसवालों के मोहल्ले मे जाकर कहा कि महाराज श्री पधारे हैं उनके लिए गरम जल करला। इस वात को २—४ ओर साधुओं ने सुना जो गोचरी के लिये उधर आये थे। उन्होंने इस का जिक्र चरित्रनायक जी से कर दिया, वस यह सुनते ही चरित्रनायक जी कडी धूप म बिना अन्न जल ग्रहण किये वहा से विहार कर गये , लोगो के अनुरोध से आप ने कुछ छाछ का सेवन किया पर तु आगे भी प्रत्यक गाव मे आप छाछ ही लेते रहे ,

प्रकार धन्नेरी जा रहे थे कि मार्ग की एक नदी मे वहा के श्री पूज्य जी से आपकी भेंट हो गई, वे रथ में बैठे हुए उधरसे जा रहे थे और आप इधर से पधार रहे थे—आपको देखते ही श्री पूज्य जी ने रथ से उतर कर विधि पूर्वक वन्दना की। वार्तालाप के अनन्तर उन्होंने आप से जल के लिये आग्रह किया और कहा कि मै हमेशा गरम जल पीता हूँ उसका कु जा मेरे पास भरा हुआ है – आप ग्रहण करें तब आप ने उसे ग्रहण किया, श्री पूज्य जी ने प्रार्थना की कि मै आवश्यक कार्य वश जा रहा हूँ – अन्यथा आप के साथ ही धन्नेरी लौट चलता आप कृपा पूर्वक धन्नेरी में मेरी हवेली पर ही ठहरें वहा नौकर सब प्रस्तुत हैं। वहा से एक दूसरे से विदा हुये और एक रात धन्नेरी मे निवास कर आबू रोड पधारे पालनपुर श्री सघ को खबर मिलते ही वह आया और आपका प्रेमपूर्वक स्वागत कर नगर मे चतुर्मास के लिये ले गया, इस प्रकार सम्वत् १६७२ का चतुर्मास आप का पालनपुर हुआ पीताम्बर भाईकी धर्मशाला मे आप का निवास हुआ, व्याख्यान में सर्वसाधारण आते थे, नवाब साहब को भी यह सूचनामिली अत: वे एक हाफिज और एक पंडित को लेकर व्याख्यान के समय दर्शनार्थ आये, आप के सार गर्भित व्याख्यान सुनकर बडे प्रमुदित हुये और अपने सौभाग्य की बडी सराहना करने लगे कि मुझे ऐसा सुयोग मिला। व्याख्यान की समाप्ति पर उन्होंने चरित्रनायक से तात्विक-रहस्य पर बहुत कुछ वार्तालाप की। उसके कारण नरेश को और भी अधिक आनन्द हुआ। वे लगभग

२—२॥ घण्टे तक चरित्रनायक जी की सेवा में ठहरे। पश्चात् जब जाने लगे तो उस ओर बढे जहां मुनि श्री शङ्करलाल जी महाराज और मुनि श्री छगनलाल जी महाराज तथा मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज सिद्धान्त कौमुदी का अध्ययन कर रहे थे। वहां पहुंच कर दरवाजे में आगे बढते ही थे कि एक ज्ञान खाते की पेटी की ओर दृष्टि गई। उस के लिये उन्होंने पूछा कि यह क्या है ? उत्तर में कहा गया कि जो लोग आते हैं इस में कुछ न कुछ ज्ञानवृद्धि के लिये द्रव्य डालते हैं इस पर उन्होंने उसमें४० रु० डाले इसके पश्चात् उनके सन्देशे बराबर आपके पास आया करते और लोगों से प्रति दिन व्याख्यान के विषय में वे पूछताछ किया करते। उन की इच्छा तो यही थी कि प्रति दिन ही व्याख्यान सुने परन्तु वृद्धावस्था और अशक्तता के कारण आप अपनी इच्छापूर्ति न कर सके। एक दिन फिर आये। उस दिन के व्याख्यान में खूब उपकार हुआ इसके पश्चात मन्दसौर से तार द्वारा सूचना मिली कि बडे महाराज श्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं है अत आपको पालनपुर से एक दम विहार करना पडा। आबू रोड से लगभग ३ कोस पहुँचने पर खबर मिली कि बडे महाराज देवलोक होगये तब आप चतुर्मास के शेष दिन पूरे करने को वापिस पालनपुर पधार आये। शीतकाल प्रारम्भ होगया था। यद्यपि सरदी विशेष न थी परन्तु नवाब श्री पालनपुरने चरित्रनायक के लिये दो बहुमूल्य दुशाले मंगवाये और अपने कमचारी मघाभाई से कहा कि—"केम मघाभाई! आ दुशालानी जोड महाराज श्रीए आपीए ते सारी केम" इस के उत्तर में मघा भाई बोले कि "महाराज श्री दुशालानी जोडे न थी लेता केम कि परिग्रहना

त्यागी छे जो ते लेता होत तो अमे शा माटे न थी आपता" इस पर दरबार ने कहा कि —"तो महराज श्री नी शू भक्ति करीअे छीअे" तब मघाभाई बोले कि —"दया तथा परोपकार माँ वधारे लक्ष्य आपवे। एज महाराजश्री नी खरी त्ररे सेवाछे" आदि। यहाका चतुर्मास पूण कर महाराज श्री डीसा केम्प होते हुए धानेरे पधारे। मार्ग म पालनपुर नवाब सा० के दामाद श्री० जबरदस्त खा जी ने आकर साक्षात किया। चरित्रनायक जी के उपदेश पर उन्होंने कई जीवो पर गोली न चलाने की प्रतिज्ञा की। नवाब साहब पालनपुर ने पहिले ही से सब राजकर्मचारियो को सूचित कर दिया था कि महाराज श्री की सेवा म किसी प्रकार की त्रुटि न हो। तदनुसार राजकर्मचारियो ने सब प्रकार का समुचित प्रबन्ध रक्खा। धानेर के हाकिम साहब ने आप के पदार्पण पर वहा व्याख्यान होने की इच्छा प्रगट की। उसको स्वीकार कर आप ने व्याख्यान दिया जिसके फल स्वरुप वहा अच्छा त्याग-उपकार हुआ एक राजपूत सरदार ने सजोड (पत्नी सहित) ब्रह्मचर्य धारण किया फिर वहा से विहार किया तो मार्ग के एक नगर में आप के व्याख्यान के लिये जनता एकत्र हुई मिली बाजे गाजे के साथ आप का स्वागत हुआ। किंतु आप ने बाजा बन्द करवा कर शाति पूवक नगर मे प्रवेश किया। वहा व्याख्यान स्थल सजाया गया था उससे भी आपने परहेज किया इस प्रकार शुद्ध संयम का पालन करते हुए झालोरगढ पधारे। वहा भी सभा करके जनता को उपदेश किया। उसी समय थालोत्तरा श्रीसघ ने आकर आग्रह पूर्वक वहा पधारने की प्रार्थना की जिसे स्वीकार कर आप थालोत्तरे

पधारे। इससे पहिले आप का यहा पदार्पण नहीं हुआ था। हा, जनता में आप की ख्याति अवश्य थी। अत यह आपके दर्शन कर व्याख्यान लाभ लेने को उत्सुक थी सैकड़ो नर नारी इक्ट्ठे होगये थे। यथा समय व्याख्यान हुआ और सब साधारण को आपने कोई सभा सस्था खोलने की प्रेरणा की। लोग नहीं जानते थे कि सभा क्या होती है। अत आप न उसका विवेचन कर उनको परिचित किया। जिसको समझ कर सब न एक सभा स्थापित करने की योजना की। लोग चाहते थ कि आप कुछ दिन और विराजे परन्तु, साथ ही यह जान कर कि मुनिवर अप्रतिबद्ध विहारी* हैं, सन्तोष किया। इस प्रकार चरित्रनायक जी आगे विहार कर नगर के निकटवर्ती एक स्थान पर ठहरे। सूर्योदय न होन से पूर्व ही पञ्चभद्रे के श्रावकगण आगये और निकलने के दोनो मार्ग रोक कर बैठ गये। उनसे महाराज श्री ने फरमाया कि अभी अवसर नहीं है। परन्तु वे लोग न माने। तब आप को पञ्च भद्रे पधारना पड़ा। और शकरलाल जी तथा प्यारचन्द जी महाराज को आज्ञा दी कि पाली जाओ। उधर आप ने पञ्च भद्रे में दो व्याख्यान दिये ही थे कि पाली से प्यारचन्द जी महाराज की अस्वस्थता का समाचार आगया। तब आप विहार कर वहां से पाली पधारे। वहा ठहर कर आपने

---

* बधन रहित, स्वतन्त्र विचरने वाले।

स्वयम् औषधादि उपचार किया। फिर प्यारचन्द जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक होने पर वहा से विहार कर समदड़ी होते हुए जोधपुर पधारे।



चरित्र नायकजीके भक्त युरोपियन टेलर साहिब
एफ जी टेलर नीमच छावनी

परिचय–प्रकरण २३

प्रकरण २६ वा।

सम्वत् १९७३ जोधपुर।

जैनेत्तर जनता और जैनधर्म

जोधपुर में किसी श्रावक से परिचय नहीं था। अत नगर में प्रवेश करते समय आपने यह विचार किया कि जो प्रथम वन्दना करे उसी से ठहरने का स्थान पूछना। बाजार में पहुचने पर लोग वन्दना करने को खडे हुए तो पूछा कि भाइयो! निवास स्थान कहा है? तब सबने प्रार्थना की कि रूदे की पाल में है, वहा पधारिये। यह स्थान बाजार के नुक्कड पर ही था चरित्रनायकजी उसी जगह पर ठहर गये। लोगों को आपके पदार्पण के समाचार मिले। किन्तु, सब को नहीं। क्योंकि प्रथम तो शहर बडा। दूसरे ओसवालों की बस्ती अधिक। तीसरे चरित्रनायक जी से लोग अपरिचित। अस्तु। दूसरे दिन आपका व्याख्यान श्रीयुत् शुभलाल जी कायस्थ के नोहरे में हुआ। उसी दिन से नगर भर मे खबर फैलगई और लोग उमड कर दर्शन करने तथा उपदेश ग्रहण करने को व्याख्यान मे आने लगे। अब तो उपस्थिति इतनी होने लगी कि स्थानाभाव होगया। श्रीयुत पचोली शुभलाल जी ने दूसरा मकान (अपनी हवेली) तजवीज किया। परन्तु, दो एक दिन के पश्चात् वहा भी तगी होने लगी। महावीर

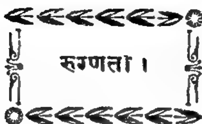
स्वामी का जन्मोत्सव निकट आगया था। अत चैत्र शुक्ला १३ को वह आनन्द पूर्वक मनाया गया। अब तो लोग चतुर्मास के लिये प्रार्थना करने लगे। इस पर आपने उत्तर दिया कि हमारे गुरुवर पाली में विराजते हैं उनसे प्रार्थना करनी चाहिये। तब श्री संघ तथा अन्यान्य जाति के लोग पाली गये और गुरुवर से जोधपुर के चतुर्मास की आज्ञा लेली। सब सन्तोंके ठहरनेको आउवा की हवेली नियत हुई। चरित्रनायक जी भी वहीं पधार गये। इस प्रकार सब सन्तो का सगठन एक ही स्थान पर होगया। आउवा की हवेली के चौक ही में व्याख्यान भी होने लगा। सर्व साधारण व्याख्यान में योग देते सरकारी कर्मचारियो में फराश खाने के दारोगा श्रीयुत नानूराम जी माली ने विचार किया कि कुचामण की हवेली में व्याख्यान कराना और राज्य मण्डली को भी निमन्त्रित करना अस्तु। वेसा ही किया गया। जनता खूब इकट्ठी हुई। महाराजा श्री विजयसिंह जी साहब, रायबहादुर प० श्यामबिहारी मिश्र बी०ए० रेविन्यू मेम्बर रिजेन्सी कौन्सिल, राय साहिब लक्ष्मणदासजी बार- एट-ला—चीफजज आदि २ कई महानुभावो ने व्याख्यान का लाभ लिया। कुछ दिन के पश्चात् चतुर्मास के लिये भैंसवाडे की हवेली मे तो निवास किया और आवर की हवेली म व्याख्यान होने लगा। अब तो जैन, अजेन, वेष्णव, मुसल्मान, सभी लोग बहुत बडी सख्या मे आने लगे। सवत्सरी के दिन जेन श्रावकों के अतिरिक्त अनेक अजेन लोगो ने भी निराहार उपवास व्रतादि किये। कई लोगो ने तो लगातार ८-८ उपवास (अठाई) किये इसके अतिरिक्त और भी धर्म प्रचार तथा त्याग हुआ। इस प्रकार सफलता पूर्वक चतुर्मास पूर्ण कर आपने पाली की ओर विहार

किया। क्योंकि गुरुदेव का चतुर्मास इस वर्ष वहीं था और वे अस्वस्थ थे। कुछ दिन के पश्चात् गुरुवर स्वस्थ होगये तो आपको आज्ञा मिली कि हम विहार करते हैं तुम गावों में विहार करते हुए नये शहर आजाना। तदनुसार हमारे चरित्रनायक जी बगडी, निलाडे, आदि स्थानों में त्याग, धर्म प्रचार और उपकार कराते हुए ब्यावर (नया नगर) पधारे। वहा काकरिया जी के मकान में निवास किया। स्थेवर मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज हीरालालजी महाराज अन्य मुनियों के साथ वहीं विराजते थे। वहीं पर आपके व्याख्यान प्रारम्भ हुए। अजैन लोगों ने सर्व साधारण के लाभार्थ बाजार में व्याख्यान होने की इच्छा प्रगट की। देशभक्त सेठ दामोदर दासजी राठीने अपनी ओर से विज्ञापन छपवा कर वितरण किये। तदनुसार "प्रेम और ऐक्यता" पर आपका व्याख्यान सनातनधर्म स्कूल में हुआ। राठी जी ने व्याख्यानके अनन्तर चरित्रनायकजी के गुण गान और प्रेम शब्द की व्याख्या पर कुछ कहा। हेडमास्टरजी के आग्रह से दूसरा व्याख्यान फिर वहीं हुआ।

अजमेर श्री सघ की ओर से प्रार्थना आरही थी और श्रीमान् घनस्याम दासजी ने भी यहा आकर आप से अजमेर पधारने की विनय की। अत यहा से विहार कर आप अजमेर पधारे। वहा के श्री सघने व्याख्यान श्रवण कर अपने को कृतार्थ समझा। श्रीमान् रायबहादुर छगनलालजी साहब, दीवान बहादुर श्रीमान् उम्मेदमलजी साहब लोढा श्रीमान मगनमलजी साहब, श्रीमान् गाढमलजी लोढा आदि ने समस्त सघ की ओर से आगामी सम्वत् १६७४ के चतुर्मास के लिये प्रार्थना की। जिसे स्वीकार कर आपने कृष्णगढ की ओर विहार किया।

प्रकरण २७ वां ।

सम्वत् १६७४ अजमेर



कृष्णगढकी जनता को चरित्रनायक जी के दर्शन लाभ करने का यह पहिला ही अवसर था । आपका व्याख्यान सुन लोग कहने लगे कि मुनिवर सब धर्म और शास्त्रों के ज्ञात मालूम होते हैं । जिस मकान में आपका व्याख्यान होता था उस में जगह न मिल नेके कारण दूसरा मकान तजवीज करना पडा । महावीर स्वामी का जन्मोत्सव भी निकट था उसे यह पहिला ही अवसर था । अत मुनि महाराज के द्वारा इस विषय से विशेष जानकारी प्राप्त कर उसने उसकी योजना आरम्भ की । राज्य की ओर से छाया आदि का प्रबन्ध किया गया । चैत्र शुक्ला १३ को उत्सव बडे आनन्द से मनाया गया हिंसा आदि के कार्य जहा तक हो सका, प्रयत्न कर रोके गये दीन जनो को अन्न वस्त्रादि दिये गये । व्याख्यान में भी उस दिन बहुत लोग आये थे । जैन जनता ने आयम्बिल* किये ।

---

*आयम्बिल उस तप को कहते हैं जिस में सब रसों का त्याग करके निर्जीव अन्न को बिना साग के केवल एक वार एक ही स्थान पर जल में भिगो कर खा लेना पडता है ।

उसके पश्चात् कुछ दिन और धर्मोपदेश कर आपने विहार किया। और टोकडे होते हुए हुरमाडे पधारे। वहा बहुत त्याग प्रत्याख्यान हुए। तेलियो ने नियमित दिनो के लिये घाणी चलाना बन्द करने की और जैन भाइयो ने अपनी आमदनी का २५ प्रति शत धार्मिक कार्यों में लगाने की प्रतिज्ञा की। वहा से विहार कर आप रूपनगढ पधारे वहा भी अच्छा धर्म प्रचार हुआ। रूपनगढ़ में एक प्राचीन शास्त्र भण्डार था। उसका आपने निरीक्षण किया। श्रावको ने आग्रह पूर्वक प्रार्थना की कि इनमें से आप कुछ शास्त्रों का ग्रहण करें क्यों कि आपके पास रहने से इन का सदुपयोग होगा। तदनुसार आपने उनमें से कुछ शास्त्र लिये। फिर वहा से विहार कर आप अजमेर पधारे और लाखन कोठरी में श्रीमान् रायबहादुर सेठ उम्मेदमल जी के मकान म ठहरे। चतुर्मास वहीं हुआ। कृष्णगढ में आप के गुरुवर मुनि श्री हीरालाल जी महाराज का चतुर्मास था। वहा प्लेग शुरू हो गया अत श्रावक लोगो की प्रार्थना पर आपके गुरुवर हीरालाल जी महाराज तथा श्री प० नन्दलाल जी महाराज अजमेर पधारे इससे वहा की जनता और भी प्रफुल्लित हुई। वहा आपके गुरुदेव ने सेकडो स्तवन की रचना की और उन्हें साधु साध्वियो में वितरित किया। ज्ञान ध्यान की दृष्टि से आप बडे सयम शील थे। ११ वर्ष की अवस्था में आप को दीक्षा हुइ थी तभी से आपने ज्ञान ध्यान में पूरी रुचि रखी उसी का यह प्रभाव था कि इस अवस्था तक आपकी आत्मा दिव्य दर्शी हो गई थी। इसी सम्वत् १९७४ के चतुर्मास में मिती असौज सुदि २ को सायकाल के समय आप कुछ रचना कर रहे थे इतने ही में शौच जाने की इच्छा हुई। शौच से निवृत्त होते ही एकाएक आपको ऐसी

निर्बलता हो गई कि रात्रि में ही आप की अवस्था शोचनीय हो गई। इस अवस्था में भी अपने गुरु भाई के सामने यथा विधि मुनिवर ने आलोचनादि क्रिया की। सूर्योदय होने पर पुनः आप ने आलोचना* त्याग प्रत्याख्यान किये। इसके पश्चात् आप देवलोक हुये। नगर में यह सम्वाद फैलते ही जनता उमड पडी। श्री सङ्घ ने यथाविधि आप का मृतक संस्कार किया। प्लेग की बीमारी का ज़ोर बहुत बढ रहा था अत श्री सङ्घ की प्रार्थना पर सब मुनिगण नगर से बाहर लोढा जी की कोठी पर पधार गये। वहा हमारे चरित्र नायक जी को निमोनिया हो गया। ओषधोपचार हो रहा था। रोग बढ रहा था। किन्तु उस दशा में भी आपने आयम्बिल (आविल) किया। ठीक भी है—"तपसा क्षीयते व्याधि"। परन्तु भुने हुये चने का सेवन करने से कुपथ्य हो गया और इस से व्याधि बढ गई। शारीरिक दशा बहुत बिगड गई और जीवन की आशा न रही।

पुण्योदय से शने २ आराम हो गया परन्तु, निर्बलता बनी रही। व्याख्यान देने की शक्ति न थी। चतुर्मास पूर्ण हो जाने पर भी निर्बलता के कारण कुछ दिन और आप वहीं रहे। पहिले लोढा जी के मकान में ही, परन्तु, फिर श्रीमान् रुघनाथमल जी वकील के यहा जो आप के भक्त थे, ठहरे। फिर विहार कर कृष्णगढ पधारे। वहा कुछ दिन ठहर कर जब शरीर में कुछ शक्ति आई धर्मोपदेश दे नये शहर पधारे। व्याख्यान वहा भी पब्लिक हुये। चतुर्मास के लिये भी लोगो का बहुत आग्रह हुआ परन्तु, यह कहकर

---

*आलोचना—प्रमाद वश लगे हुये पाप को गुरू के सन्मुख प्रगट करने को कहते हैं।

कि अभी समय बहुत है आप ने मेवाड की ओर विहार किया। मार्ग में जनता को नाना प्रकार के उपदेश करते हुये आप ताल पधारे। वहा बहुत से त्याग हुये। ठाकुर साहब श्रीमान् उम्मेदसिंह जी ने भी चरित्रनायक जी के दर्शनों का लाभ लिया। आप के उपदेश पर उन्होंने अष्टमी और चौदश को बिल्कुल शिकार न खेलने की प्रतिज्ञा की। साथ में उन के भाई बेटो ने भी कुछ त्याग किया। फिर आप लसाणी पधारे। वहा आकर व्याख्यान देना प्रारम्भ किया। यहा के ठाकुर साहब श्री खुमाणसिंह जी साहब प्रति दिन व्याख्यान सुनते थे। उन्होंने परिन्दे जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा की।

इसके अतिरिक्त कई मासाहारियो ने मास परित्याग किया। फिर यहा से विहार कर आप देवगढ पधारे। सरकारी मकान में ठहरे। वहा के राव जी साहब विजयसिंह जी महाराणा उदयपुराधीश के सोलह उमरावो में तीन लाख के जागीरदार हैं। यहा जनता के द्वारा चरित्रनायक जी के व्याख्यान की प्रशसा राव जी साहब तक भी पहुची। वे जैन धर्म के सर्वथा अपरिचित थे। पहिले एक बार वितण्डावाद करने को उन्होंने अपने यहा के कुछ पण्डितो को किसी जैन मुनि के पास भेजे थे। उसके पश्चात् एक दिन वे स्वयम् भी उसी मार्ग से होकर निकले जिधर उन मुनि जी का व्याख्यान हो रहा था। व्याख्यान मडप के निकट आकर कहने लगे कि हम इस मण्डप की छाया में होकर नहीं निकलेंगे। अत इस पर्दे को हटा दो। उनकी आज्ञा के आगे श्रावक बेचारे क्या कर सकते थे। लाचार होकर उन्हें पर्दा खोल देना पडा। एक दिन का दृश्य तो ऐसा था। परन्तु, कुछ दिन के पश्चात्

लोगो ने देखा कि वे ही राव जी साहब व्याख्यान स्थल में जन साधारण के साथ उसी छाया में बड़े प्रेम और भक्ति से बैठ कर व्याख्यान सुनते थे । और नियमित रूप से आते थे । इतना ही नहीं, वे व्याख्यान के अतिरिक्त समय में आकर भी चरित्रनायकजी से उपदेश लाभ,और शंका समाधान किया करते थे । कुछ दिन के बाद आपके रनिवास में से चरित्रनायक जी से प्रार्थना कराई गई कि हम भी आपके उपदेशामृत की प्यासी हैं । उसे चरित्रनायकजी ने स्वीकार किया । राव जी साहब ने सर्वसाधारण को व्याख्यान के लिये अपने महलों में आने की आज्ञा दे दी । बिछायत आदि हुई, बहु मूल्य गलीचे बिछाये गये और चरित्रनायकजी को आदर पूर्वक वहा लिवा ले गये । वहा की सजावट देख कर चरित्रनायक जी ने अपने आसन की सब बिछायत हटवादी और अपने नेश्राय के वस्त्र बिछाकर उन पर विराजे । यह देख कर रावजी साहब ने भी अपना गलीचा उठवा दिया और सर्वसाधारण की भांति बैठे । इसके पश्चात् सुमधुर मङ्गलाचरण के साथ आपने व्याख्यान आरम्भ किया । जिस में ॐकार शब्द की व्याख्या कर उसी पर व्याख्यान की समाप्ति की । इसको सुनकर राव जी साहब के हृदय पर बड़ा प्रभाव हुआ । उन्हों ने अधिक मास में कतई शिकार न करने और हमेशा के लिये कुछ जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा की । गाव में आपके और भी कुछ व्याख्यान हुए । इसके पश्चात् चरित्रनायक जी ने अकस्मात् वहा से विहार कर दिया । जब यह खबर राव जी सा० को मिली तो वे शीघ्रही ५० ६० आदमियों के साथ चरित्रनायकजी की सेवा में बड़े बाग में आये । रावजी सा० बड़े प्रतिष्ठित हैं । और जहा कहीं, जब कभी जाते हैं तो आपके साथ प्राय ५०

६० व्यक्ति हमेशा रहते हैं, किंतु, देर हो जाने से चरित्तनायक जी न जाने कितनी दूर पहुच जाय, यह सोच कर साथ के लोगों को छोड कर वे अकेले ही बडी शीघ्रता से चरित्तनायक जी के पोछे २ आये। और अनुनय विनय कर आपको पुन नगर में ले गये। नगर में ले जाते समय राव जी सा० के और २ लोग भी आ पहुँचे थे। अस्तु कुछ दिन आप फिर वहा विराजे और तत्पश्चात् विहार कर रायपुर होते हुए कोसीथल पधारे। वहा ठाकुर सा० पद्मसिंह जी के पुत्र जवानसिंह जी तथा उनके छोटे भ्राता दोनों चरित्रनायक जी के दर्शनार्थ आये थे। फिर वहा से विहार कर आप चित्तोड पधारे।

प्रकरण २९ वां।

सम्वत् १९७६ दिल्ली

पूज्य श्री से भेंट

माधोपुर के बाजार में एक व्याख्यान हुआ। वहा एक बाई भी दीक्षा लेने वाली थी उसको महाराज श्री ने दीक्षा देकर फूला जी आर्या के नेश्राय * में किया। महावीर जयन्ती मनाई गई। सब सम्प्रदाय के लोगो ने योग दिया। चरित्र नायक जी के उपदेश का अच्छा प्रभाव पडा। तथा धर्म्म प्रचार त्याग प्रत्याख्यान हुआ। यहा तक कि एक आलिम हाफिज जो पहले इस्लाम के अनुयायी थे उन्होंने भी जैन धर्म्म के सिद्धान्तो को अङ्गीकार किया। सामायिक सीखी और अब भी वहा मुख वस्त्रिका बाध कर बराबर सामायिक करते हैं और दया पौषध रखते हैं। तथा अन्यान्य लोगों को भी ऐसा ही उपदेश देते हैं और जैन बालकों को सामायिक प्रति क्रमण सिखाते हैं। वहा से आपने विहार कर श्यामपुर, चेतेड गिफगढ होते हुए अलवर प्रस्थान किया। वहा कुछ व्याख्यान देकर देहली की ओर विहार किया। यथा समय देहली सदर पधारे। वह आहार पानीकर चादनी चौक में पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज

---

* सुपुर्दगी



श्रीमान रायशेठ चांदमलजी साहबके सुपुत्र श्रीयुत
शेठ प्यारेलालजी साहेब—अजमेर

A 5252-Lakshmi Art Bombay, 8

की सम्प्रदाय में युवराज पद से किस को विभूषित किया जाय तो पूज्य श्री तथा चरित्रनायक जी ने माधव मुनिजी के के लिये ही अपनी अनुमति दी अस्तु । मानपाडा और लोहामण्डी में चरित नायकजी का " मनुष्य के कर्तव्य " पर बडा ओजस्वी व्याख्यान हुआ । फिर आप वहा से विहार कर जयपुर पधारे । जहां पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा मुनिश्री देवीलाल जी महाराज और तपस्वी बाल चंदजी महाराज तथा खूब चंदजी महाराज आदि विराजते थे । वहा कुछ व्याख्यान हुए पश्चात् चैत्र शुक्ला ११ को किशनगढ पधारे ।

प्रकरण ३० वां।

सम्वत् १९७७ जोधपुर

पूज्य श्री का देहावसान

किशनगढ में सर्राफे में व्याख्यान की व्यवस्था हुई। म हावीर जयन्ती पर सरकार की ओर से छाया के लिये तम्बू का प्रबन्ध हुआ। आप के व्याख्यान की प्रसिद्धि तो पहिले ही हो चुकी थी इसलिये विना सूचित किये ही बात की बात में ३०००हजार मनुष्य एकत्रित होगये कुछ लोग बाहर से भी दर्शनार्थ आये हुए थे। व्याख्यान में सर्व प्रथम शास्त्र-विशारद पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज ने महावीर स्वामी के जन्म पर कुछ कहा तदनु श्री देवीलाल जी महाराज ने महावीर स्वामी की वीरता का दिग्दर्शन कराया बाद चरित्रनायक जी ने महावीर स्वामी के आचरण विषयिक एक मनोरम व्याख्यान दिया, जिस का श्रोताओं पर बड़ा प्रभाव पड़ा। इस के प श्चात् आप अजमेर पधारे जिस का मुख्य कारण यह था, कि वहां पारस्परिक वैमनस्य बढ़ा हुआ था। चरित्रनायक-

जी तथा (पूज्य श्री देवीलालजी महाराज नूप चन्द जी महाराज) सहित पधारे थे। मुमइयों के नोहरे में ठहरे थे। पूज्य श्रीलालजी महाराज के पधारने की सूचना मिलने पर निश्चित् दिवस के दिन उक्त पूज्य श्री के स्वागत के लिये पधारने को श्री सङ्घ ने पूज्य मुन्नालालजी महाराज से प्रार्थना की कि यदि आप पधारेंगे तो उस का जनता पर अच्छा प्रभाव पडेगा और मेल बढेगा। पूज्य श्री ने इसे स्वीकार किया और चरित्रनायकजी को स्वागत समारोह में जाने की आज्ञा दी। तदनुसार हमारे चरित्रनायक जी पांच साधुओं सहित नये शहर की सडक पर पधारे। वहीं पर सब का सम्मिलन हुआ तथा कुछ बात चीत हुई। पूज्य श्रीलालजी महाराज ढड्ढा जी की हवेली में आकर ठहरे चरित्रनायक जी ने प्रार्थना की कि आप भी हमारे निकट ही ठहरें परन्तु वैसा न हुआ फिर सन्ध्या को नूपचन्द जी महाराज और चौथमल जी महाराज ६ साधुओं सहित पूज्य श्रीलालजी महाराज के पास आये और प्रार्थना की कि आप का हमारा व्याख्यान एक ही स्थान पर हो तो अच्छा है क्योंकि लोगों का पारस्परिक वैमनस्य दूर करना है। इस कारण सम्मिलित उपदेश का उन पर और भी अधिक प्रभाव पडेगा किन्तु इस को पूज्य श्री ने स्वीकार न किया अन्त में उपदेश पृथक् २ ही हुए पूज्य श्रीलालजी महाराज ने वहां से नये-शहर की ओर विहार किया मार्ग में तबीजी नामक गांव आया उस में पूज्य श्रीलालजी महाराज भी ठहरे हुए थे वहीं चरित्रनायक महोदय भी पधारे दोनों का सम्मिलन वहां हुआ पूज्य श्री ने बडा प्रेम प्रदर्शित किया। वहां एक गांव का पटेल बैठा था उस से पूज्य श्रीलालजी महाराज ने

फरमाया कि हमारे ये चौथमल जी बड़े व्याख्यान देने वाले हैं (म्हाके ई चौथमल जी बडा बखाणी हैं) तुम भी इनका उपदेश सुनना ।

इसके पश्चात् चरित्रनायक जी यहा से विहार कर नये शहर पधारे यहा बाजार में व्याख्यान हुआ जब आप तख्त पर विराजे हुए उसी मार्ग पर व्याख्यान दे रहे थे जिधर स हो कर पूज्य श्रीलालजी महाराज निकलने वाले थे तो आप तख्त छोड कर थोडी देर के लिय पृथक् होगये । आपने सोचा कि यह अनुचित है कि पूज्य श्री इधर से निकलें और म तख्त पर बैठा हुआ व्याख्यान देता रहूँ ! पाठक ! देखिये साम्प्रदायिक-मतभेद होने पर भी चरित्रनायक जी के कैस उच्च वि चार थ । कुछ दिन नये शहर में व्याख्यान देकर पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा हमारे चरित्र नायक जी चतु र्मास के लिये जोधपुर पधारे क्योंकि अजमेर में जोधपुर श्री सङ्घ की प्राथना स्वीकार हो चुकी थी ! नये शहर का श्री सङ्घ भी अजमेर में इसी अभिप्राय से आया था परन्तु उसकी प्रार्थना पर पहिले पूज्य श्री लाल जी महाराज की स्वीकृति हो चुकी थी । अत पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज और चरित्र नायकजी घर होते हुए निमाज पधारे । यहा व्याख्यान देकर विहार करते हुए बिलाडे पधारे यहा ठिकाना रासफा परगना जसवन्तपुरा (मारवाड) के कु अर चमनसिंह जी तथा डाक्टर जवेरीमल- जी भी आय थे । फिर वहा से भावी होते हुए पीपाड दिया । कुछ व्याख्यान उपदेश देकर आषाढ बुदि ३० को महा मन्दिर पधारे । वहा दो व्याख्यान देकर आषाढ सुदि ३ को चरि—

यकजी जोधपुर पधारे। राव राजा रामसिंह जी की हवेली में उनकी आज्ञा से आपका निवास कराया गया। उस समय पूज्य श्री तथा चरित्र नायक जी के साथ ६ साधु और थे। जनता व्याख्यान सुनने को उत्सुक हो रही थी। किन्तु उसके दुर्भाग्य से वैसा न हो सका। जोधपुर श्री सघ को जैतारण से तार द्वारा सूचना मिली कि पूज्य श्रीलालजी महाराज चतुर्मास के लिये नये शहर पधारते हुए यहा ठहरे थे कि अकस्मात् तीज के दिन देवलोक हो गये। इस से श्री-सघ जोधपुर में उदासी छागई। चरित्रनायक जी ने भी बहुत खेद प्रगट किया और फरमाने लगे कि कैसे लोकोपकारी का वियोग हो गया। जिनकी क्षति पूर्ति होना कठिन है। क्या हुआ जो साम्प्रदायिक मत-भेद था। किन्तु, वह भी पिता पुत्र की भांति था। इसके अनन्तर आपके शिष्य प्यारचन्द जी महराज ने आपसे प्रार्थना की कि पूज्यश्री का श्लोक बद्ध परिचय और सक्षिप्त गुणानुवाद चरित्र सहित प्रकाशित करें। परन्तु, आप ने फरमाया कि निस्सन्देह ऐसा होना बहुत श्रेष्ठ और आवश्यक है। साथ ही अपना कर्तव्य भी है। परन्तु, समाज इसको ठीक न समझेगा कहेगा कि कल तो अनबन थी और आज प्रेम दिखाने लगे। 'जीवित बाप से दगमदगा, मुवे बाद पहुचावे गगा, अत यद्यपि शुद्ध लोक विरुद्ध ना करणीय ना चरणीय' हे शिष्य! यद्यपि शुद्ध है ठीक है। तथापि लोक विरुद्ध होने के कारण विपरीत मालूम होता है। अस्तु। चरित्र नायक जी ने व्याख्यान स्थगित रखा लोग झुण्ड के झुण्ड आये क्योंकि उन्हें विदित नहीं था। किन्तु, जब विदित हुआ तो वापिस चले गये। पञ्चमी से आपका व्याख्यान प्रारम्भ हुआ। प्रथम पूज्य

श्री मुन्नालाल जी महाराज भगवती जी सूत्र फरमाते। पश्चात् चरित्र नायक जी ओज पूर्ण व्याख्यान देते। नगर की गली २ में आपके व्याख्यान की धूम मच गई। राज कर्मचारी जागीरदार सब आते थे। इसी समय पूज्य-श्री की सेवा में रहने वाले तपस्वी फौजमल जी महाराज ने ६७ दिन की तपस्या की। लोग ऐसी कठिन तपस्या का हाल सुन २ कर कहते थे कि क्या इन में ईश्वरीय अंश है! इस तपस्या और चरित्रनायक जी के व्याख्यान का जैनेत्तर लोगों पर ऐसा प्रभाव हुआ कि वह आपसे सामायिक प्रतिक्रमण सीखने लगे। एक अग्रवाल भाई ने कभी उपवास भी नहीं किया था उसने ८ उपवास किये और जन्म भर के लिये वनस्पति का परित्याग किया। स्वर्णकारों (सुनारों) ने मिलकर दया प्रभावना की। उनकी महिलाओं ने एकान्तर * और बेले (१) तेले (२) आदि बहुत से किये। और सब चरित्रनायकजी के पूर्ण भक्त होगये। पर्यूषण पर्व आजाने पर श्रोताओं की संख्या और भी बढने लगी अतः उन दिनों व्याख्यान पंचायती हवेली में होने लगे। परन्तु उसमें भी लोगों की बड़ी भीड़ हुई। इसके पश्चात् ६७ की तपस्या का पूर निकट आया। उस दिन इकत्ता रखने (जीवहिंसा) बिल्कुल न होने) के लिये प्रयत्न किया गया। ओसवाल लोग मिल

---

* एक दिन उपवास करना और एक दिन आहार लेना।

(१) बेला दो दिन का उपवास।

(२) तेला--तीन दिन का उपवास।

(३) पारणा उपवास अथवा व्रत नियम के समाप्त होने पर प्रकृत्यनुसार उपयोग्य वस्तु के ग्रहण करने को पारणा कहते हैं।

कर राजसभा (कौन्सिल) में गये । पूछने पर लोगोंने तपस्या का वृतान्त सुनाकर अकते के लिये प्रार्थना की जो स्वीकार हुई । His Highness Lieut General Maharaja Sir प्रतापसिंह जी साहब बहादुर (G C S I, G C V O, G C B, L D D C L, A D C Knight of Sant John of Jeruslem Regent of Mewar State) रेजीडेन्ट ने शहर कोतवाल के द्वारा घोषणा करादी (ढ़ंढोरा पिटवादा) कि अमुक दिन हिंसा बिल्कुल बंद रहे ! २१ कसाइयो ने कहा कि हाकिमो के यहाँ तथा सरकारी रसोडे मे जाता है । तब मगलचन्द जी सिंघवी ने टेलीफोन द्वारा प्रतापसिंह जी साहब से पूछा और जालिम सिंहजी साहब को सूचना की तब उत्तर आया कि कहीं नहीं लिया जायगा । यहा तक कि शेरो को भी मास के बदल दूध दिया जाय । इस प्रकार उस दिन कसाइयों ने हिंसा तथा हलवाई भड़भूजे, तली तमोली, लुहार सबने अपना २ कार्य बन्द रखा । पूर के दिन व्याख्यान उसी हवेली में हुआ । राव राजा रामसिंहजी साहब ने अपने दीवान खास में भी लागों को बैठने की आज्ञा दे दी । फिर भी स्थान की सकीर्णता ही रही उस दिन लूले, लगडे, अपाहिजो और दीन दुखियो को भोजन वस्त्र दिया गया । कसाइयों के २०० बकरो के प्राण बचाये गये राव राजा रामसिंह जी ने अपनी ओर से तीस बकरो को अभय दान दिया । और ५० अपगो को भर पेट लड्डू खिलाये भादड़ी (मेवाड़) निवासी भैरवलाल जी ओसवाल जिनकी अवस्था २३ वर्ष की थी वैराग्य भाव से कार्तिक शुक्ला १२ को चरित्रनायक जी के पास दीक्षा लेने को आये थे । इन्हें १६

यप की अवस्था में ही वैराग्य उत्पन्न होगया था, और चरित्र-नायक जी के साथ उस समय कानोड़ तक चल आये थे किन्तु वैरागी के काका हजारीमल जी साहब आकर बलात्कार उन्हें वापिस लेगए थे। इन्हें पक्की लगन थी—सच्चे विरागी (वैरागी) हो चुके थे। अतः घर से निकल कर चरित्र नायक जी की सेवा में आगये। पहिले इनके साथ इन्हें घर पर ले जाकर मारना, पीटना, मिरचियां की धूनी देना आदि सख्ती का बर्ताव शुरू किया गया। परन्तु, उन वैरागी का भाव वैसा ही रहा। कई कारणों से सात वर्ष उन्हें फिर घर पर रहना पड़ा और अब जोधपुर आये। जोधपुर श्रीसङ्घ तो दीक्षा दिलाने को प्रस्तुत था ही। माघवदी २ को भेरजलाल के थाने (पड़ाये गये और माघ वदी ८ को प्रातःकाल १० बजे नियमानुसार उनकी दीक्षा हुई। साथ ही जन्म नाम बदल कर भैरवलालजी वृद्धिचन्द जी रक्खा। क्योंकि चरित्रनायक जी की सेवा में भैरवलालजी नाम के शिष्य पहिले से ही थे। वहा से विहार कर आप पधारे तो साजतिये दरवाजे पर मालियों ने रोक लिया और बड़ा प्रेम दिखलाया। उपकार समझ कर चरित्र नायक जी वहा ठहर गये और व्याख्यान देना आरम्भ किया। रक्षाधिपति मालियों की इच्छा थी कि नव दीक्षित भैरवलाल जी की बड़ी दीक्षा का उत्सव समारोह के साथ हम यहीं करें। किन्तु, श्रीसङ्घ ने इसे अस्वीकार किया। चरित्र नायक जी भी वहा से विहार कर पाली पधारे। वहा कुछ व्याख्यान दिये। जिन का ऐसा प्रभाव पड़ा कि किसी समय माधव मुनि जी महाराज वहा जो एक जैन-पाठशाला खोलने की योजना कर गये थे, वह कार्य रूप में परिणत हुई और अब तक चल रही है। वहा से विहार कर आप सोजत पधारे वहा

भी व्याख्यान द्वारा और कई दुर्व्यसनों का त्याग हुआ फिर नये शहर में पधार कर सट्टे के कटले में व्याख्यान दिया वहा अजमेर से पूज्य श्री शोभाचन्द जी महाराज का सन्देशा आया कि यहा दो वैरागी तथा दो वैरागिनी दीक्षा मुमुक्षु हैं। उनकी दीक्षा होगी सो आप पूज्य मुन्नालाल जी सहित पधारें। अजमेर श्री सङ्घ इस सन्देशे को लेकर नये शहर आया और पूज्य श्री एवम् चरित्रनायक जी से आग्रह पूर्वक प्रार्थना की। जिसे आपने स्वीकार कर लिया। क्योंकि आप का हमेशा से पूज्य श्री शोभाचन्द जी महाराज से बडा प्रेम रहा है। अस्तु। नये-शहर से विहार कर पूज्यश्री व आप यथा समय अजमेर पधारे। अगवानीके लिये बहुसख्यक लोग और साधु सन्त आये। पूज्य श्री के निकट मोतीकटरे में ही आप ने निवास किया। बाहर से भी बहुत लोग आये थे। जिन के आतिथ्यका प्रबन्ध रिया वाले रायबहादुर सेठ छगनमल जी, मगनमलजी प्यारेलालजी की ओर से था। यथा समय दीक्षा हुई उस समय का दृश्य अवलोकनीय था। वैरागियों में एक की अवस्था ६ वर्ष की और दूसरे की ११ वर्षकी थी सफेद बाल वाले वृद्ध लोग देख देख कर चकित होरहे थे कि इस अवस्था में ये बालक सासारिक सुखो को त्याग कर रहे हैं। और हमारी इस अवस्था में जब कि सफेदी आगई है, विषय वासना से मोह नहीं छूटा है आदि। उसके पश्चात् पूज्य श्री के साथ चरित्र नायक जी अजमेर से विहार कर नसीराबाद पधारे वहा आपके उपदेश से कई खटीको ने जीव हिंसा का परित्याग किया। और दूसरे रोजगार में प्रवृत्त हुए। वहा से कवरियास होते हुए भीलवाड़े पधारे। नसीराबाद से चलते हुए मार्ग के इन सब स्थानों में अच्छा धर्म प्रचार हुआ। श्रावकों ने ४० बकरों के प्राण

बचाये तथा व्रत उपवासादि किये । भीलवाडे से उपदेश क
फागुण सुदि १० को आप चित्तौड पधारे । आप के व्याख्या
और उपदेश से यहा इस अवसर पर बहुत सुधार हुआ
ओसवाल माहेश्वरियों ने प्रतिज्ञा करके जाति में प्रचलित इ
कुरीति को हमेशा के लिये बन्द कर दिया कि दहेज न लेना
जो कन्या विक्रय करेगा उसको जाति दण्ड मिलेगा। य
कोई असमर्थ हो, और कन्या का विवाह न कर सके
उसको पचायती कोथली (फण्ड) में से ४००) रु० तक बि
सूद के मिलेगा। जिनको वह अपनी सहूलियत से अदा करदे
सुनारो ने प्रतिज्ञा की कि एकादशी और अमावस्या को अपन
अग्नि से काम करने का धंधा न करेंगे। मोचियो ने हर अम
वस्या व पूर्णिमा को मास मदिरा का सेवन न करने की प्रतिज्ञ
की। साथ ही यह भी कि उन दिनों में जूते न गाठना औ
ईश्वर भजन करना। इसी प्रकार कुम्हारो ने अवाड़े न भर
की, तथा गाडी वालो ने परिमाण से अधिक बोझा न लाद
की प्रतिज्ञा की। यहा २१ व्याख्यान देकर आप किले पधारे
यहा चार भुजा जी के मन्दिर में व्याख्यान दिये। महन्त लाल
दासजी तथा उनके शिष्य प्रति दिन व्याख्यान सुनते । इन्ह
दिनों उधर होकर टेलर साहब बेलगाव (दक्षिण) जारहे थे
मार्ग मे उन्हें सूचना हुई कि चरित्रनायक जी किले प
विराजते हैं तो दर्शन करने को उत्सुक हुए। किन्तु, शीघ्रत
का कार्य्य होने से न रुकसके। अत पत्र लिखा जिसका आशय
यह था:—

"चरित्रनायक जी अत्यन्त नम्रता पूर्वक अभिवादन क
प्रार्थना है कि मुझे आपके दर्शन न हुए इसका खेद है। यदि

येल गाव मे कोई श्रावक होतो उसके द्वारा मुझे आप अपनी प्रसन्नता के समाचार अवश्य भिजवाने की कृपा करें।"

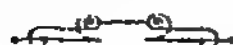
२६।३।२१ दासानुदास
एफ जी टेलर

यहा से विहार करने का विचार किया तो महन्त लालदासजी ने बडा आग्रह किया। उनके शिष्य तो चरित्रनायक जी के चरणों पर गिर गये और बहुत करुण स्वर से प्रार्थना करने लगे। तब चरित्रनायक जी उन्हें समझा कर अपने स्थान पर पधारे। पीछे से महन्त लालदास जी ने अपने शिष्य के साथ इस प्रकार का एक पत्र भेजा —

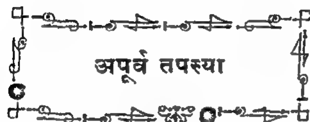
श्रीमान् स्वामी महाराज श्री चोथमलजीमहाराज
की सेवा में —

प्रार्थना है, कि आप सज्जन पुरुष एवं गुण निधान हैं। परमात्मा आप जैसी दयालु आत्माओं को दीर्घायु करे। आप नगर के सौभाग्य से यहा के नर नारियो के अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिये सूर्य रूप में प्रगट हुए हैं। आपके रस भरे उपदेशों का ज्ञानामृत पान कर सब लोग अपने को बडा सौभाग्य शाली समझ रहे हैं। आज कल ससार की गति कुछ और ही होरही है। आपके उपदेश से उसके सुमार्ग पर आजाने की पूर्ण सम्भावना है। आपको तेरस तक तो और विराजना पडेगा क्योंकि सब लोगों का आग्रह है। यदि आप स्वीकार न करेंगे तो हमें विवश होकर भगवान् महावीर की शपथ दिलानी पडेगी, आशा है, इस पर विचार कर आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार करेंगे।

प्रकरण ३१ वां



सम्वत् १९७८ रतलाम



अपूर्व तपस्या

चित्तौडगढ से विहार कर घटियावली पधारे। यहा चरित्र-
यक जी के पुऊ व्याख्यान हुए। महाजन व कृषक लोग बडी
व से आप का उपदेश ग्रहण करते थे। उन्होंने बहुत त्याग
या। वहा के ठाकुर साहब यशवन्तसिंह जी तथा उनके काका
हब जालिमसिंह जी नियमित रूप से व्याख्यान सुनते थे
कुर सा० ने परिन्दे जानवरो को न मारने की प्रतिज्ञा की।
र मुनि श्री छगनलाल जी महाराज के उपदेश से तालाब
सरहद में किसी जीव को मारने की मुमानियत के पत्थर
ाये। जालिमसिंह जी ने शेर सुअर तथा परिन्दे जानवरो
न मारने की प्रतिज्ञा की। और कालूसिंह जी ने चार
नवरो के अतिरिक्त किसी जीव को न मारने की प्रतिज्ञा
। किशन खटीक ने १, २, ५, ८, ६, ११, १४, अमावस और
र पूर्णिमा इन तिथियो पर अपना धधा (हिंसा) न
ने की प्रतिज्ञा की। वहा से विहार कर आप गरुण्ड पधा-

रे। वहा एक व्याख्यान देकर हतपन्दे की ओर विहार किया।' मार्ग के गावो में लोगो की प्रार्थना पर कृपको में व्याख्यान दिये। बहुत से कृपकों ने त्याग किया। प्रतिवप वहा कई बकरे मारे जाते थे उसको न मारने की सबने प्रतिज्ञा की। इसी प्रकार एक व्याख्यान हतपन्दे में हुआ।

वहा से विहार कर नियाहेडे पधारे। बाजार में आप के बडे ओजस्वी और सुललित व्याख्यान हुए। हिंदू मुसलमान भाई, दिगम्बर जैन मदिर मार्गी श्रावक आदि आते थे। सब पर बडा प्रभाव पडा, और खूब त्याग हुआ। चैत्र शुक्ला १३ निकट थी अत आपने 'ऐक्यता' पर एक व्याख्यान दिया और फरमाया कि *महावीर जयन्ती सब फिरके वालो को* मिलकर आनन्द पूर्वक मनानी चाहिये। अस्तु। सब तैयारी होने लगी। दिगम्बर भाइयो ने मण्डप सजाया। आदि और और काम भी इस ढग से हो रहे थे जिन से यह स्पष्ट होगया था कि सब जैन भाई एक होकर इस उत्सव को मना रहे हैं। वास्तव में था भी ऐसा ही। फिर आपने सादडी (मेवाड) की ओर विहार किया। क्योंकि सादडी श्री सघ चित्तौड में उपस्थित होकर प्रार्थना कर चुका था, विनोते होते हुए बडी सादडी पधारे। वहा आप के २२ व्याख्यान हुए। जैन, अजैन लोगो ने आप के उपदेश से खूब त्याग किया।

वहा से विहार कर डूगरे पधारे। और इसके पश्चात् फिर सादडी। वहा दो व्याख्यान आप के और हुए। जिनका प्रभाव यह हुआ कि वहा स्त्रियो में एक क्लेश फैला हुआ था। अर्थात् ५-७ स्त्रियो पर अच्छता दोष लगा रक्खा था उनको

दूसरी क्रिया छूती तक न थीं। उसको मिटाने के लिये पहिले कई साधु महात्माओं ने उद्योग किया। किन्तु, किसी को सफलता न हुई। चरित्रनायक जी के उपदेश से वह सब दूर होकर परस्पर पेक्यता होगई। इस प्रकार शांति स्थापन कर आप वहा से छोटी सादडी पधारे। जहा पूज्य श्रीलाल जी महाराज की सम्प्रदाय के अनुयायी मुनि महाराज विराजते थे अत आपने व्याख्यान नहीं दिया। जनता और विशेषत राज्य कर्मचारियों ने जब आप से अधिक आग्रह किया तो आप ने उत्तर दिया कि व्याख्यान तो हो ही रहे हैं। इस पर लोगों ने प्रार्थना की कि उनका व्याख्यान पचायती नोहरे में होता है। आप का बाजार में होगा। सर्वसाधारण की बडी लालसा है अत कृपा कर आप कम से कम एक व्याख्यान तो अवश्य ही दें। किंतु चरित्रनायक जी को अवकाश न था, इस से न ठहर सके। वहासे प्रात काल विहार कर आप नीमच पधारे। वहा कुछ व्याख्यान दिये। फिर मल्हारगढ होते हुए मन्दसोर पधारे। जहां श्री नन्दलाल जी महाराज व श्री खूबचन्द जी महाराज आदि विराजते थे उनके दर्शन कर दो व्याख्यान दिये और जावरे विहार किया। यथा समय दलचीपुर ढोढर होते हुए जावरे पधारे, वहा चार व्याख्यान दिये। यहीं पर रतलाम श्री सङ्घ ने आकर स्पर्शना* करने की स्वीकृति कराई। पश्चात वहासे चरित्तनायकजी ने विहारकर नामलीकी ओर प्रस्थान किया वहा के ठाकुर साहबश्री महिपालसिंहजी तथा उन के भाईश्री राजेन्द्रसिंहजी भी व्याख्यान में आये और बडी भक्ति दिखाई। पश्चात् वहा से सेजावते पधारे। जहाँ रतलाम के

*पधारना, क्षेत्र स्पर्शना।

श्रावक गण पहिले ही से स्वागत के लिये उपस्थित थे। रात को वहीं निवास किया। प्रातःकाल रतलाम पधारे। वीर जय ध्वनि के साथ राजमहल के दरवाजे माणिक चौक, चौमुखी-पुल और सर्राफा म होते हुये चाँदनी चौक में श्रीमान् सेठ उदयचन्द जी साहब के मकान में विराजे। और उसी स्थान पर बाजार में व्याख्यान देना शुरु किया। जेठ सुदि १४ को जनता ने बड़े आग्रह से चतुर्मास के लिये प्रार्थना की। जब आपने सब का आग्रह देखा तो फरमाया कि पूज्य महाराज (पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज) आज्ञा दे दें तो मुझे कुछ आपत्ति नहीं। इस पर रतलाम श्री सङ्घ ने नये शहर पूज्य श्री (पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज) का तार दिया और चतुर्मास के लिय प्रार्थना की जिसके उत्तर में स्वीकृति आगई। आषाढ़ सुदि १ को आपके रतलाम में चतुर्मास होनेका निश्चय हुआ। पश्चात् वहा से विहार कर आप धानासुते पधारे। वहा ६ व्याख्यान देकर खाचरौद पधारे, क्योंकि वहा का श्री-सङ्घ पहिले प्रार्थना कर चुका था। आषाढ सुदी ७ को कुछ व्याख्यान दे आपने खाचरौद से रतलाम के लिय विहार किया आपके स्वागत के लिये बहुत से नरनारी आये। नगर म प्रवेश कर उन्हीं श्रीमान् उदयचन्द जी के मकान में विराजे। यथा समय व्याख्यान होने प्रारम्भ हुये। प्रथम आपके सुयोग्य शिष्य प्यारचन्द जी महाराज ज्ञाता सूत्र फरमाते, फिर आप अपना मनोहर व्याख्यान देते। आपकी वक्तृत्व शक्ति ऐसी बढ़ी हुई है कि चलता मनुष्य भी ठहर जाय और बिना व्याख्यान सुने न हटे। सारे नगर में आपके व्याख्यान की धूम मच गई बड़े२ राजकर्मचारियों और पंडित त्रिभुवन नाथ जी जुत्शी लेट





दानवीर रायबहादुर सर नाईट श्रीमान
सेठ हुकमीचदजी इन्दोर

परिचय—प्रकरण ११

कौंसिल मेम्बर रतलाम ने आकर लाभ लिया। उस समय चरित्रनायक जी के सुयोग्य शिष्य प्यारचन्द जी महाराज के छोटे भ्राता चादमल जी महाराज वैराग्य लेकर प्रति क्रमण सीख रहे थे। तथा जोधपुर निवासी बीसे ओसवाल नाथूलाल जी और रामलाल जी भी वैराग्य पाकर प्रति क्रमण का अभ्यास कर रहे थे। बड़ा आनन्द आ रहा था। दूर २ के श्रावक लोग दर्शनार्थ आते थे। धर्म्म ध्यान भी खूब होता था रतलाम के क्षमा पत्रमें यथा समय यह प्रकाशित हो चुका है। यहाँ पर चरित्रनायक जी की सेवा में रहने वाले तपस्वी श्री मयाचन्दजी महाराजने तपस्या की। सारा नगर आपके दर्शनों को आता था जिसमे स्थान भर जाता था। चरित्रनायक जी के उपदेश को जो व्यक्ति सुन लेता है उसका उस पर आजन्म अमिट प्रभाव हो जाता है। यही नहीं कि व्याख्यान सुने उसी समय तक उसका लक्ष्य रहे। इसका प्रमाण महन्त लालदास जी के नीचे के पत्र से ज्ञात होगा जो चरित्रनायक जी का पहिले व्याख्यान सुन चुके हैं। अजैन होने के कारण उन्होंने चरित्रनायक जी के नाम पर ही पत्र भेजा है।

स्वस्ति श्री रतलाम नगरे शुभस्थान सकल गुण-निधान गगाजल निर्मल चरित्रनायक जी श्री चौथमल जी योग्य लिखी किला चित्तौड़गढ से महन्त लालदास का प्रणाम स्वीकृत हो। अत्र कुशलं तत्रास्तु। यहा पर आपकी कृपा ही परिपूर्ण है, स्वामी! मुझको आपके अमृत सम वचनों का स्मरण होने पर हृदय गद्गद हो जाता है।

> पाच साधु के बीच में, राजत मानो चन्द।
> अमृत सम तुम बोलते, मिटत सकल भ्रम फंद॥

दृष्टि सुहृद मुनि चौथ की, सब को करे निहाल।
गति विधि हू पलटे तबैं, कागा होत मराल ॥
सदगुरु शब्द सु तीर हैं, तन मन कीन्हो छेद ।
वेदर्दी समझे नहीं, विरही पावे भेद ॥
हरिभक्ता अरु गुरुमुखी, तप करने की आस ।
सतसंगी साचा यती, वहि देखू मैं दास ।

आपके पाच रत्त की थापुणा का हिसाव कब तक होगा* पत्रोत्तर का अभिलाषी हूँ। आशा करता हूँ कि पत्र पढते ही अपनी कुशलता का पत्र देकर मेरी अभिलाषा पूर्ण करेंगे।

१६७८ का भादवा वदि १०
ता० २८-८-१६२१

आपका शुभेच्छुक—
महन्त लालदास श्री चारभुजा
जी का मंदिर किला
चित्तौडगढ (मेवाड)

---

*पाँच व्याख्यान की प्रतिज्ञा पूर्ति।

मुनि महाराज महन्तजी को एक बार वचन दे आये थे कि फिर कभी अवसर होने पर एक ही क्या पाँच व्याख्यान भी यहाँ दे दिये जायँ तो क्या हानि है?



भादवा शुक्ला ५ को तपस्या का पुर था। उस दिन लूलें, लगडे, अपाहिजों को भोजन, वस्त्र दिया गया। पचमी के दिन अकता पलता है। किन्तु इस अकते पर शेरों को भी दूध पिलाया गया। वेसे हमेशा शेरों के लिये हिंसा हुआ करती थी। चरित्रनायक जी का व्याख्यान सुनने की रतलाम नरेश का भी इच्छा हुई। तब आश्विन कृष्णा १२ तारीख २८ सितम्बर सन १६२१ को हि० हा० कर्नल महाराजा सर सज्जनसिंह जी के० सी० एस० आइ० के० सी० जी० ओ० ए० डी० सी० टू० हिज रायल हाइनेस दी प्रिन्स ओफ वेल्स रतलाम कोंसिल मेम्बरों तथा दीगर सरदार और आफिसरान के साथ व्याख्यान सुनने का पधारें। सरकार का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। औषधि का सेवन हो रहा था तो भी १॥ घटे तक विराज कर आपने बड़े ध्यान से व्याख्यान सुना। बीच में चरित्रनायक जी ने ३—४ बार व्याख्यान समाप्त करना चाहा किन्तु श्रीमान् महाराजा सरकार साहब ने ऐसा न होने दिया। अन्त में व्याख्यान समाप्त हो जाने पर आपने चरित्रनायक जी से प्रार्थना की कि अभी तो आप विराजेंगे हीं। मे फिर दर्शन लाभ लू गा इन्हीं दिनों जोधपुर स्टेट के भूतपुर्व दीवान साहब के सुपुत्र कान्हमल जी साहब भी चरित्रनायक जी के दर्शनार्थ आये हुये थे उसी समय रतलाम श्रीसङ्घ की प्रार्थना पर चांदमल जी बहोतरे बीस ओसवाल को जो आपकी सेवा में वैराग्यावस्था में थे कार्तिक वदि ७ को दीक्षा दी गई।

उस समय रतलाम श्री सङ्घ ने निमत्रण पत्रों के अतिरिक्त ३७ तार दिये थे जिससे अन्यान्य नगरों से लगभग १००० श्रावक गण आये थे बड़े समारोह से दीक्षा हुई यहा ६ व्या-

ख्यान और देकर आपने नामली की ओर प्रस्थान किया मार्ग में स्टेशन की सडक पर श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी सेठ मिश्रीमलजी मथुरालालजी का बगीचा है वहा उनकी आग्रह पूर्वक प्रार्थना को स्वीकार कर आप ठहरे और व्याख्यान दिया।

शहर से यह स्थान दूर होने पर भी जनता बहुत एकत्र हुई। पश्चात् वहा से सेजावत, घु वास होते हुए नामली पधारे। नामली में श्रीदेवीलाल जी महाराज मिल गये, जो जावरे से विहार कर रतलाम आरहे थे। उनके आग्रह से हमारे चरित्र-नायकजी फिर रतलाम पधारे और कुछ व्याख्यान देकर डूंगर की ओर विहार किया। किशनगढ आदि गावों में होते हुए पेटलावद पधारे। उस समय आपकी सेवा में जोधपुर निवासी नाथूलाल जी जिनकी आयु १६ वर्ष की थी, दीक्षा मुमुक्षु थे। अत पेटलावद श्री सघने प्रार्थना की कि इनकी दीक्षा यहीं होनी चाहिये। तदनुसार अगहन सुदी १५ को दीक्षा हुई। वहा से देवीलाल जी महाराज तथा चरित्रनायक जी विहार कर सारगी पधारे। वहा के ठाकुर साहब ने बडी भक्ति दिखाई। एक दिन वहा चरित्रनायक जी का 'पर स्त्री गमन-निषेध' पर ओजस्वी व्याख्यान हुआ जिस को सुनकर अनेक लोगों ने पर स्त्री गमन न करने की प्रतिज्ञा की। व्याख्यान के अनन्तर एक दिन ठाकुर साहब की ओर से एक पत्र आया जिस में लिखा था —

श्रीमान् महाराज चौथमल जी जैन-श्वेताम्बर
स्थानक वासी की सेवा में:—

कृपा पूर्वक आप मेरे गाव में पधारे और व्याख्यान दिये। वे सब पक्षपात रहित एवम् उपदेश पूर्ण थे। अवसर न होने

से आपका विराजना अधिक न हुआ इस से मैं असन्तुष्ट रहा। आज आपने जो व्याख्यान 'परनारी गमन' पर दिया वह तो महत्व पूर्ण हुआ। मुझे यह लिखते बड़ी प्रसन्नता होती है कि आप में विषय को समझाने की ऐसी उत्तम रीति है कि जिस से हर एक बात मनुष्य के हृदय पर असर कर जाती है। यहां की जनता को आपने धार्मिक और शारीरिक पतन से बचाया इसके लिये कोटिश धन्यवाद! मैंने उस समय प्रतिज्ञा नहीं की थी, इसस सम्भव है, आपको शका उत्पन्न हुई हो। किन्तु, उसका कारण था। और वह यह कि मैं क्षत्रिय हूँ। क्षत्रिय धर्म्म में पर-स्त्री गमन निषेध है। उस पर एक कविका पद्य मुझे स्मरण है। मैं इस को हमेशा ध्यान में रखता हूँ और उसका पालन करता हू।

छप्पय

यह विरद रजपूत प्रथम मुख झूठ न बोले।
यह विरद रजपूत काछ परत्रिय नहिं खोले॥
यह विरद रजपूत दान देकर कर जोरे।
यह विरद रजपूत मार अरियां दल मोरे॥
जमराज पाव पाछा धरे, देखि मतो अवधूत रो।
करतार हाथ दीधी करद, यह विरद रजपूत रो॥

मेरे इस पत्र में कोई अप्रमाणिक शब्द आया हो तो उसके लिये क्षमा चाहता हूँ।

सम्वत् १६७८ पौष कृष्णा ६ — शुभेच्छुक जोरावर सिंह साहरगी।

एक दिन चरित्रनायक जी का व्याख्यान "अहिंसा परमो धर्म" पर हुआ जिस का ठाकुर साहब के चित्त पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसके अनुसार उन्हों ने अपनी रियासत में दो सरक्यूलर भी जारी कर दिये। *

राज महिलाओं तथा अन्यान्य महिलाओं ने भी कई प्रतिज्ञाएँ कीं। उसके पश्चात् चरित्रनायक जी ने नागदे की ओर विहार करने का विचार किया। परन्तु, थादले का श्री सघ साहरगी आगया और आग्रह पूर्वक वहा के लिये प्रार्थना करने लगा। इसको स्वीकार कर चरित्रनायक जीने थादले की ओर विहार किया। बदवेद तथा पेटलावद होते हुए यथा समय थादले पधारे। मार्ग म इन दोनो स्थानो पर व्याख्यान हुए। थादले से व्याख्यान दे झाबुवे पधारे। बोरी के ठाकुर साहब व उनके काका साहब व कामदार साहब न भी व्याख्यान में योग दिया। वहा से चरित्रनायक जी पारे पधारे वहा परस्पर का वैमनस्य दूर कर राजगढ पधारे। राजगढ म हिन्दुओं के अलावा मुसल्मान और बोहर भी व्याख्यान में सम्मिलित होते थे। वे कहने लगे कि यह उपदेशक खुदा का भेजा हुआ मालूम होता है। वहा ३० सिपी लोगो ने (कपड़ा बुनने वालों ने) मासमदिरा का परित्याग किया। जब आप पधारने लगे तो विदा करने को मुसल्मान भी आये। फिर चरित्रनायकजी वहा से किले धार पधारे। वहा देवीलाल जी महाराज की अस्वस्थता के कारण आप कुछदिन ठहरे और व्याख्यान दिये। पहिले इस्लाम धर्म के पेशवा व ईसाइ धर्म के पेशवा आते थे तथा वहा के दीवान साहब भी दो चार व्याख्यान में आये।

* देखिये परिशिष्ट (२)

यहा से केसूर पधारे यहा आस पास के गावों के चमार भी व्याख्यान सुनने को आते थे। उन्हों ने मास मदिरा का त्याग करके यह प्रतिज्ञा की —

पच चमार मेवाडा केसूर

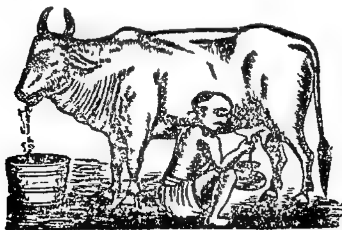
इकरार नामा लिखने वाला चमार प चलुनी वाला दुर्गाजी चौधरी सकल प च मालवा और खाचरोद घासी जी और सकल पच वडलावदा वाला बालाजी और सरपन्च वड नगर मातीजी, इन चार गाव के प च केसूर (परगने धार) में इकट्ठे हुए थ। चम्पाबाई के यहा गगाजल हुआ था जिस म पूज्य श्री श्री १००८ श्री मु नालाल जी महाराज की सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध वक्ता श्री श्री १००८ श्री चौथमल जी महारज के सदुपदेश स सब ने यह प्रतिज्ञा की है कि जो दारु पीवेगा और मास खावेगा सो प च से बन्द होवेगा—जात से छ महीना अलग रहेगा और ११) रु० द ड का देगा यह इकरार नामा महदपुर, उज्जैन, खाचरोद, सुखेड़ा, पिपलोदा, जावरा, मन्दसौर, चित्तौड, रामपुरा,भानपुरा, कुकडेश्वर, मनासा अन्दाजन गाव ६० में माना जावेगा।

फागुण सुदि ३ सम्वत् १६७८ ता० १३ २ २२

अगुष्ठ निशानी
पचलुनी वाला दुर्गाजी
खाचरोद वाला घासी जी
वडलावदा बालाजी पटेल
वड नगर मोती जी पटेल।
पटेल भेरू केसूर, रूपा पन्ना केसूर

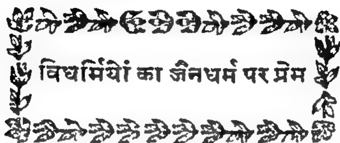
द ब्राह्मण हरिशकर गौर रतलाम जिनके सामने प चों ने लिखा।

यह इकरार नामा हो जाने पर जब,चमारो ने शराब पीना बन्द कर दिया तो ठेकेदार क्रोधित होकर,कहने लगा कि मेरी ५००) रुपया की हानि हुई। उसने सरकार में इत्तिला की। सरकार ने चमारो को बुला कर धमकाया तथा सख्ती की। तब उन लोगो ने कहा कि गर्दन पर तलवार रखदी जाय तो भी हम प्रतिज्ञा भग न करेंगे। एक चमार के मुह में जबरन मुह फाड कर शराब कूढा गया। उसने नहीं पिया। किन्तु स्पर्श मात्र पर ही पचो ने उस पर ११) रुपया दण्ड कर के उसकी मिठाई चटवाई। जिससे मालूम हो कि मदिरा स्पर्श पर ही इतना दण्ड हुआ तो पीने पर न जाने कितना हो। फिर वहा उपदेश कर चरित्र नायक जी इन्दौर पधार गये वहा पीपली बाजार में ठहरे और श्रीयुत् नन्दलाल जी भडारी की पाठशाला में कुछ व्याख्यान दिये और फिर देवास की ओर विहार किया।



प्रकरण ३२वां

सम्वत् १९७९ उज्जैन



देवास में आपका व्याख्यान दरबार हाई स्कूल में हुआ। एक बार व्याख्यान कन्यापाठशाला में भी हुआ एक दिन श्रीमान् देवास नरेश (धाती २) सर मल्हार राव बाबा सा० के० सी० एस०आइ० पधारे। आपने कुछ प्रश्न किये जिनके चरित्र नायक जी ने यथावत् उत्तर दिये। विहार करने का विचार किया तो श्रीसंघ ने प्रार्थना की कि आप की सेवा में जो राम लाल जी वैरागी दीक्षा मुमुक्षु है उनकी दीक्षा यहीं होनी चाहिये। इसको चरित्रनायक जी ने स्वीकार किया। चैत्र शुक्ला१५ को दीक्षा हुई। उससमय रामलालजीकी आयु१४ वर्षकी थी। अस्तु। नवदीक्षित को साथ ले चरित्रनायक जी ने उज्जैन श्रीसंघ के आग्रह से वहां के लिये प्रस्थान किया लूण मण्डी के उपाश्रय में ठहरे। वहीं पर उन दिनों जयाजी-गंज में देवीलालजी महाराज विराजते थे अतः आहार पानी कर आप दर्शनार्थ वहां पधारे। उसी दिन देवीलाल जी महा राज ने रतलाम की ओर विहार किया। वहां मुनि सम्मेलन

होने वाला था। अत आपको भी जाना था। परन्तु, दिगम्बर जैन के नेता घासीलाल जी के सुपुत्र कल्याणमल जी आदि के आग्रह से आप उपकार समझ कर कुछ दिन और ठहरे। महावीर स्वामी का जन्मोत्सव मनाने के लिये आपने उपदेश दिया कि भाई २ पृथक् हो जाते हैं, परन्तु पिता की सेवा के लिये सब को एक हो जाना चाहिये। क्या हुआ जो किसी कारण हमारी (जैनियो की) तीन शाखायें (दिगम्बर तथा श्वेताम्बर मन्दिरमार्गी और स्थानक वासी) हो गई लेकिन मूल नायक तो एक ही हैं अत सब दिगम्बर, श्वेताम्बर मन्दिरमार्गी और स्थानक वासियो ने मिलकरउत्सव मनाया। ३००० मनुष्यो की उपस्थिति थी सब प्रथम प्यारचन्द जी महाराज महावीर स्वामी के जन्म पर कुछ बोले फिर चरित्र नायक जी ने महावीर स्वामी का चरित्र चित्रण किया। लोगो पर बडा प्रभाव हुआ। व्याख्यान फिर भी बराबर होते रहे। पहिले प्यारचन्दजी महाराज आवे घंटे तक व्याख्यान देते। उसके पश्चात् चरित्रनायकजी का उपदेश होता। जैन, वैष्णव, मुसलमान भाई, बोहरो की ओर से चतुर्मास का आग्रह हुआ। आपने फरमाया कि हमारे पूज्यवर रतलाम विराजते हैं, वहीं जाने पर विचार होगा। तदनुसार उन्हेल, खाचरोद होकर वैशाख सुदी ५ को आप रतलाम पधारे। वहा चादनी चौक में व्याख्यान होने लगे। उस समय मुनि सम्मेलन के कारण वहा पूज्य श्री मुन्नालालजी महाराज नन्दलाल जी महाराज, देवीलालजी महाराज, खूबचन्दजी महाराज आदि २६ सन्त थे। उसी समय उज्जैन श्रीसघ व दिगम्बर जैन कल्याणमल जी के भ्राता राजमल जी व आफीसर पचायत बोर्ड बाबू बशीधरजी भार्गव वैष्णव आदि ने

रतलाम आकर पूज्य श्री (मुन्नालालजी महाराज) से आग्रह पूर्वक प्रार्थना की । तदनुसार पूज्य श्री ने चरितनायकजी को चतुर्मास उज्जैन करने की आज्ञा दी । कल्पकाल पूर्ण होने पर चरित्रनायकजी ने उज्जैन की ओर विहार किया । तेली आदि भाइयों ने तीन व्याख्यान और होने का आग्रह किया उनके आग्रह को मान कर आपने तीन सुललित व्याख्यान दिये । व्याख्यान स्थल में ही तेलियों ने प्रतिज्ञा की । यहां से नामली, पचेड होते हुए जावरे होकर ताल पधारे और फिर महदपुर । महदपुर में त्रिस्तुतिक मन्दिरमार्गी भाईयोंकी पाठशाला के विद्यार्थियों की धार्मिक परीक्षा की लोगों ने चतुर्मास के लिये बहुत आग्रह किया । लेकिन उज्जैन की स्वीकृति हो चुकी थी । इससे चरित्रनायकजीने उत्तर दिया कि आगामी चतुर्मास पर अवसर होगा तो विचार करेंगे । यहां से यथा समय उज्जैन पहुंचे । उज्जैन में स्थानांग सूत्र सहित व्याख्यान होता था । वहां की जनता तो सम्मिलित होती ही थी, किंतु दूर के स्थानों से भी बहुत लोग आते थे । उसी समय चरितनायकजी की सेवा में रहने वाले तपस्वी मयाचन्द जी महाराज ने ३३ उपवास की तपस्या की । तारीख २६ ७ २२ श्रावण शुक्ला ५ शनेश्चर को शुरू की थी जिसका पूर २०-८-२२ भाद्रपद शुक्ल ८ बुधवार को था । इसके उत्सव की सूचना थी संघ ने जैन जगत तथा जैन पथ प्रदर्शक आदि पत्रों और निमन्त्रण पत्र द्वारा सब ही जगह दी । रतलाम, जावरा मन्दसौर, प्रतापगढ, मल्हारगढ रामपुरा, नीमच खाचरोद, नागदा बामरोद, उन्हेल, खरवा बिल्लरोद वायली, धामण गाव, शाजापुर, सुजालपुर, आगरा तराना, भूपाल, दिल्ली आदि २ भिन्न २ प्रान्तो के श्रावक श्राविकाओं का आगमन हुआ । तपोत्सव के उपलक्ष्य मे पूर

के दिन कपडे के मिल प्रेस, जीन, कसाई खाने बन्द रहने चाहिय यह सोच कर श्री सघ का डेपुटेशन विनोद मिल के एजेन्ट बाबू मदन मोहनजी के पास गया उक्त अवसर पर और मिल बद रखने की प्रार्थना की। वास्तव में देखा जाय तो मिल बद रहना कठिन था क्योंकि एक दिन मिल बद रहने मे ७०००) रुपे की हानि उठानी पडती है, तथापि दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी बाबू मदनमोहन जी साहब ने उसकी परवाह न कर मिल बद रक्खा। इसी प्रकार श्री सघ की प्रार्थना पर खान साहिब सेठ नजरअली अलावख्श जी के मिल के मालिक सेठलुकमान भाईने भी मिल बद रखने का निश्चय किया। ५०००) रु० की हानि सही। अहले इस्लाम होकर भी यह धर्मनिष्ठा के घर पर मुहर्रम के दिनो मे ३ दिन तक जाति भोजन होता था वह दो दिन तक तो हो चुका था तीसरे दिन (जिस दिन तपस्या का पूर था) के भोजन मे उन्होने खान मे मीठे चावल बनवाये और इस प्रकार लगभग १०० बकरो को प्राण दान मिला उन्होंने यह भी कहलाया कि यदि मुझे पहिले मालूम हो जाता तो पिछले दो दिनो मे भी मैं और कुछ बनवा लेता इसके लिये श्रीसघ, दिगम्बर जैन नेता सेवारामजी के सुपुत्र रखब दास जी पाटनी व बाबू बशीधर जी भागव आदि ने मिलकर जनाब वाला काजी साहब शहर व इस्लाम भाइयो से विनय की। इस कार्य्य में जनाब वाला काजी साहब शहर, वजरुद्दीन साहब उस्ताद, हसन मिया मौलाना फैजमुहम्मद और इब्रा हीमजी कस्साबने बडा सहयोग दिया और पूरी २ कोशिश की पूर के दिन चरित्रनायकजी का— सापस्मे।

सुमधुर व्याख्यान हुआ। जज साहिब मौलवी फाजिल, साह
हीन हैदर, व सब जज साहब मिस्टर चौबे, पुलिस सुपरि
न्टेन्डेन्ट साहब तथा अन्यान्य कई प्रतिष्ठित सज्जन पधारे थे
व्याख्यान समाप्त होजाने पर जज साहब ने सारगर्भित शब्द
में व्याख्यान और चरित्रनायक जी की वृत्ति की प्रशंसा की
जिस का साराश इस प्रकार है—

मैंने बहुत से भाषण, वाज, स्पीच वगैर सुने हैं लेकि
मुनि चौथमल जी ने जो व्याख्यान आज हम लोगो को सुनाय
है, उस में बहुत बड़ा आनन्द आया है। वह इज्जत करने
लायक है। जो २ बातें चरित्रनायकजी ने आप को सुना
उन को याद रखना और उन पर अमल करना आप का फर
है। मैं यहा के और बाहर वाले साहबान का शुक्रिया अद
करता हूँ। हमारे सामने जो स्वामी जी महाराज बैठे हैं आप
ने ३३ उपवास किये हैं। ख्याल कीजिये कि '३३ उपवास'
ऐसा कहना कितना आसान है, लेकिन करन
कितना मुश्किल है। हम लोगों मे ३० रोजे किये
जाते है लेकिन उनमें दोनों वक्त सुबह और शाम खाने
का मिलता है। उस पर भी रोजे रखना मुश्किल का मदान
मालूम होता है स्वामीजीने सिर्फ गर्म पानीस ही गुजारा किया
और वह पानी भी दिन हो दिन में रात का वह भी नहीं लिया
क्योंकि आपके धर्म में उसकी मुमानियत है। स्वामी जी का
तहे दिल से शुक्रिया अदा करता हू। मैंने यहा आकर सुना कि
कस्साबों ने व रजामन्दी खुद बाहमी इत्तिफाक (पारस्परिक
मेल) से आज के दिन जानवरों का कत्ल करना व गोश्त
बेचना बन्द कर दिया जिसमें कि सरकार की जानिब से कतई

दयाव नहीं किया गया था। मुझे इस बातसे वहुत ही खुशी हासिल हुई सरकार तो चोर, पापी, अन्यायी दुराचारी आदि को चोरी, पाप, अन्याय और दुराचरण करने पर पकड कर दड देता हे, लेकिन उसमे उतना सुधार नहीं होता जितना स्वामी जी के व्याख्यान से। आपकी नसीहत से चोर चोरी करना, पापी पाप करना, अन्यायी अन्याय करना और दुराचारी दुराचार करना छोड देता है। इस हालत मे प्रजा वत्सल ग्वालियर महाराज को वहुत फायदा पहुँचता हे। इसलिये मै हमारे महाराजाधिराज सेंधियाकी तरफ से स्वामीजी का शुक्रिया अदा करता हु इतना कहकर आपने स्थान ग्रहण किया। खूब करतल ध्वनि हुई जावरा के नगर सेठ श्रीयुत् सोभागमल जी मेहता भी पूर के उत्सव मे जावरा से आय थे। उन्होंने भी व्याख्यान मण्डप म खडे होकर वडे मधुर और सुललित शब्दों मे उपस्थित सज्जनो को धन्यवाद देते हुए चरित्रनायक जी की प्रशस्ति मे एक सक्षिप्त वक्तृता दी आप वडे समाज हितेषी, शास्त्रवेत्ता और गम्भीर स्वभाव के ह समाजोन्नति और विद्या प्रचार के सम्बन्ध में आपके वडे उदार विचार हैं और समयर पर आप उन्हें कार्य रूप म भी परिणत करते रहते हैं।

इस के पश्चात् मौलाना यादअली साहव ने सभा में खडे होकर जाहिर किया कि स्वामी जी महाराज के व्याख्यान की तारीफ करने के लिये मेर पास अल्फाज नहीं हें उस मुकाम को वडा खुशकिस्मत समझना चाहिये जहां ऐसे गुणी जनों की तशरीफ आवरी हो। धन्य है ऐसे महात्मा जो अपनी वेश कीमती जिंदगी को ताकने रुहानी (आत्मिक वल) और मजहवी तरक्की में गुजारते ह। इन्हीं की

जिंदगी कामयाव समझना चाहिये वैसे तो दुनियामें ये इतिहा (असख्य) जीव पैदा होते और मरते हैं। जरूरत है कि हम भी ऐसे पाक दिल और पाक ख्यालात वाले महात्माओंकी नसीहतों पर चलें और अपने मजहबी इख्तिलाफात (साम्प्रदायिक मत भेद) का भूलकर अपनी कोम और मुल्क को तरक्की पहुँचावें एक मुल्क में रहने और दीगर चन्द वजूहातों से जेनी हमारे भाई है इनको अपने तमाम कारोबार निहायत मेल और मुह ब्बत से करने चाहियें" दूसरे दिन भी वहीं पर एक व्याख्यान फिर हुआ। ३०० लूले लगडे अपगों का भोजन कराया गया इसके बाद चरित्रनायक जी के व्याख्यान की ओर भी अधिक प्रशसा फैल गई सर सूबा हयात मुहम्मदखा सा०, सूबासाहब वासुदेव जी निगुड कर, प्रात जज मौलवी फाजिल सादुद्दीन हैदर सा० सब जज साहब, नायब साहब, सूबा साहब, मेजर साहब, फौज ओफीसर पुलिस इन्स्पेक्टर साहब, ठेकेदार निजामुद्दीन साहब आदि ने व्याख्यान श्रवण किया। व्याख्यान की प्रशसा करते हुए सर सूबा साहब ने दुबारा आकर व्याख्यान सुनने की इच्छा प्रगट की साथ ही यह भी कहा कि यदि इतने दिन पहिले मालूम होता तो मै पहिले भी व्याख्यान सुनने का लाभ जरूर लेता। क्योंकि महाराज श्री जी का व्याख्यान बड़ा दिलचस्प होता है इसके पश्चात् जयाजीगज में रहने वाले श्रावकों ने वहा व्याख्यान कराने और चरित्रनायक जी की सेवा मे जो दो भाई मुमुक्षु थे उनको दीक्षा दिये जाने की आग्रहपूर्वक प्रार्थना की। उसे स्वीकार कर आप आसोज बदि २ को जयाजीगज में पधारे। वहा कार्तिक बदि ७ की दीक्षा निश्चित हुई। बदि ३ को बाने बिठाये गये और यथा समय कलपघर के बाग में दीक्षा हुई। मुमुक्षुओं में एक रत

-लाम के रहने वाले ३२ वर्ष के वीसे ओसवाल थे। दूसरे भाई इन्दौर के रहने वाले १४ वर्ष के थे। साथ में उनकी माता भी थी। दीक्षा हो चुकने पर एक का नाम सन्तोष मुनि रखा गया जो चरित्रनायक जी के नेश्राय में रहा। दूसरे इन्दौर निवासी का नाम मगन मुनि रक्खा गया और वह छगनलाल जी महाराज के नेश्राय में रहा उनकी माता को धापूजी आर्याजी के नेश्राय में किया उस दिन चरित्रनायक जी सेवाराम जी के बाग में रात रहे। फिर जयाजीगञ्ज में पधारे और कुछ व्याख्यान देकर पीछे शहर में। वहा "गुरु गुण महिमा" नामक पुस्तिका (मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज विरचित) वितरिण की गई। वहा चरित्रनायक जी ने व्याख्यान के साथ रुक्मणी जी का इतिहास बाचा इस प्रकार चतुर्मास में वहा अच्छा धर्म ध्यान हुआ अजैन लोगों तक ने व्रत उपवासादि किये। जिनका उल्लेख क्षमा पत्रा में हो चुका है अगहन बदि १ को विहार करने के विचार से एक व्याख्यान देकर सब से क्षमत् क्षमापन्ना किया। विहार करना सुनकर जनता का बडा दु ख हुआ। सब चाहते थे कि आप अभी कुछ और विराजे। किन्तु कल्पता नहीं था, अत देवास की ओर विहार किया। मार्ग में शहर से बाहर सेवाराम जी का बाग आया। वहाँ लोगो ने आग्रह कर चरित्रनायक जी को ठहरा लिया। वहा चरित्रनायक जी न स्तवन के साथ २ मगलीक फरमाया दूसरे दिन अहले इस्लाम के पेशवा फैज मुहम्मदखा ने भी चरित्रनायक जी से व्याख्यान होने का निश्चय करा लिया। यथा समय उसी बाग म व्याख्यान हुआ। फिर विहार करने का विचार किया तो लोगो के पुन्य से बादल हो गये और वर्षा



दानवीर रायबहादुर श्रीमान् सेठ कल्याणमलजी इन्दौर

परिचय-प्रकरण ३२

देवास के घन्टाघर तथा राजवाडे में हुए। जहां सर्वसाधारण को सरकारने आने दिया। राजवाडे के व्याख्यान के दिन महाराजा सरकार साहिब की ओर से स्थूल पेडे की प्रभावना बांटी गई। फिर दरबार ने चरित्रनायक जी से गौचरी की प्रार्थना की जिसे स्वीकार किया। दरबार ने विचार पूर्वक जैनधर्म की क्रिया के अनुसार आहार (वहराया) दिया। आप खुले पाव से चरित्रनायकको पहुंचाने के लिये राज वाडे के दरवाजे तक पधारे। फिर काजी शहर व मुसलमान भाइयों के आग्रह से ईदगाह में व्याख्यान हुआ। शहर काजी ताजुद्दीन साहब ने व्याख्यान की समाप्ति पर डाक्टर गणपतरावजी सीताले साहिब सेकहा कि सर्व साधारण में प्रगट कर दो कि म ने जन्म भर के लिये मांस, मदिराका त्याग और पर स्त्री-गमन आदि अनेक बातों के त्याग किये। इस्लाम भाइयों की ओर से बताशे की प्रभावना बांटी गई। देवास राज्यकी ओरसे भी एक व्याख्यान के लिये प्रार्थना हो चुकी थी। वहा भी राज वाडे में २ व्याख्यान हुए। जहा स्वत नरेश सर तुकोजीराव बापू साहिब महाराज पवार K C S I, पधारे। और उन्हीं की तरफ से स्थूल पडे की प्रभावना हुई।

वहा से विहार कर इन्दौर पधारे और पीपली बाजार में ठहरे। बडी धूमधाम से स्वागत हुआ। तीन व्याख्यान श्रीमान् सेठ नन्दलालजी साहबकी पाठशाला में हुए। चरित्रनायकजी का दक्षिण की ओर पधारने का विचार था। किन्तु, जनता के प्रेम व आग्रह से २६ दिन ठहर कर बम्बई बाजार में व्याख्यान दिये। माहेश्वरी, अग्रवाल, नीमा, खण्डेलवाल, दिगम्बर श्वेताम्बर, स्थानकवासी, तथा मुसलमान सब ने

बडी भक्ति दिखाई। उन दिनों इन्दौर के आसपास प्रथानुसार सैंकडों जीवों की हिंसा होने वाली थी। लोगो ने डिस्ट्रिक्ट सूबा साहिब से प्रार्थना की। उन्होंने उसी समय उसका समुचित प्रबन्ध कर दिया। सेठ जडावचन्द जी तातेड बाबू राजमलजी नायटा, हस्तीमल जी भटेवरा, मगनलालजी पोरवाड, भरवलाल जी ओसवाल, मथुरालाल जी जावरे वाले आदि १५ दिन रात गावों में जा जाकर इसके लिये परिश्रम किया। और अपने धंधे रोजगार सब बन्द रक्खे। कुवर जी नेमा ने इस कार्य में सहायतार्थ ५००) दिये लगभग १५०० जीवों को प्राण मिला फिर इन्दौर से रतलाम की ओर विहार किया। मार्ग में कृषकों के आग्रहसे १०-१२दिन के लिये हातोद नामक गाव में ठहरे। आस पास गावो के लोग लग भग १५०० केआकर व्याख्यान सुनते थे। यहा प्रत्येक मास की अमावस्या तथा एकादशी को निम्न लिखित नियम पालन करने की प्रतिज्ञा हुई।

(१) भडभूजे भाड और तेली घाणी बन्द रखेंगे।
(२) कुम्हार चाक न चलायेंगे।
(३) कृषक बैलो को न जोतेंगे।
(४) हलवाई भट्टी न चलायेंगे।
(५) सुनार अग्नि का काम बन्द रक्खेंगे।

इस प्रकार महासुदि १४ सम्वत् १९७६ को प्रतिज्ञा होकर इकरारनामा लिख दिया गया। हातोद तक लोग इन्दौर से मोटरो में बैठ २ कर दर्शनार्थ आते थे। फिर हातोद स आप खिजागार के मनुष्यो के आग्रह से वहा (बिज्जे) पधारे।

व्याख्यान दिया किशनलालजी सुनार (हातोद निवासी)ने पताशो की प्रभावना की। फिर आगरा (होल्कर स्टेट) में पधारे। यहां पटेल ने सब कृषको को एकत्रित कर व्याख्यान कराया। शक्कर की प्रभावना बांटी। वहां से विहार कर देपालपुर पधारे। वहां श्वेताम्बर स्थानक वासी का एक भी घर न था। परन्तु, मन्दिर मार्गी भाइयों के आग्रह से बाजार में व्याख्यान दिया। लोगों ने बड़ा प्रेम दिखाया। यहीं पर हैदराबाद निवासी रायबहादुर सेठ ज्वालाप्रसाद जी इन्दौर आये थे। उन्हें खबर लगी कि महाराज श्री देपालपुर विराजते हैं तब वे तथा रामलालजी और सुखलाल जी कीमती वहां आये। व्याख्यान सुनकर कुछ बातचीत कर वापिस इंदोर पधार गये। इधर चरित्रनायक जी एक व्याख्यान और देकर गौतमपुरे पधारे वहां कुछ व्याख्यान दे बड़नगर विहार किया। वहां भी स्थानक वासियों के १—२ ही घर हैं तथापि मन्दिर मार्गी भाइयों ने चरित्रनायक जी को आग्रह पूर्वक ठहरा कर छ व्याख्यान करवाये। वहां से विहार कर आप रतलाम पधारे। क्योंकि वहां शास्त्र-विशारद पूज्य मुन्नालाल जी महाराज विराजमान थे। वहां पूज्यश्री के दर्शनकर तथा चांदनीचौक व नीमचचोकमें छ व्याख्यान दे धामणोद होकर चेत-सुदि १४ को सेलाने पधारे। वहां सर्वसाधारण में व्याख्यान हुआ और उसका अच्छा प्रभाव पड़ा।



प्रकरण ३३ वां ।

संवत् १९८० इन्दौर ।

नरेशों और सम्पत्तिशालियों की श्रद्धा

सेलाना पहुंच कर चैत्र शुक्ला १ को महलों के सामने व्याख्यान दिया । सेलाना नरेश व्याख्यान सुनने को पहिले से उत्कण्ठित थे । किन्तु, अस्वस्थता के कारण न आ सके अतः आपके दीवान साहब ने योग दिया । वहा से आप पिपलोदे पधारे । वहा प्रतिवर्ष माता जी के यहा बकरे का बलिदान होता था उसको ठाकुर साहब ने चरित्रनायक जी के उपदेश से बन्द किया । और स्वयम् ने शेर तथा सूर के अतिरिक्त तीतर कबूतर आदि परिन्दे जानवरो को न मारने की शपथ ली ठाकुर साहब ने और ठहराने का आग्रह किया । परन्तु आप समयाभाव से न ठहर सके । वहा से विहार कर जावरे पधारे वहा महावीर जयन्ती मनाई । तथा कुछ व्याख्यान भी हुए । कजौड़ीमल जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक न होने से आप वहा विराजे । २—३ डाक्टरो का इलाज हुआ किन्तु, अन्त में आलोयणा (संथारा) कर वे देवलोक हो गए। फिर चरित्रनायक जी ने वहा से रिंगनोद की ओर विहार किया क्योंकि वहा के कुमास्दार साहब ने जावरे आकर प्रार्थना की थी वहा २ व्याख्यान हुए । स्थिरता कम थी, लेकिन ठाकुर

साहब रणजीतसिंह जी तथा उनके छोटे भाई ने आग्रह कर ६ व्याख्यान और करवाये। वहा से विहार कर मन्दसौर पधारे दो व्याख्यान खिलचीपुर में हुए और वहा दिगम्बर जैन नेता भोप जी शम्भूराम के भय्या साहब ने आग्रह किया कि आप का व्याख्यान मेरी हवेली पर हो वहा गृह महिलाओं को भी सुयोग मिलेगा। तब उनके आग्रह पर चरित्रनायक जी के चार व्याख्यान हुये फिर झन्कूपुरा बजाज खाने में व्याख्यान हुये। पोरवाड भाइयो में कन्या विक्रय न करने की प्रतिज्ञा हुई। और नियम होगया कि जो ऐसा करेगा उस पर जातिदण्ड किया जायगा। एक व्यक्ति ने जिसने अपनी लडकी के दहेज के २०००) लेने ठहराये थे व्याख्यान में ही खडे होकर दहेज का रुपया न लेने की प्रतिज्ञा की और कहा कि ३००) रू० तो में ले चुका हूँ। १७००) शेष हैं उनमें से एक पैसा भी नहीं लू गा। और ३००) जो ले चुका हूँ उन्हें भी अपनी सुविधा के अनुसार चुका दूगा। क्योंकि अभी मेरे पास नहीं है इसी प्रकार ओसवालो में भी सुधार हुआ और वृद्ध विवाह की प्रथा मिटी। सर्राफ लोगो ने प्रतिज्ञा की कि चादी में अधिक मेल न करेंगे। दूसरे दिन विहार का विचार था लेकिन शहर कोतवाल हेतसिंह जी के आग्रह से एक व्याख्यान और दिया जिसमें बहुत सी जीवहिंसा बन्द हुई।

फिर आप पाल्ये पधारे वहा भोपजी शम्भूराम के भय्या साहब मोटर में बैठकर दर्शनार्थ पधारे। फिर चरित्रनायक जी मल्हारगढ और नारायणगढ पधारे। दोनो स्थानो पर व्याख्यान हुए और अच्छा उपकार हुआ। नारायणगढ में इसलाम धर्म के मुखिया व जागीरदार हफीजुल्लाखा साहब के

आग्रह से व्याख्यान हुआ। शहर काजी, मजिस्ट्रेट साहब डाक्टर साहब आदि कई ने व्याख्यान का लाभ उठाया। ठाकुर रणजीतसिंह जी साहब, व ठाकुर रघुनाथसिंह जी साहब और ठाकुर चैनसिंह जी साहब ने मदिरा मवन तथा पर स्त्री गमन का त्याग किया। वहा से भारडे होते हुए महा गढ पधारे। वहा कृषको ने एक ही व्याख्यान सुन कर अमा वस्या को हल न चलाने, वैश्यों ने दुकान न लगाने तथा कन्या विक्रय न करने आदि की प्रतिज्ञाएं की। ठाकुर भवानी-सिंह जी, ठाकुर रणछोडसिंहजी, ठाकुर कालूसिंह जी आदि ने जीव हिंसा के त्याग किये। वहां से मणास की जनता का अत्यन्त आग्रह देख कर आप वहा पधारे और व्याख्यान दिये वहा अरहेड कामदार जी का पत्र आया —

ता० ५—६—२३
ज्येष्ठ वदि ७ स० १९८०

राजमान् राजे श्री १००८ श्री मुनि चोथमल जी महाराज अनेकानेक वन्दना पश्चात् निदित हो कि श्रीमान् का आज्ञा-कारी ३ साल से दर्शनो का अभिलाषी है। आशा है, कि इस शुभ—अवसर पर हाजिर होकर मनोरथ पूर्ण करूंगा।

कामदार ठि० अरहेड — आपका दास
शेख महमूद बख्श रायपुर
(मारवाड)

मणा से व्याख्यान देकर कुकडेश्वर पधारे। वहा तीन व्याख्यान हुए। जिससे तेली लोगो ने मदिरा मास सेवन की

शपथ ली और जाति-नियम बना लिया कि जो ऐसा करेगा उसको जाति दण्ड दिया जायगा। वहाँ से विहार कर रामपुरे पधारे। यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि लोग दूर २ से चलकर चरित्रनायक जी के व्याख्यान श्रवण करने को आते हैं। अस्तु। रामपुरेमे देवीलालजी महाराज विराजते थे। उनके दर्शन कर कुछ सार्वजनिक व्याख्यान दिये। फिर वहासे गरोठ पधारे। औरगरोठसे गगधार पधारे। वहा दो व्याख्यान हुए। जनताने और ठहरनेका आग्रह किया। परन्तु, वर्षा निकट होनेके कारण आप न ठहर सके और आलोट पधारे। वहा २ व्याख्यान हुए फिर ताल पधारे। वहा आपके शिष्य छगनलाल जी ६ साधु-सहित विराजे हुए थे। वहा से आपने पृथ्वीराजजी महाराज (आपके शिष्य) को आज्ञा दी कि तुम ३ साधुओं सहित जावरे चतुर्मास करो। तथा शकरलाल जी महाराज को यह कि तुम चतुर्मास के लिये तीन साधुओं सहित मन्दसौर जाओ। आप स्वयम् दो व्याख्यान और देकर लोद होते हुए बडावदे पधारे वहा भी व्याख्यान हुये ठाकुर श्री रघुनाथसिंहजी और डाक्टर साहब ने लाभ लिया फिर खाचरोद पधारे। बजाज खाने में व्याख्यान दिया। मुशी जमीर हुसैन साहब बी० ए० मजिस्ट्रेट व लाला मनोहरसिंह वकील हाईकोर्ट आदिने भी व्याख्यान श्रवण किया, और व्याख्यान की समाप्ति पर चरित नायकजी को धन्यवाद देते हुए आप के गुणो की प्रशसा की तथा और व्याख्यान देनेकी आग्रह पूर्वक प्रार्थना की। तदनुसार चरित्रनायक जी के और भी व्याख्यान हुए। फिर घाने सुतेमें ३ व्याख्यान देकर चारोदे होते हुए आप बड नगर पधारे। स्टेशन पर स्टेशन मास्टर गोवर्द्धनलाल जी ने चरित्रनायक जी को स्टेशन पर ही ठहरा लिये। टेलीफोन

से रनीजे के बाबू बल्देव प्रसाद जी ने प्रणाम कहलाया, और प्रार्थना की कि मैं पचेड में दर्शन कर चुका हूँ। सायकाल को शहर में से लोग आये, और शहर के व्याख्यान के लिये प्रार्थना की। जिसे चरित्रनायक जी ने सहर्ष स्वीकार किया किंतु जल वृष्टि होने के कारण शहर में न जासके फिर वहा से गौतम पुरे पधारे। वहा १ व्याख्यान देकर देपालपुर चम्बल होते वहा पटेल आगरा (होल्कर स्टेट) की प्रार्थना पर आगरा पधारे। वहा १ रात ठहर कर हातोद पधारे वहा २ व्याख्यान हुए। इसके पश्चात् वहा से विहार कर इन्दौर पधारे और पीपली बाजार में ठहरे। किंतु, व्याख्यान के लिये वहा स्थान की संकीर्णता थी। अत आपको राय बहादुर सर सेठ हुकमीचन्द जी की धर्मशाला में ठहराया गया। वहा व्याख्यान भी होने लगे जनाब मुंशी अज़ीजुर्रहमान खा साहब बेरिस्टर इन्सपेक्टर जनरल पुलिस तथा जनरल भवानीसिंह जी सा० आदि उच्च राज कर्मचारियो ने भी व्याख्यान में योग दिया। उसी समय मुनि श्री मयाचन्द जी महाराज ने ३५ दिन की तपस्या की। जिस पूर (समाप्ति) का निमन्त्रण पाकर दूर २ के सज्जन आये। पूर के दिन व्याख्यान आदि का भी प्रबन्ध किया गया था। श्रीयुत् ला० जुगमदिर लालजी जैनी एम० ए० बेरिस्टर चीफ जज और ला० मेम्बर होल्कर स्टेट श्रीमान् मा करलाल जी डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट आदि भी सम्मिलित हुए थे। श्रीयुत् बाबु बशीधर जी भागर (उज्जेन) ने सभा मण्डप में खडे होकर उज्जैन तथा इन्दौर में चतुर्मास होने के उपकार का दिग्दर्शन कराया। जैन अजैन बालकों ने

मिलकर सुमधुर स्वर में विविध विषयों पर कविता-गान किया। जिन्हें समुचित पुरस्कार दिया गया। उज्जन मे दिगम्बर सम्प्रदाय के नेता श्रीयुत सेठ सेनारामजी के सुपुत्र श्रीयुत रखबदासजी भी उत्सव में सम्मिलित हुए थे। उस दिन शहर में कसाईयो की दुकानें बन्द रहीं। लगभग ६० हलवाईयो ने विना किसी की प्रेरणा के स्वेच्छा से ही भट्टियें बन्द रक्खीं। स्टेट मिल के कन्ट्राक्टर सेठ नन्दलाल जी भण्डारी ने भी मिल बन्द रखवा कर दयाभाव का परिचय दिया। २००० के लगभग भिखारियो और दीन जनो को दूध मिठाई अन्न भोजन आदि खिलाया पिलाया गया तथा सिवनी वाले सेठ नेमीचन्द जी गणेशलालजी तथा हस्तीमल जी की ओर से वस्त्र भी बांट गये।

एक दिन 'जीव दया' विषयक का व्याख्यान सुन कर नज़र मुहम्मद कसाई ने खडे हो प्रगट किया कि कुरान शरीफ की साक्षी देकर भरी सभा में यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जन्म भर के लिये अपना (जीव हिंसा करने का) धधा छोडता हू। और भी कई लोगो ने अनेक त्याग किये, जिनका उल्लेख यथा समय क्षमा पन्ना में हो चुका है।

श्रीयुत् नन्दलाल जी भटेवरा को आपके उपदेश सुन २ कर ससार से इतनी विरक्ति हो गई कि वे एक दिन दीक्षा लेने को तैयार होकर चरित्र नायक जी की सेवा म आये। कुटुम्बियो की आज्ञा लेकर उनको कार्तिक व० ७ के दिन दीक्षा दी गई। उसी दिन दीक्षा के समय खानदेश जिले के पीपल गाव वाले श्रीयुत् सूरजमल जी हसराज जी भामड

यहां उपस्थित थे। उन्होंने पूछा कि दीक्षा में कुल कितना व्यय होता है। उत्तर में कहा गया कि ५०० से १०००० तक। जैसी श्रद्धा और इच्छा हो। इस पर उन्होंने यह कहा कि इस दीक्षा में २०००) रु० का भाग मेरा लिया जावे। इस के पश्चात् उन्होंने तार द्वारा २४००) रु० की हुंडी मंगवाई। इस में से ४००) रु० तो दया खाते में और २०००) रु० दीक्षा खाते में दिये।

इसके पश्चात् कुछ व्याख्यान और देकर चरित्रनायक जी ने यहां से विहार किया। लोगों ने विचार किया कि आप की स्मृति में कोई रचना प्रकाशित कराई जाय। वैष्णव धर्मानुयायी कुंवर जी रणछोड़दास ने उसका व्यय भार अपने ऊपर लिया। निश्चय हुआ कि चरित्रनायक जी ने जो सीता वनवास पर व्याख्यान दिया था उसी को हिन्दी भाषा में पुस्तकाकार छपाया जाय ताकि यह महिला समाज के लिये भी विशेष उपयोगी होसके। सब ने मिल कर चरित्रनायक जी के सुयोग्य शिष्य श्री० प्यारचन्द जी महाराज से प्रार्थना की। जिस को आपने स्वीकार किया और केवल १५ दिन की अवधि में ही उसको सरल हिन्दी भाषा में तैयार कर दिया इस प्रकार पुस्तक बड़ी शीघ्रता से छपगई।

फिर वहां से विहार कर आप पधार रहेथे कि बहुत सत्यक लोग आपको विदा करने के लिये आये। चलते समय, मार्ग में पुलिस कमिश्नर साहब गुलाम मुहम्मद खां आरहे थे। आप को देखते ही वे मोटर से नीचे उतरे। नमस्कार किया। इस पर चरित्रनायक जी ने फरमाया कि दया पर विशेष लक्ष्य

रखना फिर टाउनहाल की ओर होकर आप तुकोगञ्ज पधारे। वहीं सूचना मिली कि अस्पताल में श्रीयुत् हीराचन्द जी कोठारी (रेविन्यू मेम्बर होल्कर स्टेट) आपके दर्शन करना चाहते हैं तब आपने उन्हें दर्शन दिये और तुकोगन्ज में ठहरे। इतनेही में सेठ विनोदीराम बालचन्द के सुपुत्र श्रीयुत नेमिचन्द जी साहब, भवरलालजी साहब आपके पासआये और अपनी कोठी माणिक भवन में ठहरने का आग्रह किया। चरित्रनायक जीने उनका अत्याग्रह देखकर माणक भवन में पदार्पण किया। प्रात. काल रायबहादुर सेठ कल्याणमल जी साहब की कोठी में व्याख्यान हुआ। वह स्थान शहर से दो मील था तथापि जनता वहां बहुत आई रायबहादुर सेठ कल्याणमलजी साहब ने भी व्याख्यान सुन कर बडी प्रसन्नता प्रगट की। आपही के आग्रह से २ व्याख्यान और हुए। श्रीयुत् लाला जुगमदिरलाल जी साहब जेनी, दानवीर सर सेठ हुकुमचन्द जी साहब राय-बहादुर सेठ कस्तूर चन्दजी साहब नेमिचन्द जी साहब, भवर लालजी साहब, शङ्कर लालजी डिस्ट्रिक्ट व्याख्यान में सम्मिलित हुए। सब कहने लगे कि यदि आप जैसे २४ उपदेशक भारत में होजाय तो जैन जाति की उन्नति अति शीघ्र हो। तीसरे व्याख्यान म श्रीमान् कल्याणमल जी साहब व दोनों छोटे बडे सेठानी साहब भी पधारे थे। आपही ने आग्रह किया कि दो व्याख्यान ओर हों। तदनुसार आपने दो व्याख्यान और सुनाये। फिर नेमिचन्द जी भ वरलाल जी सेठी ने विहार नहीं करने दिया और १ व्याख्यान की स्वीकृति ली। दूसरे दिन व्याख्यान दे आहार पानी कर पधारते ही थे कि श्रीमान् कल्याणमलजी साहब व दोनों सेठानी साहब आपहुचे। और आग्रह करउसरोज भी विहार नहीं करने दिया। अस्तु। एक

व्याख्यान और दिया उस समय वहा कुशलगढ के श्रीमान् राव रंजीतसिंह जी के राजा साहिब भी उपदेश सुनने को आये थे। आप का व्याख्यान सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और अपना सौभाग्य प्रगट किया। व्याख्यान के अनन्तर मध्यान्ह के समय आप फिर पधारे और धार्मिक चर्चा करते रहे। साथ ही चरित्र नायक जी से आग्रह पूर्वक क्षेत्र स्पर्शना की प्रार्थना भी की। और विनय की कि यदि आप पधारें तो बड़ी कृपा हो क्योंकि मेरी प्रजा को भी यह सौभाग्य प्राप्त होजाय। इस पर आपने उत्तर में जैसा अवसर होगा वैसा फरमाया। तदनु चरित्र नायक महोदय ने वहा से हातोद की ओर विहार किया। स्टेट मिलस के पास होकर जारहे थे कि मार्ग में कमाण्डर इनचीफ श्री भवानीसिंह जी जनरल बग्गी में बैठे हुए जारहे थे, उतर गये और नमस्कार किया और पैदल बहुत दूर तक पहुचाने आये किले के पास की बगीची में रात्रि निवास किया। वहा सेठरा०ब०कल्याणमलजी दर्शनार्थ आये। दूसरे दिन हातोद की ओर जारहे थे कि वहीं देवास श्रीसङ्घ भी आगया। और देवास पधारने के लिये बहुत आग्रह किया। जिसे चरित्रनायक जी ने स्वीकार कर देवास की ओर प्रस्थान कर दिया। श्रीमान् सरकार सर मल्हारराव बाबा साहिब * के सी एस आई देवास राज्य (२) बम्बई थे, २–१ दिन में आने की खबर थी। यथासमय आप बम्बई से आगये और चरित्रनायक जी के दर्शन किये। फिर आप २–१ बार व्याख्यान में भी पधारे। बी एन भाजेकर B A L L B (कारभारी साहब) भी व्याख्यान

* सरकार देवास के विशेष परिचय के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण ३

प्रकरण ३४ वां ।

सम्वत् १९८१ सादड़ी (मारवाड़)

श्रावकों का उत्साह और अपूर्व तपस्या

उस समय भीलवाड़े में मन्दसौर निवासी वीसे पोरवाड़ श्रीमान् रतनलालजी आगये। तीनों वैरागियों के बिनोरे फिरने लगे। मुनि श्रीनन्दलालजी महाराज, मुनि श्री देवीलालजी महाराज व मुनि श्री खूबचन्दजी महाराज अपने शिष्यों सहित पधारे और पूज्य श्री एकलिङ्गदासजी महाराज की सम्प्रदाय के चौथमल जी महाराज भी पधारे। इस प्रकार भीलवाड़े में साधु सगठन हुआ। इस अवसर पर महावीर स्वामी का जन्मोत्सव तथा तीन वैरागियों की दीक्षा है यह सुन कर बाहर के लगभग १२५ गावों के करीब ५००० मनुष्य आये। उस समय का दृश्य बड़ा रमणीक था। यथा समय तीनों वैरागी सांसारिक वस्त्राभूषणों का त्याग कर साधु वेश में होकर मुनि मण्डल के समीप आगये। उनके परिवार से आज्ञा लेकर मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज ने तीनों को दीक्षा दे, केशलोचन कर जय ध्वनि के साथ सभा विसर्जित की। महावीर स्वामी के चरित्र विषयक हमारे

चरित्र नायक जी के ठहरने के स्थान पर आये और धार्मिक विषय पर वार्तालाप करने लगे —

नरेश —महाराज ! क्या जैन धर्म बुद्ध धर्म की शाखा है ?

मुनि—नहीं, जैन धर्म स्वतंत्र है न कि बुद्ध धर्म की शाखा है। बौद्ध धर्म में बुद्ध ही पहिला अवतार माना गया है और वह हमारे चौबीसवें महावीर स्वामी के समकालीन हुआ है। वैसे तो जैन धर्म अनादि है। पर इस अवसर्पिणी काल में जैन धर्म के मुख्य प्रथम अवतार श्री ऋषभ देव हुए हैं। उनको हुए करोड़ों वर्ष हो चुके। जिनका श्री मद्-भागवत् में भी कुछ उल्लेख हुआ है। इस से सिद्ध है कि जैन धर्म प्राचीन और स्वतन्त्र है। न कि बुद्ध की शाखा जैसा कि कुछ पश्चिमीय विद्वानों ने बिना खोज से लिख दिया है। जिस से लोग बुद्ध की शाखा कहने लगे। पर अब उन्हें खोज से पता लगा है कि जैन धर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। बल्कि उस से बहुत प्राचीन है। इस प्रकार कई प्रमाणों से आपने जैन धर्म की प्राचीनता सिद्ध की।

नरेश—महाराज ! जीव मारा मरता नहीं है —

"नैन छिंदति शस्त्राणि नैन दहति पावक ।
"नचैन क्लेदयत्यापो न शोषयति मारुत ॥"

(श्री मद्भगवद्गीता अ० २ श्लोक २३)

तब आप हिंसा करने से क्यों रोकते हैं।

मुनि—आप कहते हैं सो तो ठीक है। वेशक जीव मारा नहीं मरता। वह अजर, अमर, अरूप है। पर स्थूल शरीर के संयोग से आत्मा दुखित होती है। क्योंकि आत्मा स्थूल शरीर को अपना मानकर उस में निवास करती है। जब उसके शरीर को कष्ट पहुंचता है तो उसके साथ ही आत्मा भी दुखित होती है। बस इसी तरह आत्मा को दुःख पहुंचाने का नाम हिंसा है। मान लीजिये एक मकान में कोई एक मनुष्य बैठा हुआ है उसको आप धक्का देकर बाहर निकालना चाहते हैं। एक तो वह अपनी इच्छा से चला जाय, और एक यह कि उसको बलात्कार निकाला जाय। अब सोचिये कि उसको किस अवस्था में सुख होगा? इसी प्रकार सब प्राणी मात्र एकेन्द्रि से पंचेन्द्रि पर्यन्त आयुष्य रूप अवधि से पहिले अपने शरीर को छुडाने वालेस दुखित नहीं होंगे क्या? अतः मनुष्यमात्र को दया करना मुख्य धर्म है। महात्मा तुलसीदास जी ने कहा भी है कि —

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छांडिये, जब लग घट में प्रान।

नरेश—महाराज! पृथ्वी, वायु, वनस्पति में भी जीव है तो सांसारिक अवस्था में रह कर उनकी रक्षा कैसे की जाय।

मुनि—हां, सांसारिक अवस्था में बिलकुल दया होना बहुत कठिन है। परन्तु यथा साध्य जितनी दया हो सके उतनी ही मनुष्य को करनी चाहिये। बिना प्रयोजन अकारण एकेन्द्रि जीवों को सताना पाप है।

नरेश—तो महाराज, आपके द्वारा बिल्कुल दया होती है।

मुनि—ध्यान तो यही रखते हैं कि हमारे द्वारा जीव हिंसा न हो। इसी से आपने देखा होगा कि हम लोगों में बोलने चलने फिरने आदि प्रत्येक अवस्था में पूरा अहतियात रखा जाता है। कोई व्यक्ति हम से कहीं आने जाने की आज्ञा मांगे या सम्मति ले तो हम उत्तर में 'दया पालो' ऐसा कहते हैं। इसका अभिप्राय यही है कि हमारे निमित्त से कोई काय ऐसा न हो जिससे हिंसा की सभावना हो। कच्चा पानी भी हम इसी लिये नहीं पीते हैं क्योंकि पानी की एक बूंद में ही असंख्य त्रस जीव होते हैं। पहिले तो सम्भव है हमारी ऐसी धारणा पर लोगों को विश्वास न हुआ हो। किंतु, अब तो विज्ञान प्रत्येक बात को स्पष्ट कर रहा है। अभी हाल ही में सिद्ध पदार्थ विज्ञान नामक पुस्तक इलाहाबाद प्रेस से प्रकाशित हुई है जिस में सा० ने सिद्ध किया है कि पानी की एक बूंद में सूक्ष्म यन्त्र द्वारा ३६४५० जीवाणु चलते फिरते देखे गये हैं। उस यन्त्र का चित्र देखिये —

हम लोग छाछ करने अथवा स्नान के निमित्त जो गर्मजल किया जाता है उसे, अथवा दाख, पिस्ता, चावल आदि का धोवन (जल) लेते हैं। चाहे जितनी ठण्ड क्यों न पड़े परन्तु तीन वस्त्र जो हमने ओढ़ रक्खे हैं इससे अधिक नहीं रख सकते और न ओढ़ सकते। गृहस्थ से भी नहीं मांग सकते और न अग्नि द्वारा ही शीत निवारण कर सकते हैं। हम नाई से बाल नहीं बनवाते। अपने

हाथो से घास की तरह उखाड डालते हैं। रेल, मोटर बग्घी, हाथी घोड़े आदि किसी भी प्रकार की सवारी नहीं करते। पैदल ही शहर और गावो में घूम २ कर उपदेश देते फिरते हैं। बोझा उठाने को साथ में आदमी नहीं रखते। गृहस्थ से हाथ पाव नहीं दबवाते नोट, हुडी अशर्फी, रुपये, पैसे, कार्ड लिफाफे अर्थात् सप्त धातुओं से बनी हुई कोई भी वस्तु अपने पास नहीं रखते न अन्य किसी से अपने लिये रखवाते हैं। यहा तक कि कपडा सीने के लिये सुई की आवश्यकता हो तो गृहस्थ से लाते हैं। यदि भूल से वह एक रात भी पास रह जाती है तो एक उपवास का दण्ड लेना पडता है। पात्र सब काष्ठ के रहते हैं। क्योकि ताबे पीतल कासी के पात्र में नहीं खाते, और न उन्हें पास रखते हैं। रात को अन्नजल ग्रहण नहीं करते। दिन में भी एक ही घर से भोजन न लाकर अनेक घरो से थोडा २ लाते हैं। इसी लिये इसको गाचरी कहते हैं। हमारे लिये कैसा भी अच्छे से अच्छा भोजन क्यों न बनाया गया हो उसे हम नहीं लेते।

नरेश—महाराज तब आप कैसा भोजन करते हैं।

मुनि—जो कुछ गृहस्थी के निमित्त बनाया गया हो उस में से थोडा २ लेते हैं। हमारे लिये क्रय विक्रय करके भोजन दे तो उसे हम अगीकार नहीं करते। गर्भवती स्त्री के हाथ से भोजन नहीं लेते। क्योंकि उसके उठने बैठने, चलने फिरने में कष्ट हो। किवाड खोल कर भोजन दे

अथवा कच्चा जल, अग्नि, वनस्पति, नमक, बीज, फूल आदि का स घटन कर भोजन दे तो उसे भी हम नहीं लेते। ककडी, भुट्ट खरबूजे, आमफल, सीताफल नारगी दाडिम आदि फलो को नहीं खाते क्योंकि इनमें जीव हैं। बगाली विज्ञान वेत्ता डाक्टर जगदीशचन्द्र वोसने वनस्पती आदि में प्रत्यक्ष जीव बताये हैं।

हम गाजा, भाग, चण्डू, चरस, सिगरेट, बीडी तम्बाकू और अफीम आदि किसी भी नशेली वस्तु का सेवन नहीं करते। किसी पुष्प को गन्ध नहीं लेते। हार पुष्प माला कभी नहीं पहिनते। इत्र तेलादि का लेप नहीं करते। हाथ में मोजे व पाव में वूट शूट इत्यादि कुछ नहीं पहिनते। धूप स बचने को छाता नहीं रखते। जाजम, कुर्सी, गद्दी आदि पर नहीं बैठते।

इस प्रकार हमारे चरित्र नायक महोदय के मुखारविन्द से स्थानक वासी साधुओं का आचरण सुन कर राजा साहब चकित हो बोले कि आपकी तपस्या बडी कठिन है। इस प्रकार वार्तालाप कर आहार पानी का समय होजाने पर दूसरे दिन आने का वचन दे पधार गये। दूसरे दिन प्रात काल व्याख्यान हुआ। राजा साहब की मा साहब की ओर से बादाम खारको की प्रभावना हुई।

(दूसरा दिन)

नरेश—महाराज! आपके जैनागम प्राचीन समय के लिखे हुए होंगे।

मुनि—हां, जी, लगभग १००० वर्ष पहिले के। उस समय के ग्रन्थ प्राय कहीं २ मिलते हैं। हमारे पास एक अन्तकृत-जी नामक शास्त्र है जो मूल सम्वत् १५०० के द्वितीय श्रावण में लिखा हुआ है। (उसे आपने राजा साहब को दिखाया)

नरेश—महाराज! आपके माननीय आगमों में कौनसा आगम बड़ा है?

मुनि—भगवती जी और पन्नवणादि सूत्र (देखिये)

नरेश—श्रीमहावीर स्वामी की जन्म भूमि कहा थी और उन्हों ने कब दीक्षा ली तथा कैसे तपस्या की।

मुनि—इस पर आपने महावीर स्वामी का जीवन, जन्मभूमि आदि बतलाई और तपस्या के लिये कहा कि उन्हा ने ५ महीने २५ दिन की तपस्या सब तपों से उत्कृष्ट की थी। जिसका पारण धनावह सेठ के घर राजाकी कन्या चन्दन-बाला के द्वारा हुआ।

नरेश—महाराज! चन्दन बाला राजा की कन्या होकर सेठ के घर क्यों?

मुनि—सुनिये मैं सक्षेप में आपको उसका वृत्तात सुनाता हू। चम्पापुरी का राजा महाराज दधिवाहन था। उसकी पतिव्रता स्त्री श्रीमती धारिणी की कोख से एक कन्या उत्पन्न हुइ जिसका नाम वसुमती था।

धर्मशाली माता पिता की सन्तान प्राय. धर्मात्मा ही निकला करती है क्योंकि ऐसे धर्मात्माओं के यहा ही योगभ्रष्ट आत्माए अपने अपूर्ण योग को पूर्ण करने के लिये अवतार लिया करती हैं। वसुमती की आत्मा पूर्वजन्म में एक पदच्युत जीव था। इस जन्म में वह अपने घाती कर्म्मों को नाश करके मोक्ष पद को पाने के लिये आई थी।

वसुमती का बाल्य काल शास्त्राध्ययन में बीता। धर्म्म शास्त्र के ज्ञान के साथ वह जप, तप, व्रतादि धर्म साधन क्रियाओं में भी बडी पक्की थी। अपनी यौवनावस्था में वह ससार में विख्यात होगई। कारण कि एक तो वह अतिरूपवती थी दूसरे यौवन काल, तीसरे ज्ञान की अन्तर ज्योति ने उसके सौन्दर्य को और भी बढा दिया था।

ससार की कैसी विचित्र गति है। सृष्टि पदार्थों की उन्नति में अनेक बाधाएं आपडती हैं उनको अपने अभीष्ट साधन में तरह २ की विपत्तियों का सामना करना पडता है। परन्तु धीर पुरुष ही धैर्य्य को न छोडते हुए दु ख सागर से पार जासकते हैं —"धीरास्तरन्ति विपदम् न तु दीनचित्त"।

वसुमती जैसी कि लोक प्रिय थी वैसे ही आपत्तियों का पहाड उस पर टूट पडा। परन्तु, धन्य है वह सती कि उसने धैर्य को न छोडा और ससार मे हमारे लिये एक दृष्टान्त छोड गई।

राजा दधिवाहन का काशावी नगरी के राजा शतानिक से किसी कारण वेमनस्य होगया। राजा शतानिक ने उसके साथ लडने का सकल्प किया और बहुत बडी सेना एकत्रित की।

एक दिन अवसर पाकर चुपके से चम्पा नगरी पर चढ़ाई करदी और नगर को घेर लिया। राजा दधिवाहन ने अपनी प्रजा के रक्षा के लिये बहुतेरे उपाय किये परन्तु सोये हुए शेर को हर एक मार सकता है। राजा शतानिक की जय हुई और दधिवाहन को नगर छोड कर भाग जाना पडा। इस प्रकार राजा शतानिक ने उसके नगर मे प्रवेश किया, राज्य पर कब्जा किया और प्रजा से अपनी आज्ञा का पालन कराने लगा। इसी प्रसङ्ग मे राजा शतानिक ने दधिवाहन की रानी और कन्या वसुमती को एक सुभट के साथ कर दिया जो उन दोनों को अपने साथ ले चला। मार्ग मे महारानी के अनुपम सौन्दर्य्य को देख कर वह मोहित होगया और उससे प्रतिदान मागा। परन्तु पतिव्रता धारिणी ने उसका तिरस्कार किया। कारण

वर शृङ्गोत्सङ्गाद्गुरुशिखरिण क्वापि विषमे।
पतित्वाय कायः कठिनदृषदन्तेविगलितः ,,
वर न्यस्तो हस्तः फणिपतिमुखे तीक्ष्ण दशने।
वर वह्नौ पातस्तदपिन कृतः शील विलयः,,

"बडे ऊचे पर्वत की चोटी पर से गिरे हुए पत्थर से शरीर चूरा २ भले ही हो जाय, तीक्ष्ण दांतों वाले सर्प के मुख में हाथ भले ही दे दिया जाय, अग्नि में हाथ भले ही जल जावे किंतु शील का भग कदापि न होगा यह पतिव्रता स्त्रियों का सिद्धात है।

अपने शील की रक्षा करने के लिए धारिणी ने सुभट को बहुत समझाया क्रोधवश हो कई बातें भी कहीं परन्तु कामांध सुभट न माना और अयोग्य व्यवहार करने के निमित्त रानी की ओर हाथ बढाया महासती रानी धारिणी ने किसी प्रकार भी अपने शील का बचाव न देखकर मृत्युदेव को अपनी सहायतार्थ बुलाया और आत्महत्या करके अपने शील को बचाया क्योंकि सतियों की यह रीति चली आई है कि वे अपने शील के बचाने के समय अपने प्राणो की परवाह नहीं करतीं। यह घटना देखकर सुभट हाथ मलता रह गया और मातृहीन वसुमती बहुत दुखी हुई। इस समय मातृ-स्नेह और वत्सलता के वश हो वसुमती बडे करुण स्वर मे रुदन करने लगी। प्रत्येक हृदय भेदक रुदन ने और शोककारक घटना ने सुभट के पाषाण हृदय को भी मोम बना दिया अब वह सुभट वसुमती को धैर्य देने और कहने लगा— "वसुमती ! क्यो व्याकुल हो रही है। शोक छोड दे मै तेरे साथ पुत्री और बहिन का सा वर्ताव करूंगा।" सुभट के इन वाक्यों को सुनकर और ज्ञानदृष्टि से शोक को त्याग वसुमती सुभट के साथ चल पडी। सुभट ने रानी अर्थात् वसुमती की माता के आभूषण उतार लिये और उसकी मृतदेह को रथ में से नीचे गिरा दिया और फिर रथ हांक कर वसुमती को अपने घर ले आया।

एक सुन्दर कन्या के साथ सुभट को आता हुआ देखकर उसकी स्त्री उस पर अति क्रुद्ध हो गई और यद्वा तद्वा बोलना आरम्भ किया। जिसको सुनकर "वसुमती को बाजार मे जा कर बेच देना चाहिये।" के खोटे विचार ने उसके हृदय में प्रवेश किया वह उसे बाजार म ले गया और पुकार २ कर

कहने लगा "नगरवासी जनो! एक सुन्दरी दासी विकती है। जिसको खरीदना हो आ जावे।" इस आवाज को सुनकर बहुत से मनुष्य आ जमा हुये। उनमें एक वारांगना (वेश्या) भी थी जिसने ५०० सोने की मुहरें सुभट को देकर वसुमती को खरीद लिया और अपने घर ले गई।

अब वसुमती के दुःखों का पारावार न रहा मनुष्यमात्र पर दुःख आते हैं परन्तु उनमें जो धैर्य को नहीं छोड़ता वही दुःखों के दुस्तर समुद्र को सुगमतया पार कर जाता है। वसुमती ने धैर्य को न छोड़ा। पिता का राज्य गया, माता दुःख पाती हुई उसके सामने आत्महत्या कर गई इस असह्य वियोग को उसने सहन किया। दुष्टमति दुर्जन सुभट के साथ बाजार में आना पड़ा, यह भी उसने जैसे तैसे सहा परन्तु एक नीच कोटि की अधम स्त्री के घर में जो कि उसको कारागार से कुछ कम न था शील और धर्म की रक्षा कैसे होगी इस महाविपत्पात में जीवन के दिन किस तरह बीतेंगे इस प्रकार के विचारों से उस का धैर्य टूट गया। वारांगना उसको दासी के तौर पर हाथ पकड़ कर अपने घर ले जा रही थी कि वसुमती मूर्छा खाकर गिर पड़ी हा! राजसुखों को भोगने वाला और बड़े २ योगियो के समान शास्त्रों में रमण करने वाला शरीर जमीन पर पड़ा है परन्तु उस वारांगना ने कोई परवाह न की।

कर्म की गति गहन है संसार के वातावरण में इस प्रकार की अदृश्य सत्ताए विचरती हैं जो कि निस्सहायोंकी सहायता करती हैं वारांगना के घर की नरक यातना के खयाल से वसुमती गिरी ही थी कि तुरन्त उस वेश्या के मुख की भूषण रूप

शङ्का के विषय मे उसको निश्चय होगया और वह विचारने लगी कि 'सेठ इस युवती पर आसक्त हे और में बूढी होगइ हूँ इसीसे शायद यह मुझ मारकर इसके साथ व्याह करना चाहता हे म यह कदापि न होने दूँगी" यह सोच कर उसने चन्दन बाला को नाश करने की दिल में ठान ली। एक दिन धनावह सेठ अपनी दूकान के काम मे लगे रहने से घर न आया। मूला ने अपने अभीष्ट साधन के लिय इसे अच्छा समय जान कर एक नाई को बुलाया और चन्दन बाला के केश जो कि इसके सौंदर्य्य के लिय भूषण रूप थे मु डवा दिए और उसे बाँध कर घर के अदर एक कोठरी म डाल दिया। इस महा यातना से भी धीर हृदय चन्दन बाला को कुछ दु ख न हुआ। क्योंकि यह श्लोक उसको हर प्रकार आश्वासन दे जाता था -

विपत्तो किं विषादेन, सम्पत्तो वा हर्षेण किम्।
भवितव्य भवत्येव कर्मणा मीदृशीगति ॥

'विपत्ति में खेद किस बात का और सम्पत्ति आन पर खुशी काहे की ? क्योकि कर्म्मों की तो एसी ही गति हे जैसा होना होगा हाकर ही रहेगा"।

इस प्रकार विचार करती हुइ अपने एकान्त समय का सदुपयोग करने के लिये जिनेश्वर प्रभु की भक्ति म मग्न हो नवकार मन्त्र का जाप करने लगी।

कार्य्य से निपट कर धनावह सेठ अपन घर आया और चन्दन बाला को न देख कर अपनी स्त्री से पूछने लगा। परन्तु उसने "कहीं यहीं होगी" यह कह कर उसे टाल दिया

दूसरे दिन भी इसी तरह हुआ। परन्तु तीसरे दिन उसे उस उत्तर से शान्ति न मिली और वह व्याकुल हो गया। अपनी स्त्री को खूब धमकाया तब कहने लगी कि उसका सही साथी आया होगा, जो उसे ले गया होगा मुझे तो कोई खबर नहीं इतना द्रव्य खर्च कर म ने लडकी खरीदी थी अब व्यय भी गया और लडकी भी गइ जिसके रञ्ज में मैं खुद मर रही हूँ। पर शोक तो यह हे कि साथ ही आप भी मुझ पर निकम्मा क्रोध करने लग गये। यह कह कर मूला तो चुप हो गइ।

धनावह सेठ ने उस समय भोजन नहीं किया। और "जब तक चन्दन बाला का मुख न देखू गा अन्न नहीं खाऊंगा" यह प्रतिज्ञा कर अनशन व्रत धारण कर शोकातुर हो बेठ गया इतने में एक वृद्ध पडोसिन ने आकर सेठसे कहा कि "तुम घर में क्या तलाश करते हो तुम्हारी स्त्री ने जिसका उसके ऊपर पहिले ही से द्वेष था उसे बाध कर छिपा रक्खा हे' पडोसिन के वाक्य सुनकर धनावह व्याकुल हो गया। फिर उसने घर के बड़े खटों के ताले खोल २ कर तलाश करनी शुरू की। वह उस कोठरी में भी पहुच गया जहा कि चन्दन बाला नीचा सिर किये विचार मग्न बेठी थी। अपनी प्राणप्यारी पुत्री की यह दुर्दशा देख उससे रहा न गया ओर तत्क्षण नीचे लाया। चन्दन बाला पञ्च परमेष्ठी नमस्कार रूप नव कार मन्त्र का जाप जपती ध्यानस्थ थी। धनावह ने उसे सचेत किया और उसकी इस दशा का कारण पूछा। चन्दन बाला को तीन दिन का उपवास था और शरीर क्षीण हो रहा था इससे साफ २ न बोल सकी परन्तु मस्तक हाथ रख उसने

सकेत से कहा "कर्मों की माया विपाद के समुद्र में डूरा हुआ धनावह उसको बाहर लाया परन्तु दुष्टा मूला सारे द्वार बन्द करके बाहर चली गई थी। धनावह सीढियों के नीचे उतर कर आंगनमें आया और एक वृद्ध दासी से खाना लानेके लिये कहा दासीने कहा"इस समय और कुछ नहीं मिल सकता पर हाँ कुछ उडद वाकलिया तैयार हैं यदि आज्ञा दें तो लाऊं" धनावह ने कहा "वही ले आ" वह एक वर्तन में कुछ पकाये हुए उडद ले आई। धनावह ने उन्हें चन्दन वाला को खाने के लिये दिया। मगर आज अष्टमी का पारण था और पारने के लिये उस ने इस भोजन को स्वीकार किया। परन्तु उस भोजन को उपयोग में लाने से पहिले उसने यह भावना की कि "इस-समय यदि कोइ मुनि महाराज आवें तो उनका सत्कार कर अपने व्रत का पालन करू"।

न वै स्वयम् तदश्नीयादतिथिं यन्न भोजयेत्।
धन्य यशस्यमायुष्य स्वर्ग्यम् चातिथि भोजनम्॥

धर्मशास्त्र की यह देशना चन्दन बाला के हृदय में घर कर चुकी थी इसी लिये उसके हृदय में ऐसी भावनाओं का उदय होता था।

इसी समय एक विचित्र घटना हुई। श्रीमान् महावीर स्वामी यहा भिक्षार्थ आगये। उन्होंने यह प्रतिज्ञा की हुइ थी कि आज उस स्त्री से आहार लेंगे जो राजपुत्री हो पर दासी-पद को प्राप्त हुई हो, सिर मुण्डा हो, पावो में बन्धन पडे हो और आख में आसू हो और भिक्षा काल व्यतीत होने के



श्रीमान् राज्यमान्य खान साहिब सेठ लुकमानभाई उज्जैन

परिचय–प्रकरण ३२

-सकेत से कहा "कर्मों की माया विषाद के समुद्र में डूबा हुआ धनावह उसको बाहर लाया परन्तु दुष्टा मूला सारे द्वार बन्द करके बाहर चली गई थी। धनावह सीढियों के नीचे उतर कर आंगनमें आया और एक वृद्ध दासी से खाना लानेके लिये कहा दासीने कहा"इस समय और कुछ नहीं मिल सकता पर हां कुछ उडद बाकलिया तैयार हैं यदि आज्ञा दें तो लाऊं" धनावह ने कहा "वही ले आ" वह एक बर्तन में कुछ पकाये हुए उडद ले आई। धनावह ने उन्हें चन्दन बाला को खाने के लिये दिया । मगर आज अष्टमी का पारण था और पारने के लिये उस ने इस भोजन को स्वीकार किया । परन्तु उस भोजन को उपयोग में लाने से पहिले उसने यह भावना की कि "इस समय यदि कोइ मुनि महाराज आवें तो उनका सत्कार कर अपने व्रत का पालन करू" ।

> न वै स्वयम् तदश्नीयादतिथिं यन्न भोजयेत् ।
> धन्य यशस्यमायुष्य स्वर्ग्यम् चातिथि भोजनम् ॥

धर्मशास्त्र की यह देशना चन्दन बाला के हृदय में घर कर चुकी थी इसी लिये उसके हृदय में ऐसी भावनाओं का उदय होता था ।

इसी समय एक विचित्र घटना हुई । श्रीमान् महावीर स्वामी यहा भिक्षार्थ आगये । उन्होंने यह प्रतिज्ञा की हुई थी कि आज उस स्त्री से आहार लेंगे जो राजपुत्री हो पर दासी-पद को प्राप्त हुई हो, सिर मुण्डा हो, पावो में बन्धन पडे हो और आख मे आसू हों और भिक्षा काल व्यतीत होने के



श्रीमान् राज्यमान्य खान साहिब सेठ लुकमानभाई उज्जैन

परिचय–प्रकरण ३२

पीछे यदि उडद की वाकलिया मिले तो ही आहार लेंगे। यह भाव करके प्रभु कोशाम्बी नगरी के मन्त्री की सुश्राविका धर्मशालिनी पत्नी नन्दा के यहा भिक्षार्थ आये। परन्तु, वहा अपने अभियोग के सफल होने की सभावना न थी। इस लिये आहार स्वीकार न किया। नन्दा उदास हुई। कोशाम्बी के राजा की महारानी मृगावती के पास गई और प्रभु के आने और आहार अस्वीकार करने का उसने वृत्तान्त कहा। फिर मृगावती ने प्रभु को आहार के लिये निमत्रण किया परन्तु यहा भी निज भाव की सानुकूलता न देख कर आहार स्वीकार न किया। महारानी मृगावती और नन्दा प्रभु से आहार अस्वीकृति का कारण पूछने लगी तो प्रभु ने उनकी चिन्ता को दूर किया।

इस के पश्चात् प्रभु फिरते २ धनावह सेठ के यहा जा पहुचे। साक्षात् भगवान् को अतिथिपने आया देख कर चन्दनबाला अति प्रसन्न हुई और आहार के लिये प्रार्थना करने लगी। यहा और तो सब बातें थी लेकिन एक शर्त की कमी थी। वह थी चन्दन बाला के नेत्रों से अश्रुपात नहीं होता था। अत प्रभु ने भोजन लेना स्वीकार न किया और वापिस जाने लगे। अपने घर में आये अतिथि को नहीं २ भगवान् को आहार न पाकर लौटते देख चन्दन बाला से रहा न गया। उसकी आखें जल मे डबडबा भर गई और वह रोने लग गई। फिर क्या था? कमी तो इसी बात की थी और तो सब शर्तें पहिले ही सहानुकूल थीं। भगवान् अपने भाव को सब विधिपूर्ण होते देख लौट पडे और आहार स्वीकार कर लिया। यह देख चन्दन बाला के आनन्द का पारा वार न रहा

शिष्टाचार करके उस त्यागी युवक का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने को उसके साथ वाग्-व्यापार शुरू किया। वह भव्याकृति धारी पुरुष और कोई न था। एक पञ्च महाव्रत धारी मुनि थे। वृक्ष के नीचे एक आसन लगा कर शान्ति पूर्वक—समाधि दशा में लीन होरहे थे। राजा के प्रश्नारम्भ करने पर मुनि ने भी अपना ध्यान उस ओर आकर्षित करके बातचीत करना शुरू किया। राजा ने पूछा कि आपने इस तरुणावस्था में गृहस्थाश्रम का क्यो त्याग किया ? क्या आप पर कोई दु ख अथवा विपत्ति—विशेष आगई थी या किसी से लडाई झगडा होगया था। मुनि ने कहा कि राजन् ! न तो मेरा किसी के साथ लडाई झगडा हुआ—और न कोई दु ख या आपत्ति ही आई। गृहस्थाश्रम परित्याग करने का केवल एक ही कारण है, और वह है मेरी अनाथता। अर्थात् मेरा कोई सहायक, स्वामी या त्राण देने वाला न था। इसी से मैंने गृहस्थाश्रम में रहना उचित नहीं समझा।

श्रेणिक —क्या तुम अनाथ थे ? तुम्हारी रक्षा करने वाला तुम्हें कोई मनुष्य नहीं मिला।

मुनि—हा, मै अनाथ था।

श्रेणिक—यह बात मुझे तो सन्देह भरी जान पडती है। तुम्हारा ऐसा सौन्दर्य्य, ऐसा तेज और फिर भी तुम्ह आश्रय देने वाला कोई न मिले इस को मैं नहीं मान सकता। फिर भी सम्भव है, कदाचित तुम सत्य कहते हो तो क्या तुम्हें किसी आश्रय दाता अथवा रक्षक की आवश्यकता है ? वैसा कोई व्यक्ति तुम्हें मिल जाय तो क्या तुम उसे स्वीकार करोगे ?

मैं जोर देकर कहता हूँ कि जिस प्रकार म अनाथ था, उसी प्रकार तू स्वयम् भी अनाथ है। तू स्वयम् अनाथ होकर दूसरे का नाथ किस तरह होसकेगा।

श्रेणिक—मेरे पास कितनी फौज है-कैसा बल है-कैसी ख्याति है। इसकी तुम्हें खबर नहीं है। इसी से मुझ पर अनाथता का झूठा आरोप लगा रहे हो। महाराज! सुनो, मेरे पास तैंतीस हजार हाथी, तैंतीस हजार घोडे, इतने ही रथ और पैदल फ़ौज है। इसके सिवाय मेरे कोष में-अनन्त सम्पत्ति है। मैं चाहूँ उस वस्तु को पा सकता हूँ। सुखोपभोग की कोई वस्तु मेरे लिये अलभ्य नहीं है। चाहे जैसा दुश्मन हो किन्तु, मेरे साथ युद्ध करने का किसी को साहस नहीं होसकता। इस कारण तुम जरा विचार कर बोलो बिना विचारे किसी को अनाथ कह देना निरी अज्ञता और अविवेक है।

मुनि—राजन्! मैं अपनी अज्ञता प्रगट करता हूँ या तू अपनी मूर्खता जाहिर करता है। इस बात को तो कोई तीसरा मध्यस्थ व्यक्ति ही कह सकता है। परन्तु, मैं तुझ से कुछ कहूगा तो उसको सुन लेने पर तू स्वयम् ही स्वीकार कर लेगा कि वास्तव में मैं—स्वयम् ही मूर्ख हूँ। प्रथम तो अनाथ शब्द किस स्थान पर किस अभिप्राय से प्रयुक्त होता है इसको तू नहीं समझता। मेरे घर में समृद्धि न थी, अथवा कोई कुटुम्बी न था, इससे मैं अनाथ हूँ या किसी अन्य कारणसे। इसे भी तू नहीं समझ सका।

में जोर देकर कहता हूँ कि जिस प्रकार मैं अनाथ था, उसी प्रकार तू स्वयम् भी अनाथ है। तू स्वयम् अनाथ होकर दूसरे का नाथ किस तरह होसकेगा।

श्रेणिक—मेरे पास कितनी फौज है-कैसा बल है-कैसी ख्याति है। इसकी तुम्हें खबर नहीं है। इसी से मुझ पर अनाथता का झूठा आरोप लगा रहे हो। महाराज! सुनो, मेरे पास तैंतीस हजार हाथी, तैंतीस हजार घोड़े, इतने ही रथ और पैदल फौज है। इसके सिवाय मेरे कोष में-अनन्त सम्पत्ति है। मैं चाहूँ उस वस्तु को पा सकता हूँ। सुखोपभोग की कोई वस्तु मेरे लिये अलभ्य नहीं है। चाहे जैसा दुश्मन हो किन्तु, मेरे साथ युद्ध करने का किसी को साहस नहीं होसकता। इस कारण तुम जरा विचार कर बोलो बिना विचारे किसी को अनाथ कह देना निरी अज्ञता और अविवेक है।

मुनि—राजन्! मैं अपनी अज्ञता प्रगट करता हूँ या तू अपनी मूर्खता जाहिर करता है। इस बात को तो कोई तीसरा मध्यस्थ व्यक्ति ही कह सकता है। परन्तु, मैं तुझ से कुछ कहूंगा तो उसको सुन लेने पर तू स्वयम् ही स्वीकार कर लेगा कि वास्तव में मैं—स्वयम् ही मूर्ख हूँ। प्रथम तो अनाथ शब्द किस स्थान पर किस अभिप्राय से प्रयुक्त होता है इसको तू नहीं समझता। मेरे घर में समृद्धि न थी, अथवा कोई कुटुम्बी न था, इससे मैं अनाथ हूँ या किसी अन्य कारणसे। इसे भी तू नहीं समझ सका।

श्रेणिक—तो 'अनाथ' शब्द का क्या आशय है? और तुम किस तरह अनाथ हुए यह मुझे सुनाओगे?

मुनि—बेशक, अगर तू विक्षेप दूर कर के शांति पूर्वक सुनेगा, तो मैं प्रसन्नता पूर्वक सुनाऊंगा।

श्रेणिक—मुझे किसी प्रकार का विक्षेप नहीं, मैं उस बात को तो बडे ध्यान से सुनने को तैयार हूँ। इस कारण आप सुनाइये।

मुनि—राजन्! यदि मैं अपना चरित्र अपने ही मुंह से वर्णन करूंगा तो उसकी गणना आत्मश्लाघा में हो जायगी। परन्तु अनाथता और सनाथता का वास्तविक अर्थ समझानेके लिये इसके अतिरिक्त और कोई साधन है भी नहीं। मैं कौशाम्बी नगरी का निवासी हूँ मेरे पिता का नाम धनसञ्चय है वे कौशाम्बी नगरी में एक इज्जतदार गृहस्थ हैं। राजा और प्रजा दोनों में उनका बडा मान है। उनके कोष में इतना संचित द्रव्य है कि उसकी गणना करना कठिन है। किम् बहुना उस कोष के आगे बडे से बड़े राजा का खजाना भी कोई वस्तु नहीं। मेरा पहिले गुणसुन्दर नाम था। मेरा बाल्यावस्था में उसी ढग से लालन पालन हुआ है जैसा कि एक धन सम्पन्न व्यक्ति की सन्तान का होना चाहिये। इसके पश्चात् मैं पढ़-लिख कर होशियार हुआ तो एक उच्च कुल की सुन्दर कन्या के साथ मेरा विवाह किया गया। उस समय का मेरा अपना सारा जीवन-काल खेल-कूद, भोग वि-

लास और सुख में व्यतीत हुआ । दुःख अथवा सकट क्या वस्तु है, इसका मुझे कभी ध्यान तक न आया। मेरे और भी भाई बहिन थे। उन सब का मुझ पर बडा स्नेह था। किसी भी बात में वे मुझे अप्रसन्न नहीं होने देते थे। युवावस्था में मेरी एक युवक से मित्रता होगई हम दोनों परस्पर बडे मेल से रहते और यथावकाश विनोद की बाते कर अपना मनोरञ्जन किया करते। मेरा मित्र मुझ से प्राय वैराग्य की बाते किया करता और कहा करता कि सारे सांसारिक सम्बन्धी स्वार्थ वृत्ति वाले होते हैं। यह सुनकर मैं उसका खण्डन किया करता और अपना खुद का उदाहरण देकर उसको समझाता कि मेरे माता पिता और स्त्री आदि मुझ पर इतना प्रेम रखते हैं कि वे मुझे पल भर के लिये भी अपनी आंखों की ओट नहीं होने देते। यदि किसी दिन मैं उनको थोडी देर तक न दिखाई दूँ तो उनका चेहरा उदास हो जाय। और वे मेरी खोज करने लगे। हमारे कुटुम्ब में स्वार्थमय प्रेम किसी का है ही नहीं। बल्कि शुद्धान्तःकरण से ही सब मुझे चाहते हैं। मेरा मित्र मेरी इस बात को सच्ची न मानकर कहता कि भाई! जगत् के पशु पक्षी और मनुष्य सब मतलब के साथी हैं। मतलब निकल जाने पर कोई किसी के काम नहीं आता। एक समय हम किसी तालाब पर गये थे। उस समय वहा अनेक पक्षी क्रीडा कर रहे थे। तथा कमल पर भौंरे गुंजार रहे थे। दूसरी बार गये तो तालाब सूखा पाया और किसी पशु पक्षी को विचरते नहीं देखा, देखो यह स्वार्थान्धता!

दोहा

स्वारथ के सब ही सगे, बिन स्वारथ कोइ नाहिं ।
सेवैं पछी सरस तरु, निरस भये उडि जाहिं ॥

बगीचा और मनुष्य, वृक्ष और पक्षी आदि अनेक उदाहरण देकर उसने मुझे सांसारिक स्वार्थ को समझाने का प्रयत्न किया । किंतु, मैंने उसकी बात पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया । मैंने अपने निश्चित किये हुए विचार को ही ठीक समझा । मेरा मित्र मुझ से इस बात के लिये क्यों इतना जोर देता है यह बात मैं उस समय न समझ सका था । अन्त में वह मुझको समझाते २ थक गया, और कहने लगा कि अब मैं बाहर जाने वाला हूँ, इस कारण कुछ समय तक तेरे पास न आ सकूंगा । राजन् ! मेरा वह मित्र मेरे पास से गया कि शीघ्र ही अचानक मेरे अंग प्रत्यंग में वेदना होने लगी हड्डियों में इस तरह की पीड़ा होनी शुरू हुई कि मैं मछली की तरह तडफने लगा । घडी भर पलंग पर और घडी भर भूमि पर । किंतु, मुझे किसी जगह भी चैन नहीं मिला । मानो भीतर से मेरे कोई सुई चुभो रहा हो । ऐसा असह्य कष्ट होने लगा । मेरे घर के और बाहर के सब कुटुम्बी लोग इकट्ठे होगये और सब मेरा उपचार करने लगे । कोइ वैद्य को लाया तो कोई हकीम को । कोइ ज्योतिषी को तो कोइ मन्त्र शास्त्री को । इस प्रकार एक के पश्चात् एक ने आकर चिकित्सा की । परन्तु मुझे कुछ आराम नहीं मिला । समय बहुत होगया

था इस कारण मारे बेचैनी के में तो अधीर होगया। और सोचने लगा कि इसको अपेक्षा यदि प्राणान्त होजाय तो अच्छा। घर के सब लोग तग आगये। इस प्रकार मुझे कई दिन बीत गये। इसी बीच में वहा एक विदेशी वैद्य आये। वे देखने में जैसे सुन्दर थे, वैसे ही अनुभवी भी प्रतीत होते थे। मेरे पिता ने उनको बुलाया और कहा कि मेरे पुत्र को स्वस्थ करे तो मैं आप को मुह मागे रुपये दूगा। वैद्य जी ने कहा कि रुपयो का नाम क्यो लेते हो मैं तो परमार्थ के लिये ही दवा देता हू। मेरे पास ऐसी अक्सीर दवाइया हैं, कि मैंने जिस रोगी को भी हाथ में लिया है वही मेरे पास से स्वास्थ्य-लाभ करके गया है। यह होते हुए भी मैंने किसी से एक पैसा न लिया। चलो तुम्हारे लडके की हालत देखू। ऐसा कह कर वे आये और मेरी नाडी परीक्षा की। कुछ देर ठहर कर बोले कि सेठ जी! इस लड़के को कोई रोग नहीं है, इसको तो कोई खटका 'भूत का आवेश' है।

इस पर मेरे पिता ने कहा कि वैद्यराज! इसका उपाय भी आप ही के पास होगा। वैद्यराज जी ने कहा – "हा, हा अवश्य!" किंतु उसके अलावा मेरे पास कोई उपाय नहीं है। इस पर मेरे पिता ने कहा कि खैर। अधिक उपाय से क्या काम है, एक उपाय तो है न? यदि इसी से यह स्वस्थ होजाय तो दूसरे किसी उपाय की क्या आवश्यकता? वैद्य जी ने कहा — "एक उपाय है तो अक्सीर परन्तु' मेरे पिता ने कहा, फिर परन्तु, क्या? आप कहते क्यों नहीं, रुकते क्यों? इस

पर वैद्य जी ने कहा कि यह उपाय जरा टेढा है कष्ट साध्य है। इतना अवश्य है कि उस उपाय से मैं इसके शरीर में से सब खटका निकाल डालूंगा। परन्तु, उस रोग को लेने के लिये तुम में से कोई एक मनुष्य तैयार होना चाहिये। यह खटका व्यन्तर ऐसा बुरा है कि जीव के बदले जीव लेता है। एक को बचाऊं तो उसके बदले दूसरे एक व्यक्ति को मरने के लिये तैयार होना पड़ेगा।

यह सुन कर कुछ देर तक तो सब लोग विचार में पड़ गये। कुछ ऐसा भी कहने लगे कि यह वैद्य गप्पी मालूम होता है। ऐसा भी कहीं होता है ? लेकिन, खैर। देखने तो दो। यह सोच कर कहने लगे कि वैद्यराज ! आप गुण सुन्दर के शरीर में से रोग निकालिये फिर उसको जिस के लिये आप कहेंगे वही लेलेंगे। हम सब यहीं मौजूद हैं। इस पर वैद्यजी ने कहा कि फिर पलट न सकोगे। इस से विचार कर बोलना। सब ने कहा कि हां, हां, हम सब विचार कर ही बोले हैं। इस प्रकार पक्की बात करके वैद्य राज ने सब को उस कमरे से बाहर निकाला। और उसके दरवाजे बन्द कर दिये। इसके पश्चात् उन्होंने मेरे शरीर पर एक बारीक वस्त्र ढक कर कुछ मन्त्र पढा। थोड़ी ही देर में मुझे पसीना आया। वस्त्र भीगगया। उन्हों ने उसको एक प्याले में निचोड़ लिया और फिर मुझे उढा दिया। इस प्रकार तीन बार उस वस्त्र को निचोड़ा। इस से सारा प्याला पसीने से रोग से भर गया। तब मुझे एक दम शान्ति अनुभव हुई इस के पश्चात् वैद्य जी ने किवाड़ खोल कर सब को भीतर बुलाया। और दर्द का प्याला हाथ में लेकर कहा कि देखो ! अब इस लड़के

को बिल्कुल आराम होगया है। इसका सारा रोग अब इस प्याले में इकट्ठा होगया है। कहो, तुम में से कौन इसको पीना चाहता है। इस पर मेरे पिता, माता, भाई, बहिन, भोजाइयें सबको पृथक् २ बुला कर वैद्य जी ने कहा परन्तु, प्याले का भीतर का द्रव पदार्थ जो तेजाब की तरह खदबदा रहा था और जिस में धुआ तथा अग्निकी ज्वाला जैसी ज्वाला निकल रहीथी उसको पीने का किसी को साहस न हुआ। पिता ने कहा कि म पीजाऊ लेकिन दूकान का सारा कारोबार मेरे हाथ में है। प्याला पी लेने पर यह रोग मुझे घेर लेगा और उस दशा में मैं अपने व्यापार की कुछ देख भाल न कर सकूंगा। माताने कहा कि गुण सुन्दर के पिता का मिजाज ऐसा तेज है कि उसको मेरे सिवाय दूसरा कोई बरदाश्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार भाइ और भोजाइयों ने भी इन्कार कर दिया। बहिनों को उनके पतियों न रोक दिया। स्त्री ने भी कुछ बहाना लेलिया। रहे दूसरे आत्मीय, सो वे भी एक २ करके पेशाब पाखाने का बहाना करके चलते बने। आखिर को वैद्यजी ने वह दर्द का प्याला पीछा मुझ पर ही छोड़ दिया इससे मुझे जैसी पीडा पहिले था वैसी ही होने लगी। वैद्य जी वहा से चले गये। उस समय मुझे अपने मित्र की बात याद आई। सासारिक स्वार्थ पर मुझे बडा खयाल गुजरा। सोचा कि अभी तक काच को हीरा और पीतल को सोना मान कर मैं मोह जाल में लिपटा रहा। और इस प्रकार मैं ने जो अपना अमूल्य समय नष्ट किया उसका भान हुआ। शीघ्र ही मैं ने विचार किया कि यदि अब मेरा यह रोग दूर होजाय तो मैं इस स्वार्थी ससार का त्याग करके सयम मार्ग को अंगीकार करलू। यह विचार कर लेटा। इतने हो में मुझे एक स्वप्न

आया। स्वप्न में मेरे मित्र से भेंट हुई। उसने कहा मित्र। सम्हल, सम्हल। अब भी सम्हलजा। तू और में दोनों देव थे। पूर्व जन्म म जब तेरी आयु पूर्ण होने लगी तो तैंने मुझ से कहा कि –" तेरी आयु अभी शेष है इस कारण में यहा से मर कर मनुष्य होता हूँ वहा तू मुझे समझाने के लिये आना। और चाहे जिस तरह मुझ को शिक्षा देना"। उसके लिये उससे मैंने वचन लेलिया। मैंने वचन दिया कि अवश्य ही मैं तुझे समझाने को आऊगा। क्या तू उस बात को बिल्कुल भूल गया? उस समय का तेरा वैराग्य, समझ सब कहा रफू होगये? मित्र! आज मैं (वचन देने वाला देव) तेरे पास तीसरी बार आया हू। एक बार मित्र की भांति तुझ से सम्बन्ध जोड़ा, तुझ को हर तरह से ससार का स्वरूप समझाने की कोशिश की, परन्तु, तू नहीं समझा। तब मैंने यह कष्टसाध्य, परन्तु अनुभव कराने वाला दूसरा उपाय किया। दूसरी बार वैद्य बन कर तेरे पास आया वह भी मैं ही था। मैंने तुझ को वचन दिया था इसी से आज तीसरी बार स्वप्नावस्था मे तेरे पास आया हू। अब बता, कि तुझ ससार के स्वार्थमय सम्बन्ध की पहिचान हुइ या नहीं? यदि होगई हो तो उसको त्याग कर आत्मसाधन करने को कटिबद्ध होजा। इस से तेरी वेदना शीघ्र ही दूर होजायगी। इतने ही मे तेरी नींद खुल गई तो देखा कि वे देवता अदृश्य होगये। मैंने तो ससार परित्याग करने का विचार पहिले ही से कर लिया था। किन्तु, स्वप्नावस्था के विचार ने मेरी इच्छा को और भी मजबूत कर दिया। मैंने सकल्प कर लिया कि इस वेदना के मिटते ही ससार का परित्याग करना। ऐसा निर्णय करते ही धीरे २ मेरी वेदना कमहोने लगी। कुछ ही देर

मे मुझे बडी शान्ति से गहरी नींद आगई। दूसरे दिन प्रात - काल सोकर उठा उस समय सगे सम्बन्धियों से मेरा सारा कमरा भर गया। गड बड होने से मैं जाग न जाऊं इस लिये सब लोग शान्ति पूर्वक बैठे हुए मेरे जगने की राह देख रहे थे। मेरे जगते ही सब लोग मेरी तबियत का हाल पूछने लगे जब मैंने कहा कि अब मेरी तबियत पहिले से अच्छी है तो सुन कर सब लोग बडे प्रसन्न हुए और कहने लगे कि ईश्वर ने हमारी अभिलाषा पूर्ण की। कोई कहने लगा मैंने अमुक यक्ष की मानता की थी कोई कहने लगा मैंने अमुक माता जी के प्रसाद चढाने का सकल्प किया था। आदि। इस पर मैंने उन सब से कहा कि तुम मे से किसी की मानता सफल नहीं हुई है। केवल मेरी ही मानता फली भूत हुई है। मेरे माता पिताने पूछा कि तेरी कौनसी मानता है वह बता। हम सब से पहिले उसी को पूर्ण करेंगे। मने कहा —"खतो दतो निरारम्भो पव्वइए अणगारियं" अर्थात् मैंने ऐसी मानता की है कि यह वेदना मिट जाय तो क्षमा का पाठ सीखू, और इन्द्रियो-का दमन करके आरम्भिक परिग्रहो को छोड कर साधु धर्मको ग्रहण करू। यह विचार करते ही मेरी वेदना एकदम, शान्त होगई इस कारण अब मै अपने आत्मकर्म्म की साधना करू गा। किसी को मेरे इस सकल्प में विघ्न नही डालना चाहिये, बस। मैं आप सब से इतनी ही कृपा करने की याचना करता हू।

इसके पश्चात् मेरे माता पिता मेरे सम्बन्धियों से बहुत कुछ वाद विवाद हुआ। किन्तु, अन्त में मने सब को समझा कर दीक्षा लेली। तभी से अनाथता से छुटकारा पाकर मैं

सनाथ हुआ हूँ। अब में केवल अपनी ही आत्मा की नहीं, बल्कि दूसरे प्राणियो की भी रक्षा करता हूँ इस कारण अपना खुद का और साथ ही दूसरो का भी नाथ हुआ हू। इसी पर से विचार करले कि तू स्वयम् अनाथ है या सनाथ। तू मुझको जो ऋद्धि और भोग विलास के साधन देने को कहता है इनकी अपेक्षा अधिक साधन मुझ को प्राप्त थे। सगे सम्बन्धी, स्नेही मित्र आदि भी यथेष्ट थे, किन्तु, यह सब होते हुए भी मुझे दुःख से कोई न बचा सका। इस से स्वयम् सिद्ध है कि मैं अनाथ था।

क्या तुझ में किसी को दुःख अथवा मृत्यु से बचाने की शक्ति है? मनुष्य का बडे से बडा वैरी मृत्यु अथवा कर्म्म है। उन से बचाने की शक्ति तुझ मे नहीं है, इसी से मैंने तुझ को अनाथ कहा था। यदि अब तुझे मेरे ये वचन अनुचित लगते हों तो उन्हें वापिस लेलू।

श्रेणिक—महाराज! आपके वचन सत्य हैं। मेरी ही भूल है। अब मुझको विश्वास है कि इस हिसाब से मै स्वयम् भी अनाथ हूँ। मैंने अपनी सम्पत्ति के लिये वृथा अभिमान किया। मृत्युरूपी वैरी के सामने चाहे जितनी सम्पत्ति अथवा चाहे जैसी सत्ता हो लेकिन वह तुच्छ है। आप एक दृढ वैरागी और सच्चे त्यागी पुरुष हैं। ऐसी दशा में आपको सासारिक भोग विलास के लिय प्रेरित कर मैंने जो अपराध किया इसके लिये मैं क्षमा चाहता हूँ और आप धर्म सुनने का अभिलाषी हूँ।

इसके पश्चात् मुनि ने धार्मिक बोध दिया जिसको श्रवण कर श्रेणिक राजा ने बडी प्रसन्नता से स्वीकार किया।

मुनि की स्तुति, सम्मान, और वन्दना नमस्कारादि करके श्रेणिक राजा वहा से विदा हुए। मुनिवर श्री पृथ्वी मण्डल के अनेक भव्य,जीवों को प्रतिबोधित कर आन्तरिक शत्रुओं को जीत कर अन्त में अनन्त पद को प्राप्त हुए। सनाथ हो गये परन्तु, दूसरे लोगों को समझाने के लिये उन्होंने अपना नाम "अनाथ" ही रखा। इसी से उनको अनाथी ही कहा जाता है।

जिसके पास इतना बडा राज्य था जो ऐसा समृद्धि शाली था-ऐसे गुण सुन्दर और श्रेणिक राजा जैसे भी अनाथ थे तो सामान्य पुरुष किस प्रकार सनाथता का दावा कर सकते हैं ?

इस प्रकार मुनि महाराज और बनेडा राजा साहब में बात चीत हुई। राजा साहब ने कहा कि आप से वार्तालाप कर बडी प्रसन्नता हुई। मेरा बडा सौभाग्य है जो आप जैसे महात्मा के दर्शन हुए। आपका व्याख्यान किसी मजहब वाले को कटु नहीं होता। प्रत्येक की समझ में आजाता है। कृपया एक व्याख्यान महलों में भी दें। तदनुसार आपने एक व्याख्यान दिया। जिसे रनिवास में से मा साहब रानी साहब कुवरानी साहब ने भी सुना। पश्चात् राजा साहब ने मलमल के थान महलों में वैराने का आग्रह किया किन्तु, मुनि महाराज बोले कि हमारी उत्तम से उत्तम भेंट यही है कि आपकी ओर से कोई दया अथवा उपकार का कार्य्य हो जाय। जब राजा साहब का बहुत आग्रह देखा तो आपने उसमें से ३ तीन हाथ वस्त्र ले लिया। फिर राजा साहब ने प्रार्थना



धर्मप्रेमी श्रीयुत् जुहारमलजी पुनमिया–सादड़ी (मारवाड़

परिचय प्रकरण

की कि आगे का चतुर्मास यहां करें। यह चतुर्मास तो सादड़ी स्वीकार हो चुका। इस पर जैसा अवसर होगा कह कर आप मांडल पधारे। मार्ग में बनेड़ा सरकार का दया विषयक पट्टा * लेकर कारभारी आये। मांडल में आपके व्याख्यान से बहुत उपकार हुआ। लोगों ने मदिरा, मांस, तम्बाकू और झूठी गवाही देने का त्याग किया और २ भी अनेक त्याग हुए। सूर्योदय पर प्रतिलेखना कर आपने यहां से विहार किया।

वहां से पागोर पधारे और फिर बागरास। जहां रावले में व्याख्यान दिया। फिर कोसिथल पधारे। वहां के ठाकुर सा० श्रीमान् पद्मसिंह जी के सुपुत्र श्रीमान् जवानसिंह जी ने भी व्याख्यान सुना और कई त्याग किये और दया पट्टा भी दिया * फिर आप रायपुर पधारे जहां पूज्य श्री एकलिंगदास जी महाराज विराजते थे। आपके प्रति उन्होंने बड़ा प्रेम प्रदर्शित किया। मानो दोनों एक ही सम्प्रदाय के अनुयायी हों। बीच बाजार में आप का व्याख्यान हुआ जिसके फल स्वरूप एक जैन पाठशाला की स्थापना हुई। ज्येष्ठ शु० ५ को प्रात काल आपने देखा कि कोई हाल ही में उत्पन्न हुए एक बालक को कोई छोड़ कर चला गया है। बालक गांव के बाहर भैरव जी के चबूतरे पर पड़ा हुआ सिसकियें ले रहा था। हाकिम सा० ने उसकी तहकीकात की उसके बाद नाया के द्वारा उसको आपके पास लाया गया। जहां आप व्याख्यान दे रहे थे आपने उसे

*पट्टे की नकल के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण २।

*पट्टे की नकल के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण २।

देखते ही अनुसन्धान करना आरम्भ किया। जब यह निश्चय हो गया कि यह किसी विधवा की करतूत है तो लोगो को सम्बोधित कर आपने कहा कि लो देखो इस देश में कैसे अत्याचार होते हैं। इसके पश्चात् आपने विधवा स्त्री के कर्तव्य" पर कुछ व्याख्यान दिया जिस में यह दिखलाया कि पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा का कर्तव्य धर्म से पतित होकर पाप की वृद्धि करना नहीं है। बल्कि शील और धर्म की रक्षा करते हुए अपने जीवन को परमात्मचिन्तन में व्यतीत कर सदाचार पूर्वक रहना ही परमधर्म है।

फिर यथा समय यहा से विहार कर आप करेडे पधारें। करेडे के राजा सा० ने व्याख्यान सुन कर बडी प्रसन्नता प्रगट की। ठहराने का भी आग्रह किया परन्तु स्थिरता नहीं थी। इस कारण केवल पाच ५ रोज ही ठहरे और उसके बाद यहा से विहार कर ताल पधारे। यहा ताल ठा० साहिब के प्रार्थना पर आप ने राजमहल में व्याख्यान दिया। ठाकुर सा० की माता ने जैन रीत्यानुसार आप की वन्दना कर अपनी पुत्र वधू (राणी सा०) को सम्यक्त्व दिलाई और स्वय ने रात्रि भोजन का परित्याग किया। तथा प्रतिज्ञा की कि मैं यावज्जीवन इसका पालन करू गी। रानी सा० तथा कई दास दासियो ने मास भक्षण मदिरा पान आदि कई प्रकार के त्याग किये। ठाकुर सा० उम्मेदसिंह जी ने महीने में २२ रोज शिकार न खेलने और पाच जानवरो के सिवाय किसी जानवर का शिकार न करन की प्रतिज्ञा की। साथ ही एक हुक्म भी ऐसा जारी कर दिया जिसके अनुसार इलाके के तालावो में कोई व्यक्ति मछलिये न मार सके। अन्यान्य लोगो ने भी कई

प्रकार के त्याग किये। ताल के ठाकुर सा० २ कोस की दूरी पर थाणा तक चरित्रनायक जी का पैदल पहुचाने आगे थाणा के ठाकुर साहब ने परिन्दे जानवरो की शिकार का त्याग किया, और लोगो ने कइ जीवो को अभयदान दिया। फिर आप चीपडे और भीम होते हुए गोदा जी के गाव पधारे वहा भी अच्छा उपकार हुआ। रावत लोगो मे मदिरा मॉस का त्याग किया। और २ भी कइ जाति के लोगो ने त्याग उप वासादि किये। फिर कोकरखेडा बरार, टाडगढ, ठेकरवास होते हुए लसाणी पधारे। वहा ताल के ठाकुर श्री उम्मेदसिंह जी साहब प्रति दिन व्याख्यान सुनने को पधारते थे उन्होने एक दिन व्याख्यान म यह प्रतिज्ञा की कि वर्ष भर मे मेरे यहा जितने बकरे राज्य के आते हैं उन्ह म अमरिया कर दुगा। और लसाणी ठाकुर श्रीमान् खुमाणसिंह जी साहब भी प्रति दिन उपदेश में पधारते थे। आपने प्रतिज्ञा की कि भाद्रव मॉस में शिकार न करगे। चैत्र शु० १३ का भी किसी जीव की हिंसा न करेंगे तथा मादीन जानवरो को आ जन्म न मारने का प्रण किया। फिर चरित्रनायक जी ने देवगढ की ओर विहार किया। लसाणी ठाकुर साहब अपने पाटवी पुत्र सहित अपनी सीमा तक पहुचाने को आये। चरित्रनायक-जीने देवगढ पहुच कर लगातार सात व्याख्यान दिये। जनता ने और अधिक ठहरने का आग्रह किया परन्तु चतुर्मास निकट होने के कारण आप अधिक न ठहर सके। वहासे चारभुजाजी, वहा दो व्याख्यान दिये हाकिम सा० जतनसिंह जी ने अच्छो सेवा भक्ति की आप बड सज्जन और धर्मनिष्ठ हैं। लोगो ने वहा भी चरित्रनायकजी को ठहराने का अत्याग्रह किया। परन्तु, समय का अभाव था। अत प्रात काल ही प्रतिलेखणा कर आप

देसूरी पधारे। देसूरी में स्थानक वासियो का एक भी घर नहीं है। किन्तु, फिर भी वहा आपको लोगो ने बडी भक्ति-भाव से ठहराकर दो व्याख्यान दिलवाये। जिनमें हाकिम सा० मानमल जी B A L L B, डा० सा० सुरेन्द्रनाथ सरकार पुलिस मुहर्रिर गणेशमल जी, प० आत्मा प्रसाद जी हेड मास्टर, श्रीयुत पारसमल जी खजान्ची, आदि ने बडे उत्साह से योग देकर व्याख्यान का लाभ लिया। फिर आप घाणेराव पधारे कोतवाली के सामने आपके दो व्याख्यान हुए बेहद भीड थी श्रीयुत बाबू श्रीनाथ जी मोदी मास्टर देसूरी ने स्व रचित मनोहर स्वागत कविता पढी जिसे लोगों ने बहुत पसन्द की। कविता भाव पूर्ण तो थी ही। किंतु आपके सुमधुर तथा कर्ण प्रिय स्वर और लय ने उसे और भी रोचक बना दिया था। वह कविता यह थी —

अध्यापक श्री नाथ जी मोदी
सादडी (मारवाड़) को
स्वागत-कविता ।

बर्षाई सुधाधारा २ मुनिवर पुण्यो से मिला ।
पच महाव्रत के मुनि धारी, राग द्वेष को दूर टारी ।
चारों कषाय निवारा, निवारा ॥ मुनिवर ॥ १ ॥
विविध प्रान्त में विचरे मुनिवर सब जनता को नसीहत देकर
भ्रम को दूर निकारा, निकारा ॥ मुनिवर ॥ २ ॥

दिल दर्शन को चाह रहा है। देख २ मन मोह रहा है।
किया दर्शन सुख कारा, सुखकारा ॥ मुनिवर ॥ ३ ॥
"श्री चरणों में शीप नमावे, हाथ जोड मुनि के गुण गावे।
जय २ शब्द उच्चारा ॥ मुनिवर ॥ ४ ॥

श्रीमान् अनोपचन्द जी पूनमिया
सादडी (मारवाड) की ओर से

स्वागत-कविता ।

तर्ज:—दया पालो बुद्धजन प्राणी--
चौथमलजी मुनि उपकारी, जगतवल्लभ जग में जारी ॥ टेर ॥

जन्म मुनि नीमच में पाया, देश मालव मम मन भाया।
तात तस गगाराम कहाया, मात केशर के कूँख जाया।

दोहा ।

उन्नीसे बावन विषे, निज जननी के लाल ।
फाल्गुन सुद दिन पचमी, लीनो संयम भार ॥
त्यागी नव वधू परणी नारी, चौथमल जी मुनि उपकारी ॥१॥
जवर गुरु हीरालाल कीना जिन्हो ने शिर पे हाथ दीना।
भक्ति उनकी कर यश लिना, पूर्ण वैराग्य में चित्त दीना।

दोहा।

गुरु आज्ञा आगे करी, पीछे चलते आप।
शुद्ध चारित्र पालते, जिम पूरण शशि साप॥
विनय कर लिया ज्ञानधारी, चौथमलजी मुनि उपकारी॥२
वाणी मुख से अमृत वर्षे, सुनके भव्य जीव अति हर्षे।
मूढ़ से मूढ चाहे खरसे, सो भी सुन ज्ञान हूटे धरसे।

दोहा।

देश २ में विचरके, करते पर उपकार।
कई जीवो के आपने, दीने प्राण उवार।
दिये कई पापी को तारी, चौथमलजी मुनि उपकारी॥ ३॥
गुरु की महिमा है भारी, पार नहीं पाते नर नारी।
लिखते लेखनी भी हारी, कहा तक करूं महिमा थारी।

दोहा।

गहरे उदधि सम आप हो, नहीं गुणो का पार।
निज अनुचर पै महर कर, दीजो पार उतार।
अर्ज यही चरणों में हारी, चौथमलजी मुनि उपकारी॥४।
शहर सादड़ी विचरत आये, मुनिवर अष्ट सग लाये।
सज्जन जन के मन अति भाये, महिमा सुन पामर घबराये

दोहा।

साल इक्यासी आषाढ सुद, सातम ने बुधवार।
अनोपचद ने जोडके, गाई सभा मझार।
सुनके हर्षे सब नर नारी, चोथमल जी मुनि उपकारी ॥५॥

आषाड शु० ७ सवत् १६८१ चि० को आप माद्रा (गाय) होकर सादडी पधारे। नगर से बाहर लगभग ५०० नरनारी बडी भक्ति और प्रेम के भाव लिये हुए आपके स्वागत को उपस्थित थे। यथा समय वीर जयध्वनि और धूमधाम के साथ आपका सादडी नगर मे पदार्पण हुआ। और इस प्रकार वहा के निवासियों ने अपने को बडा सौभाग्य शाली जाना।

जिस दिन से चरित्र नायक महोदय सादडी मे पधारे उसी दिन से नियमित रूप से प्रति दिन आप के सुललित व्याख्यान होने लगे। श्रोताओं की सख्या उत्तरोत्तर बढती गई। क्या जेन और क्या जेनेत्तर सभी लोग तथा राज कर्मचारी पोस्टमास्टर प० हरलाल जी शर्मा सा० डाक्टर अबदुल लतीफखा P E H (इलाहाबाद) सा० आदि भी समय २ पर आपके व्याख्यान मे योग देते थे। आपके उपदेश का लोगो पर बडा प्रभाव पडा। व्रत, पच्चखाण, दया पोषध आदि खूब हुए जो क्षमा पत्रों मे सविस्तर प्रकाशित हो चुके हैं।

एक दिन श्रीयुत आनन्द जी कल्याण जी (मदिर मार्गी) की दूकान के सुयोग्य मुनीम श्रीयुत् भगवान धारसी जी जो आदि मिल कर चरित्रनायक जी की

सेवा में आये और प्रार्थना की कि गाव से बाहर प्रति वर्ष माता जी के आगे जो पाडे का वध होता है उसको रोकने की कोशिश की जाय। साथ ही यह भी विनय की कि आप भी श्रावकों को इसके लिये उत्तेजना दें चरित्रनायक जी ने इसे स्वीकार किया और सब लोगों को इसके लिये उत्तेजित किया जिस के फल स्वरूप दोनों गच्छ के सज्जनों ने प्रतिवर्ष होने वाली इस हिंसा को सदैव के लिये बन्द करवा दिया।

इस चतुर्मास म विशेष उल्लेखनीय बात मुनि श्री मयाचन्द जी महाराज की ३६ दिवस की तपस्या है जिसे आपने गरम जल के आधार पर किया। तपस्या श्रावण शु० ८ स आरम्भ हुई थी जिसका पूर भाद्रपद शु० १४ को हुआ। इस की सूचना समाचार पत्रों तथा निमन्त्रण पत्रिकादि द्वारा सादडी श्री सघ ने सवत्र भेजदी थी। उसके अनुसार पूर के २ दिन पहिले से ही दूर २ के सज्जनगण पधारने लगे उपाश्रय के बाहर के मेदान मे व्याख्यान मण्डप सजाया गया था। पूर के दिन सभा मडप में सब से पहिले साहित्य प्रेमी और चरित्रनायक जी के सुयोग्य शिष्य पडित मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज ने प्रेम के विषय मे कुछ देर तक एक सुमनोहर भाषण दिया। इस के पश्चात् चरित्रनायक जी का उपदेशात्मक व्याख्यान हुआ। श्रोतागण बडे, प्रसन्न हुए। सबने कहा कि ऐसा आनन्द हमारे जीवन में यहा कभी नहीं हुआ।

उत्सव में रतलाम, जावरा, मन्दसौर जोधपुर, ब्यावर आदि कई शहरो के लगभग ६०० व्यक्ति सम्मिलित हुए थे पूरके दिन

आनन्द जी कल्याण की दुकान के मुनीम श्रीयुत् भगवान धारसी आदि २ सज्जन भी पधारे थे। उस दिन स्थानकवासियो की दुकानें तो बन्द रही ही थीं, परन्तु मन्दिर मार्गी भाइयो ने भी अपना सब प्रकार का कारोबार बन्द रक्खा था लगभग १२००) रुपये के जीव छुडाये गये। गरीबो को मिठाई तथा वस्त्रादि दिये गये। श्रीमान् जुहारमल जी पूनमिया ने जैन सुख चैन बहार ५ वा भाग (चरित्रनायक जी रचित) अपनी ओरसे छपवा कर सभा मण्डप में मुफ्त वितरण किया। आप की अवस्था थोडी है। तो भी आप दिल के सखी और बुद्धिमान हैं। परोपकार की ओर आप का हमेशा विशेष लक्ष्य रहता है श्रीयुत् हस्तीमल जी पूनमिया ने भी ज्ञानगीत सग्रह छपवा कर अमूल्य वितरण की। आपने व रूपचन्द जी व अनोपचन्द जी साहब ने भीलवाडे में चतुर्मास की स्वीकृति के समय मजूरी लेने में बडा परिश्रम किया था।

सादडी श्री सघ ने मुनि जी की अच्छी भक्ति की तथा आगत सज्जनों की तन मन धन से प्रेम पूर्वक सेवा की। यहा का श्रीसङ्घ बडा धर्मप्रिय और भक्तिकारक है। श्री सङ्घ ने हमारे चरित्रनायक जी का जीवन चरित्र लिखवाने में बडे उत्साह से पूरी २ सहायता दी।

पर्यूषण पर्व के दिन फतापुरा के ठाकुर साहब ने भी उपदेश सुनने का लाभ लिया। कई अजैन लोगो ने उपवासादि किये और तम्बाकू पीने तथा मदिरा मास भक्षण का परित्याग किया।

ता० १५। १०। २४ को श्रीमान् बूसी (मारवाड) ठाकुर

सा० व्याख्यान श्रवणार्थ पधारे। आप ने चरित्रनायक जी के उपदेश से निम्नलिखित त्याग किया –

(१) हरिण और पक्षी की शिकार न करना।

(२) महीने में १० दिन तक बिल्कुल शिकार नहीं करना।

आप के साथ एक महाशय और थे उन्होंने भी हरिण का शिकार न करने का प्रण किया।

यथासमय चतुर्मास पूर्ण होने पर चरित्रनायक महोदय ने सादडा निवासियों को व्याख्यान रूपी सुधा रस से अतृप्त रख वालीकीओर विहार किया। लोगो की वडी उत्कण्ठा रही।

सादडी से विहार कर आप वाली पधारे यद्यपि वहा श्वेताम्वर स्थानकवासी जैनियो के घर बहुत कम हैं, तथापि चरित्रनायक जी के पवलिक व्याख्यान में जनता बहुत जमा होती थी, श्रीमान् पन्नालाल जी बी०ए० हाकिम साहिब श्रीमान् रामस्वरूप जी वी० ए० एल० एल० वी० नायव हाकिम आदि भी उपदेश सुनने में सम्मिलित होते थे। वहा से विहार कर खिवेल पधारे वहा पर स्वामीजी श्री वख्तावरमलजी महाराज विराजते थे। उन से प्रेमपूर्वक वार्तालाप हुई। तदनुसार वहा दो व्याख्यान दे राणी स्टेशन पर पधारे। वहा स्थिरता कम थी तदपि जनता ने रात्रि में उपदेश सुनने की अत्यन्त अभिलाषा प्रकट की उस को आप ने स्वीकार कर एक व्याख्यान दिया। वहा से विहार करते हुए वूसी पधारे। वहा

श्रीमान ठाकुर साहबने भी उपदेश सुना। वहा से चरित्रनायक जी विहार कर पाली पधारे। सैकडों नर नारी स्वागत को आये जयध्वनि के साथ शहर में मुनि श्री का पदार्पण हुआ मुनि श्री के प्रभाव से लोगों को यह पूर्ण विश्वास हो गया कि हमारे शहर में जो दो धडे हो रहे हैं वे इन महापुरुष के प्रभावशाली सदुपदेश से एक होकर शाति हो जावेगी। अस्तु मुनिश्री के पधारने की खबर शहर में बिजली की तरह फैल गई। व्याख्यान म कितने मनुष्य आते थे उसका उल्लेख करना हमारी लेखनी से तो परा पर यहा की जैन जनता कहती थी कि व्याख्यान म इतने लोगो का समूह पर्यूषण में भी होना कठिन ही नहीं वरन दुर्लभ है। जैन और जैनेतर सब ही लोग व्याख्यान रूपी पीयूष धारा स प्यास बुझान को आते थे। नाना विषय सन्दर्भित उपदेश होने से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय स्थल स सप का अकुरि प्रकट होने लगा। यहा जोधपुर से कैप्टेन ठाकुर केसरीसिंह जी साहब दरडा जागीरदार गलथनी (मारवाड) और ब्रह्मचारी श्री लालजी ठाकुर लालसिंह जी कुवर कुचामण व जगदीशसिंह जी गहलोत H I M S मुनि जी के दर्शनों को आये दर्शन कर उपदेश सुन बडे प्रसन्न हुए के इन साहब ने कहा कि म ने सम्वत् १९७३ में जोधपुर कुचामण की हवेली में आप के उपदेश सुने थे आप ही के व्याख्यान रूपी समुद्र मे से अहिंसा विषयक लहरें लेकर म जगह २ भ्रमण कर के कितने ही जागीरी ठिकाणों मे व अन्य लोगों मे दारू मास क परित्याग का प्रचार कर रहा हूँ जिस में मुझे बडी सफलता मिली है अनेक स्थान पर दारू व मास का व्यवहार बन्द हो चुका है। अवशेष प्रयत्न जारी है। यह आपही के व्याख्यान का फल

समझे। और यह ब्रह्मचारी जी भी इसी कार्य में लगे हुवे हैं। सप विषयक प्रयत्न पूर्ण सफली भूत न होता देख कर मुनिजी ने पोप कृष्ण ५ को वहा से विहार कर दिया और रात्री को शहर के बाहिर रामस्नेही आश्रम मे निवास किया रात्री को श्रीमान् हाकिम साहिब भी मुनिजी के दर्शनों को आये और कई तात्विक विषयो पर बात चीत हुई। मुनि श्री से जनता ने प्रात काल को एक व्याख्यान और भी वहा होने की स्वीकृति ली। यद्यपि स्थान शहर से दूर था तथापि जन सख्या ने उपदेश श्रवण करने मे अधिक उपस्थिति होने का परिचय दिया। चरित्रनायक जी पुन सप विषयक उपदेश देने में कुछ सकुचित हुवे कि इतने व्याख्यानों का असर नही हुआ तो आजका उपदेश माना तप्ततवे के ऊपर पानी की बु द छिटक के छू बुलाना मात्र है। क्योकि पुन सप विषयक उपदेश देने मे सकुचित होना स्वभाविक ही है। परन्तु चरित्र नायकजीने कुछ उपदेश दिया। हम अपनी लेखनी से नहीं बता सकते कि उन थोडेही वाक्यों म क्या जादू था या कुछ और। अस्तु मुनि श्री के उपदेश से पाली श्री सघ ने फौरन सम्प करलीया। इस जगह हम पाली श्री सघ व अन्य उन महानुभावों को कि जिन्हो ने इस कार्य में परिश्रम किया धन्यवाद देत हैं। श्रीमान् मिश्री लालजी मुणोत का नाम विशेष उल्लेखनीय है कि जिन्हा ने ऐक्यता विषय में भारी परिश्रम कर जनता के मनको प्रमोदित किया। पाली श्री सघ ने चरित्र नायक जी से २ व्याख्यान की और मजूरी ले पुन शहर मे पदार्पण कराया। प्रात काल के उपदेश की पूर्ति होने पर श्रीमान् सेठ मुकनमलजी बालीया की ओरसे श्रीफलों की प्रभावना बांटीगई। दुसरे दिन श्रीमान्

मोती लालजी मूथा की ओर से व जनता ने ऐक्यता की खुशी मे करीब ३०० बकरों को अभयदान व गौओं के लिए घासादि का प्रबन्ध किया । चरित्र नायक जी का उपदेश प्रत्येक व्यक्ति के लिए अत्यन्त उपयोगी होने के कारण हिन्दू मुसलमान सब ही जनता उपदेश श्रवण करने मे भाग लेती थी यहा तक कि वेश्याए भी चरित्र नायकजी के वाक्य श्रवण करने को आती थी "मगनी" और 'धनी" वेश्या ने चरित्र नायक जी का उपदेश सुन सैकडो मनुष्यों के सामने यावज्जीवन पर्यन्त शीलव्रत धारण किया । और "भूरणगारी" वेश्याने एक अमुक व्यक्ति के अतिरिक्त औरो के त्याग किये । इससे पाठक स्वय विचार सकते हैं कि चरित्र नायक जी के उपदेश में कितना असर भरा हुआ है । चरित्र नायक जी यहा से विहार कर पुनागरो होते हुए चोटिले पधारे जहा पाली के करीब ७०-७५ श्रावक आपके दर्शनोंको आ पहुचे एक व्याख्यान देकर यहा से विहार किया । श्रीमान् ठाकुर अभयसिहजी भी पहुचाने को साथ आये उन्होने कहा कि सम्वत् १६७३ मे आप यहा पधारे थे तब मुझे श्रावण और भादों मास मे शिकार नहीं खेलने की प्रतिज्ञा कराई थी अब आपका पुन पदार्पण हुआ इसलिए अब में आषाढ पूणिमा से कार्तिक पूणिमा तक और एक वैशाख मास में शिकार नहीं करूगा । श्रीमान् ठाकुर साहब के भ्राता मगसिह जी ने स्वय शिकार करने व दूसरो को बताने के त्याग कर दिये ठाकुर साहब के साथ म आये हुए एक व्यक्ति ने हिरण पर बन्दूक न चलाने की प्रतिज्ञा की । यहा से चरित्रनायक जी विहार कर रोहिट होते हुए लूनी जकसन पधारे । यहा से सेलावास की ओर विहार किया रास्ते ही म शिकारपुर (मारवाड) के

॥ ओ३म् ॥

सार्वजनिक व्याख्यान PUBLIC LECTURE.

अहिंसा का महत्व

सन्त समागम हरिकथा तुलसी दुर्लभ दोय।
सुत दारा अरु लक्ष्मी पापी घर भी होय ॥

इस बात को सम्पूर्ण धर्मानुरागी देशहितैषी और विद्वान् सज्जन मान सकते हैं कि संसार में सत्संग अमूल्य पदार्थ है। जितना होसके अवश्य करना चाहिये तो सज्जनों से क्यों आशा न की जाय कि आप लोग श्रीमान् जैनमुनि व्याख्यान-वाचस्पति पंडितवर **महात्मा श्री चौथमल जी महाराज** का "अहिंसा का महत्त्व" विषय पर सुललित और चित्ताकर्षक पबलिक व्याख्यान सुन कर लाभ उठावेंगे। यह लेक्चर ता० २५ जनवरी सन् १९२५ तदनुसार माघ सुदि १ सं० १९८१ वि० रविवार को सुबह ९ बजे सरदार मार्केट (घंटाघर) में होगा।





मार्केट (घंटाघर) जोधपुर मे ता २५ जनवरी सन १९२५ को प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनिश्री चौथमलजी महाराजके भाषणमें आई हुई जनताका दृश्य

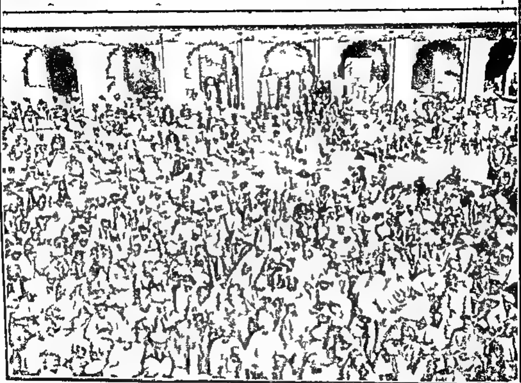
॥ ओ३म् ॥

सार्वजनिक व्याख्यान PUBLIC LECTURE.

अहिंसा का महत्व

सन्त समागम हरिकथा तुलसी दुर्लभ दोय।
सुत दारा अरु लक्ष्मी पापी घर भी होय ॥

इस बात को सम्पूर्ण धर्मानुरागी देशहितैषी और विद्वान् सज्जन मान सकते है कि ससार में सत्सग अमूल्य पदार्थ है । जितना होसके अवश्य करना चाहिये तो सज्जनों से क्यो आशा न की जाय कि आप लोग श्रीमान् • जैनमुनि व्याख्यान-वाचस्पति पडितवर **महात्मा श्री चौथमल जो महाराज** का "अहिंसा का महत्व" विषय पर सुललित और चित्ताकर्षक पब्लिक व्याख्यान सुन कर लाभ उठावेंगे । यह लेक्चर ता० २५ जनवरी सन् १९२५ तदनुसार माघ सुदि १ स० १९८१ वि० रविवार को सुबह ९ बजे सरदार मार्केट (घटाघर) में होगा ।



दार मार्केट (घंटाघर) जोधपुर में ता २५ जनवरी सन १९२५ को प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनिश्री चौथमलजी महाराजके भाषणमें आई हुई जनताका दृश्य

भरपक व्याख्यान यदेही भावपूरित सर्वप्रिय और ओजस्विनी भाषा में इतने सरस होते हैं कि बालक, युवा वृद्ध व गृहलक्ष्मियां तक सभी समझ सकते हैं।

ऐसे महात्माओं के सत्संग का अवसर विरला ही मिलता है। इस लिये सर्व सज्जनगण अपने इष्ट मित्रों सहित अवश्य पधारें ताकि "समय चूकि पुनि का पछताने" पीछे पश्चाताप न करना पड़े।

जोधपुर ⎫ आप सर्व श्रीमानों का दर्शनाभिलाषी,

ता०२२-१-२५ई० ⎭ ब्रह्मचारीलालजी महाराज

"वदिक" (तुवर राजपूत)

मुनिजी यथा समय पर सरदार मारकेट मे पधारे जनता उत्कण्ठ से राह देख ही रही थी। चरित्रनायक जी ने अपने जोशील भाषण मे अहिंसा का सिद्धात जनता के सन्मुख रख दिया अहिंसा का इतना महत्व जनता सुनते ही चित्रित हागई। हिंसा की रोक के लिए अनेको ने कई प्रकार के त्याग किये विशेष कर स्वदेशी जूते के सिवा चमडा काम मे न लेने के लिए बहुतो ने प्रतिज्ञा की। व्याख्यान समाप्त होने पर जनता की ओर से मुनिश्री के लिए चौतरफ से धन्यवाद के शब्द भेट स्वरूप में आरहे थे। और आगन्तुक चतुर्मास की विनती पर जनता ने जोर दिया। उसी समय श्रीमान् व्यास

तनसुख जी वैद्य ब्यावर ने ब्यावर मे चतुर्मास करने के लिए विनती की। आर्य समाज के नेता श्रीमान् लछमनदासजी ने खडे होकर चरित्रनायक जी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की उस भाषण मे दादूपंथ, कबीरपंथ, रामस्नेही आदि कई सम्प्रदाय के सन्त भी आये थे। पाठक इस बात को सुनते ही उस दृश्य के देखने की प्रत्येक व्यक्ति के हृदय से इच्छा उत्पन्न होगी कि अहाहा यह दृश्य तो हम भी देखते तो क्याही अच्छा आनन्द आता अतः उसी दृश्य का पाठकों को देखने के लिए यह चित्र दिया जाता है कि चरित्र नायक जी के भाषण में प्रत्येक सम्प्रदायानुयायियों की जनता कितनी संख्या में उपस्थित हुई थी और होती है यह चित्र सर्वांङ्ग सम्पूर्ण जनता का नहीं है क्योंकि पहिली और दूसरी सीट पर बैठे हुए करीब १५०० मनुष्यों का चित्र नहीं आया केवल सड़क पर बैठे हुए कुछ दूरी पर खडे हुए मनुष्यों का ही चित्र आया हुआ है। अस्तु चरित्रनायक जी वहा से विहार कर झालामण्ड होते हुए कांकेराव पधारे जहा इटावे की तरफ के कई ब्राह्मण ब्याह के जलूस म आये हुए थे और उसी अवसर पर आस पास गावो के ब्राह्मण भी विशेष संख्या में आये हुए थे। जितने ब्राह्मण उपस्थित थे प्राय सभी चरित्र नायक जी से अपरिचित थे हा केवल २-१ व्यक्ति नाम से भले ही परिचित हों चरित्रनायक जी के मुख मण्डल पर ही अद्भुत व्याख्यान की चमत्कृति का चिन्ह किससे छिपा रह सकता है। फौरन कई ब्राह्मण व उपदेशक कविवर लालचन्द जी शर्मा अलीगढ सिटी आदि ,मिलकर चरित्रनायक जी के पास आ उपदेश श्रवण करने की इच्छा प्रकट की मुनि श्री ने उनकी विनती स्वीकार कर एक व्याख्यान दिया उसका उन ब्राह्मणों पर

बहुत प्रभाव पडा वह चरित्तनायक जी की मुक्त कठ से प्रशसा करने लगे। वहा स विहार कर विशल पुर विलाडे होते हुए व्यावर पधारे वहा कोशिथल निवासी स्वर्गीय श्रीमान् सेठ जवारमल जी कोठारी के पुत्र प्यारचन्दजी और इन्हीं के लघु-भ्राता वक्तावरमल जी और इनकी माता ककूवाइ ये तीनों माता पुत्र दीक्षा मुमुक्षु थे। अत व्यावर श्रीसघ ने फाल्गुण शुक्ला ३ का मुहूर्त निश्चित कर आमत्रण पत्र गाव २ भेज दिये श्री सङ्घ ने वडे समारोह के साथ तीनों की दीक्षा का उत्सव किया। दोनो शिष्य चरित्तनायकजी के नेश्रित हुए और ककुबाई श्रीमती महासति जी धापूजी महाराजके नेथाय में हुइ। दीक्षा का वडा ही अपूर्व आनन्द आया। उन दिनों में वहा खण्डे-लवाल जेन महासभा का अधिवेशन और भारत वर्षीय दि० जैन महासभा का नेमित्तिक अधिवेशन भी हुआ था उस समय दिगम्बर जनता वहु स ख्या में वाहिर गावो से आई हुई थी दानवीर रायवहादुर श्रीमान् सेठ कल्याणमल जी इन्दोर खण्डेलवाल जेन महासभा के अधिवेशन के सभापति थे। श्रीमान् सेठ कल्याण मल जी उज्जेन श्रीमान् सठ भयासाहव मन्दसोर श्रीमान् सेठ रिखवदास जी उज्जेन भी उस सभा में आये हुए थे। उपरोक्त सभापति व सव महानुभावों को चरित्रनायक जी के विराजने की खवर मिलते ही आपके दर्शनों को रायली के कम्पाउड में आये परन्तु उस समय चरित्रनायकजी वहा नही थे वे नव दीक्षित शिष्यो की दीक्षा होने के कारण दानवीर राय वहादुर श्रीमान् सेठ कुन्दनमल जी कोठारी (जैसलमेरी) के वगले में ठहरे हुए थे अत उन्हें चरित्रनायक जी के दर्शनों का सोभाग्य प्राप्त न होसका

केवल शिष्य वर्ग के दर्शन कर पीछे लौट गये चरित्रनायक जी वहा से विहार कर आनन्दपुर (कालू) पुष्कर होते हुए अजमेर पधारे। यहा एक पबलिक व्याख्यान दिया जनता की गहरी उपस्थिती हुई थी। साहबजादा अब्दुल वाहिदखा साहब डिस्ट्रीक्ट सेशन जज अजमेर राय साहब मुन्शी हरविलासजी रिटायर्ड जज अजमेर व मेम्बर लेजिसलेटिव कौंसिल मुन्शी शिवचरणदास जी साहिब जज खफीफा कोर्ट अजमेर आदि राज्यकर्मचारी भी अधिक सख्या में व्याख्यान का लाभ ले रहे थे। भाषण की समाप्ति पर साहब जादा अब्दुल वाहिद खा साहिब ने व्याख्यान की भूरि २ प्रशसा की और कहा कि -यदि पहले भी मुझे सूचना होती तो जरूर आता आदि।

चतुर्मास के दिन सन्निकट आरहे थे अतएव जोधपुर से चरित्रनायक जी के चतुर्मास की स्वीकृति के लिये तार व पत्र आरहे थे। जयपुर के श्रावक गण वहा आकर अनुनय विनय कर रहे थे। और व्यावर का श्रीसङ्घ पहले आचुका था परन्तु जयपुर जोधपुर को तो नकारात्मक सा ही उत्तर मिला। और व्यावर श्री सङ्घ की विनती स्वीकृत हुई।

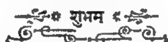
यहा पर यह वतलाना अनावश्यक न होगा कि कोटा की सम्प्रदाय के श्रीमान् पण्डित मुनि श्री रामकुवारजी महाराज व उनके शिष्यगण के हृदय में बहुत समय से यह भावना थी कि श्रीमान् प्रसिद्धवक्ता पडित मुनि श्री चोथमल जी महाराज साहबकी सेवामें चतुर्मास कर ज्ञान ध्यानका विशेष लाभ लेवें जब आपको इन्दोर में चरित्रनायक जी के अजमेर पधारने की खबर मिली तब आप अपने शिष्यगण सहित शीघ्रगति से

विहार कर अजमेर पधारे। इच्छानुकूल अवसर देखकर चरित्रनायक जी ने फरमाया कि हमारा चतुर्मास व्यावर स्वीकृत हुआ है अत आप भी वहीं चातुर्मास करना स्वीकारें तो ज्ञान ध्यान की विशेष वृद्धि होने की सम्भावना है। तब मुनि श्री रामकुंवार जी महाराज ने सहर्ष उत्तर दिया कि हमारे हृदय में भी बहुत समयसे यही इच्छा थी अब यह शुभ अवसर प्राप्त हो गया है इस लिये हमारे भाव भी यथा सम्भव चतुर्मास आपकी सेवा में व्यावर हो करने के हैं। यहा से मुनि श्री रामकुंवार जी महाराज चरित्रनायक जी के साथ ही विहार करते रहे। यहा से चरित्रनायक जी विहार कर शहर के बाहर श्रीमान् रघुनाथप्रसादजी वकील बी०ए० एल०एल०बी० की कोठी में ठहर और आपने वहा दो व्याख्यान दिये। नसीराबाद से दिगम्बर आम्नाय वाले श्रीमान् घीसूलालजी चरित्रनायक जी के अजमेर विराजने की सूचना मिलने पर फौरन दर्शनार्थ आये और मुनि श्री से नसीराबाद पदार्पण करने के लिए अत्यन्त आग्रह के साथ प्रार्थना की उत्तर में "अवसर" शब्द कह कर मुनि श्री किशनगढ पधारे यहा पर भी लोगो ने अच्छी सख्या में व्याख्यान का लाभ उठाया। श्रीमान् हिज हाईनेस, उमद राजाहो बलन्दमका लेफटिनेन्ट कर्नल महाराजाधिराज सर मदनसिंह जी बहादुर के० सी० एस० आइ० के० सी० आई ई० किशनगढ नरेश न अपने राज्य कर्मचारियो के साथ व्याख्यान का लाभ लेने के लिए सदेशा चरित्रनायक जी की सेवा में पहुचाया परन्तु यकायक कार्यवश श्रीमान् राजा साहिब का बम्बई जाना होगया जिससे उन्हें चरित्रनायक जी के व्याख्यान श्रवण करने का सौभाग्य

प्राप्त नहीं हो सका। किशनगढ श्रीसङ्घ के अत्याग्रह पर महाराज श्री ने मुनि श्री वृद्धि चन्दजी व चांदमल जी को चतुर्मास वहा पर ही करने की अनुमति देदी व सादडी श्रीसघ की तरफ से भी चतुर्मास के लिये अत्याग्रह पूर्वक विनती करने पर श्रीमान् मुनि श्री छगनलाल जी मगनलाल जी व सन्तोष मुनि जी को ठाणा ३ से चतुर्मास सादडी करने के लिये आज्ञा प्रदान की। वहां से चरित्रनायक जी नसीराबाद होते हुए मसूदे पधारे। इन सब रास्ते के गावो म कई राज पूतो ने शिकार खेलने मदिरा पीने इत्यादि कई प्रकार के त्याग किये। मसूदे में मुनि श्री ने ७—८ व्याख्यान फरमाये वहा के श्री स घ के विशेष आग्रह करने पर, महाराज श्री ने मुनी श्री भैरू लालजी व चम्पालालजी महाराज को चतुर्मास वहीं करने की आज्ञा प्रदान करदी। वहा से मुनि श्री अपनी इच्छानुसार स वत् १६८२ का चतुर्मास करने के लिये ब्यावर पधारे। ब्यावर की जनता दीर्घ काल से चतुर्मास का अत्याग्रह कर ही रही थी। क्यों न करे भला आप जहाँ तहा अपना पावन चरण कमल रखते हैं वहा धर्मोन्नति अधिक रूप से होती है क्योंकि आपका उपदेश सरल सरस ओजस्वी और निष्पक्षपात होता है। जिस विषय को आप लेंगे उस विषय को जैन सिद्धान्त की विशेषता दिखाते हुए भिन्न २ आम्नाय के ग्रन्थो से सिद्ध कर दिखावेंगे और जनता के हृदय म धार्मिक व सुरीति प्रचार के भाव ठोस २ कर भर देगें जिसका पूरा अनुभव तो उन्हीं व्यक्तियो को हो सकता है कि जिन्होंने महाराज श्री के मुखारविंद से व्याख्यान श्रवण किया हो। सिर्फ नमूने मात्र के लिये स क्षिप्त दिग्दर्शन पाठकों की जानकारी के लिये ऊपर

दे चुके। हमारी हार्दिक भावना है कि परमात्मा ऐसे आदर्श मुनि के हृदय में वर्तमान में भी विशेष धार्मिक बल स्फुरित करते रहें कि जिसमे वे हमेशा आत्मोन्नति समाज सुधार इत्यादि के महत्वपूर्ण कार्यों में दिन प्रति दिन अग्रसर होते रहें और आपके आदर्श जीवन से शिक्षा ग्रहण कर हमारी समाज उन्नती के उच्च शिखर पर पहुंच कर सच्चे आत्मिक सुखों की प्राप्ती के मार्ग को ढूंढ सकें।

धार्मिक व सामाजिक उन्नति के महत्वपूर्ण कार्य्य चरित्र नायक जी द्वारा वर्तमान में हो रहे हैं व भविष्य में होते रहेंगे उनका दिग्दर्शन पाठकों को (Second edition) या Second Part में कराने की यथाशक्ति कोशिश की जावेगी।

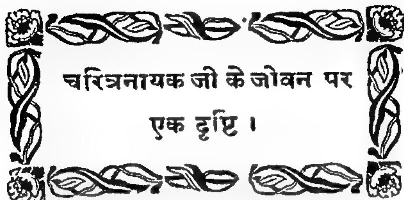


इह सि उत्तमो भन्ते, पच्छा होहिसि उत्तमो।
लोगुत्तमुत्तम ठाणं, सिद्धिं गच्छसि निरउ॥

उत्तराध्ययन सूत्र अ० ६ गा० ५८

भावार्थ—हे पूज्य यहा भी आपका उत्तम जीवन है और परलोक भी आपका जीवन उत्तम हो रहेगा और उत्तम से उत्तम स्थान जो मोक्ष है उसकी भी आपको प्राप्ति होगी।

प्रकरण ३५ वां



विज्ञ पाठक ! आपने चरित्रनायक जी के पवित्र और उच्च जीवनचरित्र का पाठ किया । आपने उनके त्याग, सत्यान्वेषण, तप, धर्म, जिज्ञासा और मानसिक संग्राम की अनेक घटनाओं का अध्ययन किया । और साथ ही, उन के अनेक उपदेशों, वार्ताओं, व्यवहारों, कार्यों, भावों और विचारों को शान्तिपूर्वक पढ़ा । आइये, अब यह देखें कि हम इस महान् आत्मा के जीवन से क्या २ शिक्षाएं लेसकते हैं ।

महात्माओं के चरित्रों के पढ़ने का मुख्य उद्देश्य यह है कि हम उन का अनुकरण करके अपने जीवन को सफल बनायें । मुनि महाराज का जीवनचरित्र कोई पौराणिक गाथा या औपन्यासिक कहानी नहीं है । बल्कि, यह वास्तविक पुरुष के जीवन की वास्तविक चर्चा है । आप के महत्वपूर्ण कार्य्य एवम् आपके जीवन सम्बन्धी घटनाएं काल्पनिक रचना नहीं हैं, किन्तु वे सब मानव स्वभाव और हृदय की उच्चतम अवस्था

का जाज्वल्यमान उदाहरण हैं। मुनि महाराज का जीवन यह सिद्ध करता है कि प्रत्येक मनुष्य में प्रलोभनों और कुवृत्तियों के निरोध की सामर्थ्य है। यह मानव-हृदय को आशा और उत्साह से भर कर उसे उच्च और पवित्र चरित्र पर मनन करने के लिये प्रेरित करता है। मुनि महाराज की शिक्षा और उपदेश का मुख्य उद्देश यह है कि मनुष्य पापों और दुःखों से छूट कर आत्मिक शान्ति को प्राप्त करे। आप का जीवन हमें यह सिखलाता है कि संसार के कल्याण और सुधार के लिये सब से बड़ी आवश्यकता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अष्टाङ्ग मार्ग का आचरण करे और समस्त मानसिक और शारीरिक प्रलोभनों, रोगों और व्याधियो से परिश्रम तथा दृढता पूर्वक संग्राम करते हुए निर्वाण पद को प्राप्त हो।

आज सारे संसार में अशान्ति छाई हुई है। प्रत्येक देश और प्रत्येक समुदाय म हलचल मच रही है। कहीं आर्थिक संग्राम हो रहा है तो कहीं फौजी युद्ध। एक देश दरिद्रता से दुखी है तो दूसरा धनमत्तता से। बाहरी सभ्यता और बाह्य आडम्बरों के मारे वास्तविक अवस्था और वास्तविक समस्या की ओर संसार का ध्यान नहीं है। संसार में नित्य नई औषधियां निकलती हैं, आविष्कारों की संख्या दिन प्रति दिन बढती जाती है। किन्तु उन की वृद्धि के साथ ही डाक्टरों और वैद्यों की संख्या भी बढ रही है। आज रोगियों की भी कोई सीमा नहीं है। हजारों चिकित्सकों और औषधियों के होते हुए भी रोगियों की संख्या में कमी नहीं दि-

यहा यह प्रश्न हो सकता है कि चरित्र नायक जी के भाषण में इतना प्रभाव क्यो है ?

बहुधा देखा जाता है कि किसी प्रसिद्ध व्याख्यान दाता के व्याख्यान को सुन कर हृदय पर जो प्रभाव पडता है उस व्याख्यान के पढने से नहीं। स्वर्गीय मि० गोखले, कर्मवीर महात्मा गाधी, माननीय मालवीय जी और लाला लाजपतराय के व्याख्यानो को सुनते समय हृदयमें जो भाव उत्पन्न होते हैं वे भाव उनके व्याख्यानो को पुस्तको या पत्रो में पढने से नहीं हो सकते। वास्तव में यह प्रभाव व्याख्यान दाता के व्यक्तित्व, आत्मिक बल, त्याग, माधुर्य, उत्साह, वाक्य रचना, भाषण शैली, स्वर परिवर्तन आदि में वास करता है। यदि वक्ता का हृदय दुखियो के दुखो से दुखी, रोगियों के रोगो से व्याकुल और अत्याचारियो के अत्याचारों से विक्षिप्त है। यदि वह पापयो की पतितावस्था पर आसू बहाता और विषय वासना ग्रस्त लोगो की मानसिक वेदनाओं का अनुभव कर उनके उद्धार का निरन्तर चिन्तन करता है।

अविद्यान्धकार में पडी हुई जनता के साथ पूर्ण करुणा मयी सहानुभूति रखता है क्या यह सम्भव है कि उसकी वाणी में अलौकिक-शक्ति, उसके शब्दों में अध्यात्मिक चमत्कार, उसके विचारों म प्रतिभा उसके भावों म सत्यता और उसके चरित्र म विचित्रता तथा विशेषता न हो ? क्या यह सम्भव है कि जो व्यक्ति इन शस्त्रों और आभूषणों से अलकृत और सुसज्जित हो वह मानव हृदय और मानव समाज, नहीं, नहीं समस्त सृष्टि म अभिलषित शक्ति का सञ्चालन कर युगान्तर उपस्थित नहीं कर सकता।

चरित्रनायकजी इन सब विभूतियों की साक्षात् मूर्ति और इन दैवी शक्तियों के गम्भीर स्रोत हैं।

इसी से आप अनुमान कर सकते हैं कि आपके अनुपम प्रभाव का क्या कारण है?

चरित्रनायकजी के भाषण के प्रभाव का एक मुख्य कारण आपका शुद्ध चारित्र बल और सरल स्वभाव भी है। आपने आरम्भ से ही ब्रह्मचर्य आदि से संयमका पालन किया है। राग द्वेषादि से आप हमेशा दूर रहे हैं। वैसे तो साधु महात्माओं का यह धर्म ही है किन्तु, आप में चारित्र सम्बन्धी विशेषताए प्रारम्भ से ही हैं। व्यसनादि से आप सर्वदा दूर रहे हैं। हमेशा सत्संगति में रहना, व्यवहार की साधारण सी बातों में भी सत्या सत्य भाषण का विचार रखना आदि बातें आरम्भ से ही आपके ध्यान में रहती आई हैं, और दीक्षा लेलेने के पश्चात् तो वे और भी दृढतर होगई जिस के फल स्वरूप आपका जीवन आदर्श और एक प्रकार से निर्विकार (विकार रहित) होगया। इस अवस्था में जनता पर आपका प्रभाव पड़े और आपके व्याख्यान को लोग बड़ी रुचि और चाव से सुने तथा प्रत्येक सम्प्रदाय के मनुष्यों की उनमें अपार भीड़ होजाय इस में आश्चर्य्य की क्या बात? उपदेश देने से आदर्श दिखाना अधिक उत्तम है और उसी का अच्छा प्रभाव पड़ता है। वैसे तो दुनिया में "पर उपदेश कुशल बहुतेरे, जे आचरहिं ते नर न घनेरे" की कमी नहीं है। किंतु सच्चा सुधारक वही कहा जा सकता है जो पहिले अपना खुद का सुधार करे। अमिट प्रभाव उसीका पड़ सकता है जो अपने शुद्ध आचरण द्वारा अपने व्यक्तिगत जीवन को आदर्श बनाले।

कोई व्यक्ति मदिरा पीकर दूसरों का मदिरा पान नहीं छुडा सकता। इसी प्रकार समाज सुधार की भी दशा है। 'खुदरा फज़ीहत दीगरा नसीहत' अथवा 'भट्टजी गुलगुले खावे औरो को पथ बतावें' के अनुसार समाज पर उस व्यक्ति का कभी कुछ प्रभाव नहीं पड सकता जो सदाचारी न हो। अभिप्राय यह कि चरित्रनायक जी ने सदाचरण के द्वारा पहिले अपना चारित्र विशुद्ध बनाया और फिर समाज सुधार और लोक हित साधन का कार्य्य हाथ में लिया। यही कारण है जो सफलता आपके आगे हाथ बाधे खडी रहती है और अपने उपदेश के द्वारा जनताकी रुचि को जिधर चाहें मोड सकते हैं।

अब पाठक महाशय समझ गये होंगे कि सर्व-साधारण पर आपका इतना प्रभाव कैसे पडता है। साधारणतया लोग व्याख्यान की सूक्ष्म तर्क, अकाट्य प्रमाण, गम्भीर गवेषणा ऐतिहासिक और दार्शनिक हेतु के लम्बे चोडे सम्बन्ध की अपेक्षा सच्चे हृदय से निकले हुए उत्साह और सहानुभूति, आशा और आश्वासन पूर्ण स्पष्ट वाक्यों से अधिक प्रभावित होते हैं। ये वाक्य अपनी सरलता और स्पष्टता, सुन्दरता और मनोहरता के कारण भी विशेष स्थाई अर्थ रखते हैं। इस शब्द सागर मे जितना गहरा गोता लगाया जाय उस में उतने ही अमूल्य रत्न दृष्टि गोचर होते हैं। उपदेशक की बाहरी सूरत और शब्दावली नि सन्देह बडे महत्व की वस्तु है किन्तु, सब से अधिक महत्व और मूल्य की वस्तु विषय की आन्तरिक आत्मा है। सूरत केवल सिक्के की ऊपरी तस्वीर है, असल चीज़ तो धातु है। वह सोना हो या चादी, रूपा हो, या तावा।

आप चरित्रनायक जी के उपदेशों पर ध्यान दीजिये। तो मालूम होगा कि वे सदा ऐसी बातों को उठाते हैं जो मनुष्य की सफलता और उत्कृष्टता के लिये परमावश्यक है। वे श्रोताओं को काल्पनिक, पौराणिक दार्शनिक और याज्ञिक विषयों की भूल भुलैयों और ताने बानों मे डाल कर उनकी भ्रान्तियो और शङ्काओं की सख्या नहीं बढाते बल्कि, उनके सामने उन विषयों को उपस्थित करते हैं जो प्रत्येक मनुष्य के मानसिक और व्यवहारिक जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक और हित कर हैं और यही कारण है कि आपके उपदेश और बुराइयों को अनुभव कराने वाले और सत्या सत्य विवेचनी शक्ति को तीक्ष्ण करने वाले होते हैं।

आप श्रोताओं से जैसा कुछ करने को कहते हैं उसे स्वयम् भी करते हैं। व्रत उपवासादि रखते हुए भी आप नियम पूर्वक धड़ाके से व्याख्यान देते हैं। प्रत्येक मास मे आंबिल व्रत रखना आपका नियम है और जिस दिन आंबिल व्रत करते हैं उस दिन भी आप व्याख्यान अथवा शास्त्र चर्चा को स्थगित नहीं रखते।



शास्त्रार्थ शैली।



आज कल शास्त्रार्थ का नाम बदनाम होरहा है। जिस प्रकार के उपदेशक और महोपदेशक, शास्त्री और पण्डित, मौलवी और पादरी हैं उसी प्रकार के शास्त्रार्थ भी होते हैं। यदि आपको दुराग्रह, हठ धर्मी, पक्षपात, साम्प्रदायिक अहङ्कार और अनर्थ का साकार रूप देखना हो तो वर्तमान मतवादियो के शास्त्रार्थ में जाने का कष्ट उठाइये। आप को

ऐसे सकडों मौलवी, पडित और पादरी मिल सकते हैं जिनका पेशा शास्त्रार्थ ही करना है। आजकल शास्त्रार्थ के अर्थ लडाई, झगड़ा अथवा वाग्युद्ध समझा जाता है।

किसी समय में शास्त्रार्थ ही सत्यासत्य के निर्णय करने का एक मात्र साधन था। उस समय न समाचार पत्र थे और न यन्त्रालय अर्थात् छापा खाने। आज यदि आपको किसी विषय का निर्णय करना है तो आपको उस विषय के अनेको ग्रन्थ मिल सकते हैं जिन को पढ कर आप प्रत्येक मत और सिद्धात के सम्बन्ध में अपनी राय कायम कर सकते हैं। प्राचीन काल में विद्वानों और पण्डितों को केवल धार्मिक और दार्शनिक विषयो के अनुसन्धान करने का ही मुख्य कार्य था किन्तु, आज उनके लिये अनेकानेक कार्य और व्यवहार उपस्थित होगये हैं। अस्तु।

जिस प्रकार चरित्रनायक जी की वक्तृत्व शक्ति बहुत बढी चढी है इसी प्रकार शास्त्रार्थ शली भी बडी प्रौढ है। इसके अनेक कारण हैं जब आप घरबार छोडकर अपनी आत्मोन्नति और मनुष्य जाति के दुख निवारणार्थ सत्यान्वेषण में प्रवृत हुए तब पहिले आपने भारत के अनेक धर्म्म और सम्प्रदाय के ग्रन्थों का अध्ययन किया और इस प्रकार उस समय के भिन्न २ विचारो और प्रश्नों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। आपने अब तक स्वधर्म और पर धर्म के जिन २ ग्रन्थों का अवलोकन किया है उनमें से कुछ यह हैं.—

(१) श्वेताम्बर आम्नाय के आगम—

१	आचाराङ्गजी	१७	कप्पियाजी
२	सूत्र कृताङ्गजी	१८	कप्पवण सियाजी
३	स्थानाङ्गजी	१६	पुष्फियाजी
४	समवायाङ्गजी	२०	पुष्फ चूलियाजी
५	भगवती जी	२१	वन्हिदशाजी
६	ज्ञाताजी	२२	दशवैकालिकजी
७	उपाशकदशाङ्गजी	२३	उत्तराध्ययन जी
८	अन्तकृतजी	२४	नन्दीजी
६	अणुत्तरोपपाई जी	२५	अणुयोगद्वारजी
१०	प्रश्न याकरणजी	२६	निशीथजी
११	विपाकजी	२७	व्यवहारजी
१२	उवाइ जी	२८	वेदकल्पजी
१३	रायप्रसेणी जी	२६	दशाश्रुत स्कन्धजी
१४	जीवाभिगम जी	३०	आवश्यकजी
१५	प्रज्ञापन्नाजी		
१६	जम्बू द्वीप पन्नति जी		

(२) कर्मग्रन्थ — (३) दिगम्बर आम्नाय के ग्रन्थ —

(१) स्याद्वाद मञ्जरी	(१) गोमट्टसारजी
(२) कल्पसूत्र	(२) पद्मपुराणजी
(३) महानिशीथ।	(३) अष्ट पकय

(४) वैष्णव धर्म के ग्रन्थ —(५) संस्कृत के अन्य ग्रन्थः—

(१) यजुर्वेद	(१) सारस्वत
(२) श्रीमद्भगवद्गीता	(२) लघुकौमुदी
(३) अर्जुन गीता	(३) अमरकोष
(४) शिवपुराण	(४) तर्क संग्रह
(५) वाराह पुराण	
(६) योग वशिष्ट पुराण	
(७) पतन्जली योग	
(८) महाभारत	

(६) इस्लाम धर्म के ग्रन्थ

(१) कुरान शरीफ
(२) हदीस शरीफ
(३) गुलिस्ता
(४) बोस्ता

एक बात और। आपने गुरुजनों से जो कुछ सुना या ... उस पर मनन पूर्वक पूर्णतया विचार किया अपनी बुद्धि से उसकी खूब समालोचना की। आप की दृष्टि सत्यासत्य का निर्णय करना केवल मानसिक आनन्द अथवा ज्ञान पिपासा ही नहीं है बल्कि यह मनुष्य के सुख दुःख पर असीम प्रभाव डालने वाला अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है। और परम्परागत अन्ध विश्वासों से अपने को छुड़ा कर आपने स्वतंत्रता निष्पक्षता और शान्ति से सब

बातो पर मनन किया है। इससे भी दूसरो के साथ शास्त्रार्थ करने में आपको बडी सहायता मिल सकती है।

आपको मनुष्यों की भूलों और भ्रान्तियों से इतनी सहानुभूति हैं और मानवी निर्बलताओं पर इतनी दया है कि विवादी चाहे जेसा हो,चाहे जैसी ऊट पटाग बातें करे, आप आपे से बाहर होकर उस पर कभी रुष्ट नहीं होते बल्कि उसकी मूर्खता और दुराग्रह को देख कर उस पर और अधिक करुणा करने लगते हैं। अपने सिद्धान्तो की सत्यता में आपको पूर्ण विश्वास है। आप यह भी जानते हैं कि सद्—सिद्धान्त कितनी कठिनता और कितने परिश्रम के पश्चात् प्राप्त होते हैं। अत आप यह आशा कभी नहीं करते कि मनुष्य सुनते ही मेर सिद्धान्तो पर विश्वास करने लगेगा।

आप एक सच्चे उपदेशक की भाति तर्क और प्रमाण तथा शान्ति और सहानुभूति द्वारा विरोधियो के विचार पलटने का उद्योग करते हैं। आप जानते हैं कि दुराग्रह पूर्वक विचार परिवतन करने का उद्योग करना व्यर्थ है। एसा करने से सत्य का निर्णय नहीं होता किंतु विरोधी लोग उलटे जिद्दी हो जाते हैं।

सत्यान्वेषण-शक्ति।

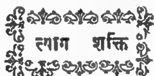
बहुत से दयालु हृदय महापुरुष समाज के दुख से दुखी होकर अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रगट करके ही मन सन्तुष्टि कर लिया करते हैं। अनेक अपने अवकाश के समय में स्थिति

को ठीक २ समझने का कुछ प्रयत्न करते हैं और यदि अपने को कोई कष्ट या विशेष असुविधा न हो तो कुछ परोपकार भी करते हैं। चरित्रनायक जी उन थोडी सी उच्च आत्माओं में से एक हैं जो मनुष्यो के दुःखों की दशा तक अथवा उसकी तह तक पहुचने की कोशिश करते हैं। सारे रहस्य को पूरी तरह समझ कर शान्त, निष्पक्ष और गम्भीर भाव से उसके दुःख निवारण का उपाय निकालते हैं। और तब अपने सारे जीवन पर अनवरत परिश्रम और अथक उद्योग से उन उपायो को कार्य परिणत करते हैं। चिकित्सा करने के पहिले रोग का निदान जानना चाहिये। अनाडी और अशिक्षित वैद्य रोग को और बढा देता है और कभी रोगी का प्राणान्त तक कर देता शरीर एक बडा ही पेचीदा यन्त्र है। उसके अंगों को सुधारने के लिये विशेष ज्ञान और अनुभव की आवश्यकता है। समाज यन्त्र, शरीर यन्त्र की अपेक्षा असख्य गुणा पेचीदा है। सुख—दुःख, सृष्टि—प्रलय, ईश्वर आत्मा, मृत्यु-जन्म, बन्धन और मोक्ष इत्यादि के प्रश्न और भी गूढ और लोगो को हैरान करने वाले हैं। इस से स्पष्ट है कि मनुष्य के दुःख दूर करने वाले को—मनुष्य जाति के सच्चे मार्ग—प्रदर्शक को सत्यान्वेषण की बडी भारी जरूरत है।

सत्यान्वेषण और सत्य प्रचार की भावना ने ही मुनि महाराज को ससार से विरक्त किया। दीक्षा लेकर पहिले आपने वह ज्ञान प्राप्त किया जो आपके धर्माचार्यों ने उस समय तक सञ्चित किया था। जो मनुष्य जाति के सचित ज्ञान की सीमा बढाना चाहता हो उसे पहिले पूर्व सचित ज्ञान पर पूर्ण अधिकार कर लेना चाहिये। जब मुनि महाराज को प्रचलित तत्त्व

ज्ञान से सन्तोष नहीं हुआ तो आप ने स्वयम् गम्भीरता और एकाग्रता से विचार करना आरम्भ किया।

सब से पहिले आपने अपने हृदय में सत्य की महत्वाकांक्षा को जाग्रत किया। जिस के फल—स्वरूप आप के हृदय में सत्य की महिमा का प्रकाश हुआ। सत्योपलब्धि के प्रतिबन्धक कारणों से आपने अपने आपको धीरे २ मुक्त किया। आपको विदित हुआ कि सत्यान्वेषण में प्राचीनता, रूढि जात्याभिमान, अहम्मन्यता हठ—धर्म, लोक—भय, पक्षपातप्रिय अपरिवर्तनशीलता, तथा अन्धविश्वास और अन्धश्रद्धा के बड़े विकट शत्रु हैं। बस फिर क्या था। आपने आत्म-परीक्षा और शुद्ध—तर्क राग-द्वेष विहीनता और स्वतन्त्रता द्वारा इन मानव-निर्बलताओं को परास्त किया और क्रमश उस महान् सत्य को पा लिया जिस की आप को आकांक्षा थी।



चरित्रनायक जी उन महा पुरुषों में से एक हैं जिन्होंने मनुष्य स्वभाव की नीच प्रवृत्तियों का पूर्णत नाश कर दिया है। स्वार्थमय प्रवृत्तियों का पूर्णत दमन किया है और स्वार्थ रहित श्रेष्ठ प्रवृत्तियों का पूरे तौर पर विकास किया है। सभ्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति में जन्म से ही सामाजिक-सहानुभूति का अङ्कुर उत्पन्न हो जाता है। सभ्य मनुष्य समाज के मुख्य आधारों में इस सहानुभूति या प्रेम की भी गणना है। अपने छोटे से बच्चे को प्यार करते समय माता अपने आपको भूल जाती है। आपे की सङ्कुचित सीमा प्रेम—प्रवाह के वेग

सामाजिक और धार्मिक जीवन को उन्नत बनाया है। परमात्मा करे आप सहस्रायु होकर हमारी जाति और समाज का इसी प्रकार मुखोउज्ज्वल करते रहें।

ग्रन्थ–रचना

आपने अपनी [अद्भुत वक्तृत्व शक्ति से तो लोक सेवा की ही है किन्तु, लेखनी द्वारा भी बहुत कुछ किया है। अभी तक आपने छोटी मोटी अनेक रचनाएं की हैं जिन में से अधिकांश पद्य-बद्ध हैं। अब तक आपकी रचनाएं कुल मिलाकर लगभग ६०००० के छप चुकी हैं। उन में से खास २ की नामावलि नीचे दी जाती है। आपकी कविता बडी रोचक, सरल और मधुर तथा सर्व-साधारण के समझने योग्य होती है। उस में किसी सम्प्रदाय विशेष का खण्डन नहीं होता। हिन्दू मुसलमान सब लोग उसे बडे चाव से पढते हैं। आपकी बहुत सी रचना अभी अप्रकाशित हैं। होसकता है कि काव्य की दृष्टि से आपकी हिन्दी कविता सदोष हो। किन्तु उसमें से अधिकांश छन्दोबद्ध न होकर गजल आदि के ढग की होती हैं। उस में भाषा भी प्रचलित होती है जिस में अधिकतर तुकबन्दी का ही निवार रखा जाता है। सो उसे आप ठीक कर ही लेते हैं। कविता में आप बड़ी खूबी से धार्मिक भावों और समाज सुधार की बातों का समावेश कर देते हैं। साथ ही वह भक्ति और वैराग्य से भी सराबोर होती है। उनको पढने और सुनने से भक्ति ज्ञान और वैराग्य विषयक आपके अगाध पाण्डित्य और अनुभव का स्पष्ट परिचय मिलता है। अपनी रचनाओं में स्थान २ पर आपने मनुष्य जीवन के उद्देश और कर्तव्य पर भी अच्छा प्रकाश डाला है।

एक बुद पानीकी तसवीर



सिद्ध पदार्थविज्ञान नामकी किताब जो अल्हाबाद गवरमेंट प्रेसमें छपी है, जीसमें केप्टन स्कोर्सबि साहेबने खुर्दबीनसे ३६४५० त्रसजीव (हिल्ते फिरते) देखे

परिचय-प्रकरण ३३

नाम पुस्तक	कितने संस्करण हो चुके	कुल कितनी प्रतियां निकल चुकीं
जैन गजल बहार	३	३०००
जैन सुख चैन बहार भाग १	४	५०००
" " " २	५	६०००
" " " ३	२	३०००
" " " ४	१	३०००
" " " ५	१	२०००
सीता वनवास	२	३०००
स्त्री शिक्षा भजन सग्रह	३	५०००
संशय सोधन	१	१०००
लावणी सग्रह भाग १	१	२०००
ज्ञान गीत सग्रह	२	२०००
राम मुद्रिका	१	२०००
सीता वनवास अर्थ सहित	१	१०००
जैन गजल गुल चमन बहार	४	१४०००

इन में से जैन सुख चैन बहार का तीसरा भाग उज्जैन निवासी राज मान्य ज्ञान साहिब सेठ लुकमान भाई नजरअली जी अपनी तरफ से प्रकाशित कर जनता के अमूल्य भेंट कर चुके हैं। आप इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं पर चरित्रनायकजी के उपदेश व कविता पर आपका बड़ा प्रेम है। चरित्रनायक जी का उपदेश सुनकर आप अपने को सौभाग्यशाली समझते हैं। सीतावनवास दिग्दर्शिका (सीतावनवास मूल पर मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज ने प्रिय सुबोधिनी टीका लिखी है।) जिसको सनातन धर्मानुयायी इन्दोरनिवासी कुंअरजी रणछोड दास नीमाने अपनी तरफसे प्रकाशितकर जनताके लिये अमूल्य

भेंट की है। आपने चरित्रनायक जी के बहुत उपदेश सुने आप की चरित्रनायकजी पर श्रद्धा है। इन्दौर चतुर्मास की विनती में आपने भी विशेष भाग लिया था तथा वहा जो बकरे मरतेथे उन्हें चरित्रनायकजी के उपदेशसे अधिक व्यय कर बचा लिये।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अभी तक अनेक काव्य ग्रन्थ लिखे हैं जो नीचे दिये जाते हैं.—

(१) चम्पकसेन काव्य	(६) वसन्त महाराज
(२) श्रीपाल काव्य	(७) श्रीकृष्ण काव्य
(३) सीता वनवास काव्य	(८) नेमिनाथ काव्य
(४) धन्ना काव्य	(६) विक्रम काव्य
(५) अनन्तमति काव्य	(१०) भगृ काव्य

इनमें से सीता वनवास काव्य मूल तथा अर्थ सहित और श्रीपाल काव्य धनकाव्य चम्पकसेन काव्य व हरिबल काव्य प्रकाशित हो चुके हैं शेष अप्रकाशित हैं।

दिन चर्या

सूर्योदय पर आप प्रति लेखणादि करके शौच कर्म से निवृत्त होते हैं। फिर २—२॥ घन्टे के करीब व्याख्यान देकर भोजनादि कर मध्यान्हमें शास्त्रावलोकन और काव्यादि रचना करते हैं। थोडी देरके पश्चात् इसे पूराकर आगन्तुक सज्जनोंसे धार्मिक वार्तालाप और अन्य आवश्यक चर्चा शङ्का समाधानादि करते हैं फिर चतुर्थ प्रहरमें प्रति लेखणादि कर शौचादि से निवृत्त हो सूर्यास्त से पहिले २ भोजन कर प्रति क्रमणादि कर पहर भर रात्रि से पहिले २ श्रावकोंको तात्त्विक ज्ञान ध्यान सिखाना तथा और किसी धार्मिक विषयसे परिचित कराना

आदि के पश्चात् दोपहर रात्रि हो जानपर शयन कर जाते हैं। चौथे पहरमें निद्रा त्याग कर स्वाध्यायादि कर परमात्म चिंतन तथा प्रति क्रमणादि करने को बैठ जाते हैं।

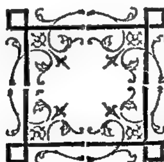
उपसंहार

धर्म, नदी के स्रोत की भांति प्रारम्भमे स्वच्छ और पवित्र होता हुआ भी कालान्तर मे अनेक अन्य गुणवाले सहकारी स्रोतों के संगम से या यों कहिए कि अनेक प्रकार के स्वभाव और गुणवाली जातियों को स्वीकार करने के कारण गदला और मैला हो जाता है उसकी आदि निर्मलता नष्ट हो जाती है अत उस समय उसकी कुछ महान आत्माएं उस धर्म को सुधारने का उद्योग करती हैं।

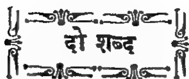
एक बात और। आदर्श होनेके लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसका कुटुम्ब किसी धनाढ्य कुल हो। प्राय जितनेसाधू महात्मा, योगी-सन्यासी, समाज सुधारक और देशोद्धारक हुए हैं उन्होंने साधारण घरानेमें ही जन्म लिया था। जिस प्रकार वे अपने पुरुषार्थ से धीरे २ आगे बढ़े थे, उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य कर्तव्य पालन द्वारा अपने जीवन को उच्च और पवित्र बना सकता है और समय पाकर वही महात्मा और परमात्मा बन सकता है।

देखा गया है कि जोलोग धनी होते हैं बहुधा उनके बच्चे आलसी और अकर्मण्य हुआ करते हैं। जिन लोगों को अपने निर्वाह के लिये अन्न जल ढूंढना पड़ता है वे प्राय इतने पर से ही सीख लेते हैं कि किस प्रकार वे अपने जीवनके उच्च आदर्श

को प्राप्त कर सकते हैं। पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की ओर ध्यान दीजिए तो पता चलेगा, कि उनका किस कष्ट के साथ बाल्यकाल में जीवन निर्वाह होता रहा परन्तु, उसी कष्ट ने उन्हें अपने भावी जीवनके योग्य बना दिया। विद्यासागर ने जितनी समाज सेवा तथा देशसेवा की है वह बड़ी महत्वपूर्ण थी। महात्मा गोखले, वयोवृद्ध दादाभाई नौरोजी आदि जो २ देश के पूजनीय नेता हुए हैं वे प्राय सब ही निर्धनी थे। तब आश्चर्य्य की बात ही क्या यदि हमारे चरित्रनायकजी ने एक साधारण स्थिति में जीवन ग्रहण कर अपने जीवन को एक उच्च आदर्श तक पहुचाने में कृतकार्य्यता दिखाई। वास्तव में बात यह है कि निर्धनता द्वारा ही मनुष्य जीवन के असली लक्ष्य को शीघ्रता और सुविधा सहित पासकता है।



प्रकरण ३६ वां



शैल २ माणिक नहीं, मोती गज २ नाहिं ।
वन २ में चन्दन नहीं, साधु न सब थल माहिं ॥

मेरे मित्र हों या शत्रु, वे सब सुखी हों गुणी बनें, दिन प्रतिदिन उनका अभ्युदय और उन्नति हो, सद्बुद्धि की प्रेरणा से वे सन्मार्ग में प्रवृत्त हों । उनके दुख दूर हों सर्वत्र सुख और गुणों का प्रचार देखने में आवे । किं बहुना । जगत में सुख और शान्ति का पूर्ण साम्राज्य स्थापित हो ।

जिन्होंने अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य्य और अपरिग्रह इन पाच महाव्रतो को धारण कर रखा है । जो रात दिन प्रभु अथवा आत्मा का ध्यान करते हुए मन को एकाग्र बना कर समाधि में लीन रहते हैं, ससार के प्रपची व्यवहारो को जिन्हों ने तिलाञ्जलि देरखी है, स्वयम् ससार को तैर जाते हैं और दूसरों को तिराते हैं । स्वयम शान्ति सुधा का पान करते और दूसरों का कराते हैं ऐसे सन्त पुरुष और मुनियों को धन्य है।

जिन की धर्म पर अटल श्रद्धा है । जिन्हों ने श्रावकों के बारह व्रत अगीकार किये हैं । कुटुम्ब पालन के लिये व्यवसाय करते हुए भी जो अन्याय और अनीति द्वारा एक पैसा प्राप्त करने के इच्छुक नहीं है ऐसे श्रावकों को धन्य है।

जो न्याय से उत्पन्न की हुई सम्पत्ति को गड्ढे में न गाड कर भण्डार में न रख कर उसका सदुपयोग करते हैं सन्मार्ग में व्यय करते हैं। लोगों को दिखाने के लिये नहीं बल्कि कोई न जान सके इस प्रकार गुप्त रीति से दानादि कर पुण्य का सञ्चय करते हैं। दीन दुखी और अपंग मनुष्यों को यथेष्ट सहायता देकर उनका दुःख मोचन करते हैं ऐसे उदार मनो दातार भी इस संसार में धन्यवाद के पात्र हैं।

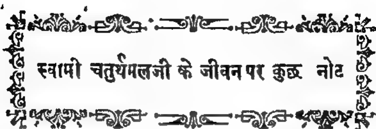
जो सब के साथ भ्रातृभाव रखते हैं सत्पुरुषों के नीति मार्ग का कभी उल्लंघन नहीं करते अपने कुल के रीति रिवाज और धर्म्म का यथा विधि पालन करते हैं, पग २ पर अधर्म और अनीति का भय रखते हैं। ऐसे सन्मार्ग गामी पुरुषों को जो धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित मार्गानुसारी के ३१ गुणों से युक्त हैं उन्हें धन्य है।

मनुष्य जन्म बार २ नहीं प्राप्त होता। बड़े पुण्य के उदय से ही यह चिन्तामणि प्राप्त हुआ है। इसका ठीक २ उपयोग करना बुद्धिमानों का कर्तव्य है। जैसे अनादि काल से सूर्य का उदय और अस्त हुआ करता है। वैसे ही यह जीव आत्मा भी इस संसार-चक्र में अनादि काल से जन्म और मृत्यु को प्राप्त हुआ करता है। किन्तु एक बार मृत्यु ऐसी होनी चाहिये जिस से फिर कभी मृत्यु होने का समय न आवे, और यह बात तो निर्विवाद है कि जीव अकेला आया है और अकेला ही जाने वाला है। माता, पिता, पुत्र स्त्री तथा सारा कुटुम्ब पक्षी के मेले की भांति इकट्ठे हुए हैं। जब अपना २ समय पूरा होगा तब एक के पीछे एक चले जायगे। इन में किस पर मोह करना और किस पर नहीं। आयुष्य जल के

प्रवाह की भांति बड़ी शीघ्रता से चली जा रही है। मनुष्य जानता है कि मैं बड़ा होता हूँ, परन्तु यह नहीं जानता है कि आयुष्य कम होरही है। ' शरीरम् व्याधि मन्दिरम् " शरीर रोगों का घर है, ऐसी प्रत्यक्ष दिखाती हुई काया की माया में मोह रखता मनुष्य अज्ञान दशा से ऐसा समझता है मानता है कि यह मेरा घर, यह मेरी स्त्री, यह मेरा पुत्र और यह मेरी माता, यदि यह तात्विक दृष्टि से विचार करे तो उस को विदित होजाय कि यह घर नहीं है, बल्कि कैदखाना है। आत्मा का सच्चा घर, सच्ची स्त्री, सच्चा पुत्र और सच्चे माता पिता तो और ही हैं। इन सांसारिक-मनुष्यों के साथ जो सम्बन्ध है वह केवल दुख का देने वाला है। जैसा कि कहा है —"स्नेह मूलानि दुःखानि", अत जैसे बने वैसे इस संसार को 'असार' और कुटुम्ब को संसार की जड़ समझ कर संसार से मुक्त होकर पंच महा व्रतों का पालन करना चाहिये और यथा शक्ति दान ध्यान, तपस्यादि धर्म क्रियाओं में समय व्यतीत करना चाहिये। इस शरीर का कुछ भरोसा नहीं कि कब तक चलेगा ? अतः शुभ कार्यों के करने में जितनी शीघ्रता की जाय अच्छा है।



प्रकरण ३७ वां ।



(ले० श्रीयुत् अध्यापक श्रीनाथ मोदी सादडी मारवाड)

आपके व्याख्यान की भाषा बडी सरस, रसीली और हृदयग्राही होती है। जिसके भाव बडे सरल और जोशीले होते हैं। स्वामी जी की अनुपम विचार शक्ति, प्रखर बुद्धि और चमत्कारी प्रतिभा से सब श्रोताओं का मन चकित और स्तम्भित हो जाता है। इसका अनुभव वही कर सके हैं जिन्हें स्वामी जी के उपदेशामृत पान करने का अवसर मिला है। आपकी वाक् पटुता का प्रभाव लोगों पर क्यों न हो जब आप एक आदर्श जननी के सुपुत्र हैं। माता पर ही सन्तान के भले बुरे आचरण निर्भर हुआ करते हैं। आपकी माता ने आपके बडे भाई की मृत्यु पर अतुलनीय धैर्य्य का परिचय दिया था। अबला का ऐसा धैर्य्य अत्यन्त आश्चर्य-दायक होता है। क्योंकि भारतवर्ष में अत्यन्त स्नेह की मात्रा चढ़ी हुई है।

चौथमल जी को साधु होने की बडी लालसा थी। हत-भाग्य भारतवर्ष में जिस युवावस्था के समय हमारे देश के नव युवको को भोग विलास के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता

[ह]मारे चरित्रनायक जी को तरुणावस्था में भी सासारिक-
[सुख] का कुछ विचार न हुआ । आपने शीघ्र ही सासारिक
[सुख] से मोह हटा लिया। और आपकी साधु बन जाने की
[इच्छा] दृढ होगई फिर क्या था आपने सब सुख चैन को लात
[मा]र कर साधु बनने की प्रतिज्ञा की।

[श्]वसुर आदि किसी आत्मीय के विरोध से आप विच-
[लि]त न हुए। अन्त में दृढ निश्चय ने ही विजय पाई पहिली
[बा]र से ही आपकी ख्याति हो चली। सब पर सिक्का जम
[गया]। अलौकिक वक्तृत्व शक्ति, उत्तम विचार शैली और
[मधु]र वार्तालाप के द्वारा आपने सब के मन को अपनी
[ओर आ]कर्षित कर लिया। आपके व्याख्यान में प्रत्येक
[स्थान] पर लोगों की बेहद भीड होती है और बडा प्रभाव
[पडता] है। इस समय प्रान्त भर में जिधर देखिये उधर ही
[आप]की वक्तृता की धूम मची हुई है। आप एक सुयोग्य
[और] महान् वक्ता हैं। जहा जाते हैं वहीं दूर २ की
[जनता] और अनेक सभा सस्था स्वामी जी को व्याख्यान देने
[के लि]ये बुलाती हैं। सच है, राजा का मान केवल अपने ही
[देश] में होता हे पर विद्वान् का सर्वत्र। आपको स्थान २ पर
[अभिन]न्दन पत्रों से सम्मानित किया जाता है। किन्तु, ये
[कोई] अलोकिक गुण नहीं जो अन्य व्यक्तियो में न हो।
[प्रभु] कृपा से भारतवर्ष में स्वामी जी के समान और भी
[अनेक] पुरुष विद्यमान् हैं। वक्ता और कवियो का अभाव
[नहीं]। पर विशेष प्रभाव होने का कारण केवल आपका
[प्रेम है]। आपके हृदय में सभी के प्रति प्रेम भरा हुआ है
[सब भा]व से आप हार्दिक सहानुभूति रखते हैं। गुरु भक्ति'

का स्रोत आपके हृदय में कितना वह रहा है इसका पता उन तमाम कार्यो की पिछली दो पंक्तियो मे ज्ञात होता है जोकि स्वामी जी ने रचे हैं। दया और प्रेम के अतिरिक्त स्वामी जी में और भी भारी गुण हैं अर्थात् त्याग और वैराग्य की आप सजीव एवम् ज्वलन्त मूर्ति हैं।

कान्फ्रेन्स प्रकाश अंक ६ सन १९१७ के पृष्ट ८ पर श्रीमान् जवैरचंद जादव जी सम्पादक प्रकाश अपने हर्ष और धर्म लाभ शिर्षक लेख में निम्न प्रशसात्मक शब्द चरित्रनायक जी के विषय मे लिखते हैं।

हर्ष और धर्मलाभ

मने अजमेर श्री० मुनि महाराज श्री चौथमल जी के दर्शन किये, आपके दर्शन से मुझे बड़ा भारी लाभ हुआ आप की शांत मुद्रा के दर्शन से मुझे जो लाभ हुआ मेरे हृदय मे जो शुद्ध भावो का प्रचार हुआ उसका वही सज्जन अनुमान कर सकते हैं जो कि गुण ग्राहकता रखते हुए, कल्याण चाहते हुए ससार ध्यान नाशक ज्ञान प्रकाशक हितोपदेशक राग रहित महानुभाव के धारक श्री मुनि महाराज के दर्शन करते हैं तथा उनसे उपदेशामृत पान करते हैं श्री महाराज ने मुझे जो उपदेशामृत पिलाया है तथा उसमें मुझे जो लाभ हुआ है उसे में कभी नहीं भूलूंगा तथा उन्होंने जो मुझे मेरे कर्म विषय पर जो धार्मिकोचित शिक्षा दी इसलिए उनका विशेष आभारी हू और आशा रखता हूं कि श्री महाराज के उपदेशामृत यथासमय पान करता रहूंगा और सच्चे हृदय से चाहता हू कि श्री महाराज के दर्शन और उपदेश श्रवण का सौभाग्य श्री महाराज की कृपा से वारम्वार मिलता रहे

—सम्पादक

महाराज श्री की सेवा में एक युरोपियन एफ० जी० टेलर साहिब जो एक प्रसिद्ध विद्वान् धर्मप्रेमी सज्जन हैं जो कई वर्षों तक चित्तोड में अफीम के महकमे पर आफिसर रह चुके हैं उनकी तरफ से कई पत्र आये थे उनमें से सिर्फ एक हिंदी पत्र व अंग्रेजी पत्र अक्षरश नमूनार्थ नीचे उद्धृत किया जाता है।

महाराज को यह मेरी तरफ से कह देना के अभी तक मुजको कुछ नजर नहीं पडा है। सारा सन्सार अन्धकार ही है महाराज को कुछ चीन रोशनी दीख रही है—

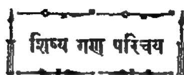
उसके इशारे से उनका दिल को खबर पड गया मुझको अन्देरे से झटोलना जाय कुछ फँदा नहीं—आगे करम का होयहार मुझको अभी तक बहोत रनज होता हे के महाराज के दर्शन चीटोर छोडने के वक्त नहीं हुआ × शायद मेरा नसीब फीर खुले तो म इनके कदम मुबारीक को छुवे आपका दरम दोसत + आपको और सब जेन भाइयों को मेरा सलाम और महाराज को मेरे दसतबन्दे सलाम। एफ जी टेलर

7th Aug Durgah House, AJMER,

Dear Shiri Maharaj Chothmullji Swami It is a long time scince we had any news of your & yours desciples We heard from Bhilwara your moonsoon is being I spent at Beawar this year & write to Convey our remembrance the distance is not for and we hope to renew our old friendship-if an opportunity occurs We hope the desciples you took with your fold at Bhilwara are doing good work I am here on pension no work has turned up for me-such are the "fates" !!

Meer Sahib Joins me in respectful salaams to you and all the Swamijis Yours sincerly, F G TAYLOR

प्रकरण ३८ वां



पृथ्वीराज जी महाराज—की दीक्षा सम्वत् १६५८ के आषाढ़ में कुकडेश्वर हुई। निवास स्थान कुकडेश्वर। ८ वर्ष ५ मास की आयु में दीक्षा हुई। आप जैन सिद्धान्त के ज्ञाता हैं और व्याख्यान शैली आपकी बड़ी मनोहर है। आपको कविता करने का भी शौक और अभ्यास है। सस्कृत में-सारस्वत और लघु कौमुदी के ज्ञाता हैं। आप चरित्र-नायक जी के जेष्ठ शिष्य हैं। आपने हिन्दी भाषा में भी कुछ रचना की है। एक "मनोहर पुष्पमाला" नामक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है, और "अष्टादश नाते का दिग्दर्शन" अप्रकाशित है।

हुक्मीचन्द जी महाराज—की दीक्षा सम्वत् १६५६ के अघहन सुदि १ को नीमच में हुई। आपका निवास स्थान नीमचही है। १५ वर्ष की आयु में आपकी दीक्षा हुई। आप

को जैन सूत्रों के रहस्य तथा द्रव्यानुयोग का अच्छा बोध है। आप ओस घश के हैं। व्याख्यान भी आपका अच्छा होता है।

शङ्करलाल जी महाराज—जाति के राजपूत हैं। आप को १५ वर्ष की आयु में डूगरे में सम्वत्१९६१ की वैशाख सुदि ८ को दीक्षा हुई थी। आप का निवास स्थान हरियाचद मु गाणा है। जैन सिद्धान्त के अतिरिक्त आप को कुछ जैनेतर सिद्धान्त का भी परिचय है। व्याख्यान शैली आप की मनोहर है। संस्कृत में सारस्वत चन्द्रिका, लघुकौमुदी, सिद्धान्त कौमुदी, वाग्भट्टालङ्कार, नेमिनिर्वाण तथा अन्य काव्यादि का भी आपको बोध है आपके लेख काव्यादि संस्कृत और हिन्दी के साम्प्रदायिक पत्रों में निकला करते हैं। अपनी विद्वत्ता के कारण आप "पण्डित" की उपाधि से अलकृत हो चुके हैं। हिन्दी में आपने कई ग्रन्थों की रचना की है एक पद्यात्मक "मुख वस्त्रिका निर्णय" प्रकाशित हो चुकी है और दूसरी गद्यात्मक "मुख वस्त्रिका निर्णय" जो

शित है। यह लगभग ५०० पृष्ठ का स्थूल ग्रन्थ है।

कजोडीमलजी महाराज—जाति के ओसवाल बहुतरे, आप को २८ वर्ष की अवस्था में मन्दसौर नगर में सम्वत् १९६४ के मार्गशीर्ष में दीक्षा हुई। आप का निवास स्थान मणासा (इन्दोर स्टेट) है। जैन सिद्धान्त तथा द्रव्यानुयोग के ज्ञाता थे।

किशनलालजी महाराज—जाति के ब्राह्मण थे। आप का निवास स्थान उदयपुर था। सम्वत् १९६९ की भाद्रपद शुक्ला ५ को २५ वर्ष की अवस्था में आप की बडी सादडी में दीक्षा हुई थी। आप विद्या जिज्ञासु थे।

छगनलालजी महाराज—जाति के वीसे पोरवाड हैं। आप का निवास स्थान मन्दसौर है। १४ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९६७ के अघहन सुदि १० को आप को करजू में दीक्षा हुई। आप को जैन-सिद्धान्त का अच्छा परिचय है। इस के अतिरिक्त आप जैनेतर सिद्धान्त के भी ज्ञाता हैं। संस्कृत

में लघु कौमुदी, सिद्धान्तकौमुदी, तर्क न्यायदीपिका, वाग्भटालङ्कार, नेमिनिर्वाण तथा मेघदूत काव्यादि के ज्ञाता हैं, व्याख्यान मनोहर देते हैं। आप की उच्चारण शैली बडी शुद्ध व स्पष्ट है। संस्कृत हिन्दी के साम्प्रदायिक पत्रों में आप के लेखादि भी छपते रहते हैं।

चांदमलजी महाराज—जाति के ओसवाल। आप का निवास स्थान भिलवाड़ा है। वहा पर १४ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९६७ के ज्येष्ट में आप को दीक्षा हुई। आप विद्या जिज्ञासु और जैन सिद्धान्त का भी आप को कुछ परिचय था।

चम्पालालजी महाराज—जाति के ओसवाल हैं। आप का निवास स्थान ताल है। १८ वर्षकी अवस्था म सम्वत् १९६९ की मार्गशीर्ष वदि ४ को रतलाम में आप को दीक्षा हुइ। आप को जैनसिद्धान्त से कुछ परिचय हे, और कविता करने का भी शौक है। समय २ पर धार्मिक पत्रों में आप की कविता प्रकाशित होती रहती है

आप विद्या जिज्ञासु और व्याख्याता हैं। श्री पृथ्वीराज जी महाराज (चरित्रनायक जी के शिष्य) ने जो "अष्टादश नाता दिग्दर्शन" नामक ग्रन्थ की रचना की है उसमें आप ने भी कुछ सहायता दी है।

[illegible] जी महाराज—जाति के ब्रहुतरे ओसवाल हैं आप का निवास स्थान रतलाम है। १७ वर्ष की अवस्था में, फाल्गुण शुक्ला ५ सवत् १९६९ म आपको चित्तौड गढ़ म दीक्षा हुई। आप को जैन-सिद्धान्त, द्रव्यानुयोग और साथ ही अजैन सिद्धांतों का भी परिचय है। संस्कृत में आपने लघुकौमुदी सिद्धान्त कौमुदी तथा कोष ग्रन्थो म अमरकोष तथा हेमिनाम माला का, तर्कशास्त्र में तर्कसंग्रह और न्याय दीपिका का, तथा काव्य ग्रन्थों में नेमि निर्वाण और मेघदूत का, पिंगल ग्रन्थों में श्रुत बोध आदि का, अलङ्कार में वाग्भटालङ्कार आदि का अध्ययन किया है। संस्कृत और हिन्दी भाषा में आप के श्लोक और लेखादि भी प्रकाशित होते रहते हैं। प्राकृत

भापा का भी आप को व्याकरण सहित अच्छा ज्ञान है। ग्रन्थरचना का भी शौक है। हिन्दी साहित्य म भी आपकी गति है। आपने जो पुस्तकें रचीं उनके नाम ये हैं –

गुरु गुण महिमा (हिन्दी) इस पुस्तिका के अब तक ८ सस्करण हुए हैं । १० हजार प्रतिया निकल चुकी हैं।

महावीर स्तोत्र (हिन्दी) इस स्तोत्र का आपने प्राकृत से सस्कृत में अनुवाद और शब्दार्थ, भावार्थ तथा अन्वय अर्थ किया है। इसकी २००० प्रतिया निकल चुकी हैं।

सीता वनवास और राममुद्रिका (हिन्दी) इन दोनों पुस्तकों की आप ने बडी प्रिय सुबोधनी व्याख्या की है। और भी नीचे लिखे ग्रन्थों का आपने प्राकृत में सशोधन किया है, इन सब की १-१ हजार प्रतिया निकली हैं —

(१) दशवैकालिक सूत्र
(२) सुख विपाक
(३) नमीराय जी
(४) पुच्छो सुणा

चरितनायक महोदय की स्तवन रचना का अधिकाश संशोधन कार्य आपने ही किया है। आपको जब से दीक्षा हुई है, गुरु महाराज प्राय अपने साथ ही रखते हैं और समय २ पर प्रत्येक कार्य्य के लिये अनुमति लिया करते हैं। आपकी व्याख्यान शैली भी अच्छी है। जिस विषय को लेंगे उसको बड़ा खूबी से समाप्त करेंगे। आपकी गुरु भक्ति, मिलनसारी, सज्जनता और मृदुभाषिता सराहनीयहै ।

भैरुलाल जी महाराज—जाति के ओसवाल सूरिया हैं। आपको २५ वर्ष की अवस्था में रतलाम नगर में सम्वत् १९७१ के ज्येष्ठ में दीक्षा हुई। आपका निवास स्थान कोसोथल (मेवाड) है । आपको जैन सिद्धान्तो का कुछ परिचय है, और आप विद्या जिज्ञासु हैं ।

वृद्धिचन्द जी महाराज—जाति के ओसवाल हैं। आपका निवास स्थान बडी सादडी (मेवाड) है। आपको २३ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९७७ को अघहन वदि ८ के दिन जोधपुर में दीक्षा हुई । आपको द्रव्यानुयोग का परिचय है। और गान विद्या के भी ज्ञाता हैं। विद्या जिज्ञासु हैं।

नाथूलाल जी महाराज—जाति के बीसे ओसवाल हैं। आपका निवास स्थान जोधपुर है।

आपको १६ वर्ष की आयु में पेटलावद में मगसर सुदि १५ सम्वत्

१६७८ को दीक्षा हुई आप विद्या-जिज्ञासु हैं।

रामलाल जी महाराज—जाति के बीसे ओसवाल-आपका निवास स्थान जोधपुर महा मन्दिर का है। आपको १४ वर्ष की आयु में सम्वत् १६७६ की चैत्र सुदि १ को दीक्षा हुई। आप विद्या जिज्ञासु और गान विद्या की कला से परिचित हैं।

सन्तोषचन्दजी महाराज—जाति के बीसे ओसवाल। आपका निवास स्थान रतलाम है। ३३ वर्ष की अवस्था में आपको सम्वत् १६७६ को कार्तिक बदि ७ को उज्जैनमें दीक्षा हुई। आप विद्याजिज्ञासुऔर व्यावची (फरमायरदार)

नन्दलाल जी महाराज—जाति के बटेवरा हैं। निवास स्थान इन्दौर। २४ वर्ष की आयुमें वहींपर स०१६८०की कार्तिकशुक्ला ७ को दीक्षा हुई। विद्याजिज्ञासु

रतनलाल जी महाराज—जाति के बीसे पोरवाड निवास स्थान मन्दसौर। सम्वत् १६८१ की चैत्र शुक्ला १३ को भीलवाड़े में आप को दीक्षा हुई। उस समय आपकी अवस्था ४५ वर्ष की थी। विद्या जिज्ञासु।

केवलचन्द जी महाराज—आप का निवास स्थान कोसिथल (मेवाड़) का है ११ वर्ष की आयु में सवत् १९८२ फागुन शुक्ला ३ को ब्यावर में दीक्षा हुई।

बक्तावरमल जी महाराज—आपका निवास स्थान कोसिथल (मेवाड़) का है। ९॥ वर्ष की आयु में सम्वत् १९८२ फागुन शुक्ला ३ को ब्यावर में दीक्षा हुई।

(नोट) उपर्युक्त शिष्य गणों में—छगनलाल जी मगनलाल जी दोनो भ्राता हैं तथा प्यारचन्द जी व चादमल जी भी सगे भ्राता हैं। और नाथूलाल जी रामलाल जी भी सगेभ्राता हैं। और केवलचन्द जी महाराज बक्तावरमल जी महाराज सगे भ्राता हैं।

पौत्र शिष्य।

चादमल जी महाराज—जाति के ओसवाल बहुतरे आपका निवास स्थान रतलाम हैं। १८ वर्ष की आयु में वहीं पर आपको कार्तिक शुक्ल ७ सम्वत् १९७८ को दीक्षा हुई। विद्या जिज्ञासु तथा व्यावच्ची (फरमाबरदार)

मगनमल जी महाराज—जाति के पोरवाड़ हैं। आपका निवास स्थान इन्दौर है। १४ वर्ष की आयु में सम्वत् १९७९ की कार्तिक वदि ७ के दिन आपको उज्जैन में दीक्षा हुई।

राजमल जी महाराज—जाति के चौपड़े ओसवाल हैं। आपका निवास स्थान जूनिया—(अजमेर) है। सम्वत् १९८१ में चैत्र शुक्ला १३ को भीलवाड़े में ३२ वर्ष की अवस्था में दीक्षा हुई। आप बड़े विद्या जिज्ञासु हैं।

परिशिष्ट ।

प्रकरण १ ला

प्रशस्ति के श्लोक और कवितादि

॥ शिखरिणीवृत्त ॥

शुभे वर्षे सिन्धु-त्रि-निधि कु-मिते विक्रमरवे-
स्त्रयोदश्यामूर्जेऽधृत सितदले जन्म किल य.।
चतुर्थाभिख्योऽय मुनिरिह चतुर्थे सतियुगे,
चतुर्थस्य द्वार विघटयतु वर्गस्य भविनाम् ॥१॥

जिन्हो ने विक्रमार्क के १९३४ वे वर्ष में कार्तिक शुक्ला १३ को जन्म लिया, वे चतुर्थ नामक मुनि इस शुभ चतुर्थ (कलि) युग में ससारियो के लिये चौथे वर्ग (मोक्ष) के लिये द्वार खोले ॥ १ ॥

गिर हिन्दीं वाल्ये वर्यास यवनानीमपिलिपिम्
पठित्वे ग्लिश्चु चु समजनि च पारस्यकचणः ।
अनेकाभिर्भाषाभिरिति हि तदा य परिचितोऽ-
प्यारांजीदेकोक्तिः प्रणमत चतुर्थ मुनिममुम् ॥२

जिन्होंने बचपन में हिन्दी, उर्दू पढकर इंगलिश और फारसी में जानकारी प्राप्त की। इस प्रकार इस समय अनेक भाषाओं से परिचित होकर भी एक ही जबान के कहने वाले शोभित हैं ऐसे इन चतुर्थ मुनि को प्रणाम करें ॥ २ ॥

कृतोत्कर्षे वर्षे निजजननतः षोडश इतेऽ-
वहद्धन्यां कन्यां सलिलनिधिकन्यामिव पराम्
उपेतायामष्टादशशरदि तुर्ये युग इह,
जयस्तुर्योमल्लः स्मरमपि यथार्थाख्यमकरोत् ॥३

अपने जन्म से उत्कर्ष जनक १६ वें वर्ष के पाने पर इन्होंने दूसरी लक्ष्मी के समान एक धन्य कन्या को ब्याहा १८ वें वर्ष के पाने पर तो इस चौथे युग में कामदेव को जीतते हुए इन्होंने स्मर को यथार्थ नाम बनादिया अर्थात् (स्मरतीति स्मरः) याद रखने वाला बनादिया ॥ ३ ॥

यथा मेनावत्या व्रत-नियमवत्याऽधिगमितो
मति गोपीचन्द्रो मृदुवयसि चन्द्रोपमयशाः ।
तथा बोधं मात्राऽध्यगमि पलमात्राद्रहसि य-
श्रतुर्थोऽयमल्लो जयति मुनिमल्लोऽत्र भुवने ॥४

जिस प्रकार व्रत नियम वाली मेनावति से चन्द्र के समान यशवाला गोपीचन्द्र बोध को प्राप्त किया गया उसी प्रकार

एकान्त में जो (मुनिराज) पल भर में माता से बोध को प्राप्त किये गये। ये चतुर्थ मुनि इस लोक मे बढे चढे हैं ॥ ४ ॥

अथाब्दे दृग्-बाण-ग्रह-कुघटिते विक्रमरवे,
स्वयं स्त्रीदृग् बाण-ग्रह-कुघटितस्तुर्यमुनिराट्।
तपस्ये सशुद्धे सुविशद-तपस्योन्मुखमति-
स्तृतीयायां दीक्षामधरत तृतीयाश्रमिकवत्॥५

तदनन्तर विक्रमार्क के १९५२ वे वर्ष मे स्त्रियो के कटाक्ष रूप बाण के विधन से बच कर इन चतुर्थ मुनिने उज्ज्वल तपस्या करने की इच्छा से वानप्रस्थ के समान फाल्गुन शुक्ला ३ को दीक्षा लेली ॥ ५ ॥

गुरून्हीरालालान् यम-नियमपालान् परिचर-
न्नरन्ध्यान ज्ञान समलभत मानं च मुनिषु।
यथा मेघो घोर स्थलमुभति नीर च सदृशम्
तथाऽसौ व्याख्यानं घटयति समान सतिजडे॥६

यम और नियमों का पालन करने वाले अपने गुरु मुनिश्री हीरालालजी महाराज की सेवा करते हुए इन्हों ने ज्ञान ध्यान प्राप्त किया और इसी से मुनियों मे मान प्राप्त किया। जिस प्रकार मेघ जल प्रदेश और स्थल प्रदेश मे समान बर-

संता है। इसी प्रकार ये मुनि भी बुद्धिमान् और मूर्ख पर समान अपने व्याख्यान का प्रभाव डालते हैं॥ ६॥

यदास्याब्ज-स्यन्न मधुरिम प्रपन्नं प्रकटित,
प्रभाव व्याख्यान सुमरस-समान रसयितुम्
समुद्भूतासङ्गा नर-नृपति-भृ गा अभिमतान्,
सुरान् संयाचन्ते प्रथमतरमन्ते च तृपिता ॥७॥

इनके मुख कमल से उत्पन्न हुए प्रभाव जनक मधुर व्याख्यान का पान करने के लिये मनुष्य और राजा रूप भौंरे (जो कि समुद्भुता स गा पहले मजा लूट चुके) व्याख्यान के पहले और अन्त में भी प्यासे के प्यासे अपने इष्ट देवों की प्रार्थना करते हैं कि फिर भी हमें यह सौभाग्य प्राप्त हो॥ ७॥

प्रभाविव्याख्यानामृतरसनिधानाय दशन-
द्युतिज्योत्स्ना भाजे विबुध-भ-समाजेद्धरुचये
यदस्यैणाङ्कायाऽतुलसुख-निकायाय नितरां
सभा चक्षुश्चौरः क्षितिपति चकोर स्पृहयति ॥८

प्रभावशाली व्याख्यान रूप अमृत रसका निधान, दांतों की कान्ति रूप चन्द्रिका वाले, विद्वान् रूप नक्षत्रों के समाज में चमकने वाले, अद्भुत सुख के स्थान जिनके मुख रूप चन्द्रमा

को सभा की आखें चुराने वाले राजा रूप चकोर पसन्द करते हैं ॥ ८ ॥

गतामर्षो मर्षेण च जनित हर्षेण सहितः-
समायो निमायो विदधदसमा योगरचनाः ।
स्वमुक्त्यै यस्तृष्णा दधदपि च तृष्णां परिजह
च्चतुर्थः सन्मानो मुनि रयममानो विजयते॥९

क्रोध रहित और हर्ष जनक क्षमा से सहित माया रहित कठिन योग को दिखा रहे हैं । तथा तृष्णा छोड़ने पर भी मुक्ति के लिये तृष्णा रखते हैं । और मान (आदर) युक्त होने पर भी मान (अभिमान) रहित हैं । ऐसे मुनि चतुर्थमल्ल जी महाराज की सदा जय हो ॥ ९ ॥

भवदीय

आशुकवि पण्डित नित्यानन्द शास्त्री

योधपुर (मारवाड़)

शार्दूलविक्रीडितम्

धन्येय वसतिर्नवीननगराख्याति पवित्रीकृ-
तामोहाऽस्तोकतमोऽपसारणकरैस्तीर्थीकृता
साधुभिमन्नालालसुपूज्यविष्टरसभाप्रद्योतका-

साधवो राजन्ते किल यत्र संप्रति मुनिश्री चौथमल्लाभिधा. ॥ १ ॥

मोह रूप घने अन्धकार को मिटाने वाले साधुओं से पवित्र कीगई तीर्थों बनाई गई नयेशहर की बसती तुम्हें धन्य है जिस जगह अभी पूज्यश्री मुन्नालाल जी महाराज की आसन (गादी) को दिपाने वाले मुनि श्री चौथमल जी महाराज विराज मान हैं ॥ १ ॥

धन्याभारत भूरसौ त्रिभुवने देवालय स्पर्धिनी
यस्यां जंगमपारिजातकतरुस्तुर्यापदेशान्ननु,
यस्यानातपसेविनां विचरत. सौख्य भवत्यक्षत
सोऽय नस्तनुताद्भीष्टनिचयं श्रेय पथदर्शयम्

तीनों जगत में यह भारत भूमी धन्य है जिस में मुनि श्री चौथमल जी महाराज के मिष से जगम कल्पवृक्ष शोभाय मान है, चलते फिरते जिस कल्पवृक्ष की छाया मे रहने वालो को अक्षीण सुख मिलता है, वे व मुनि श्री चौथमल जी महाराज कल्याण का मार्ग बतलाते हुए हमारे मनोरथो को सफल करते रहते हैं ॥ २ ॥

॥ शिखरिणी ॥

अशक्य स्तोतु ते निखिलगुणवृन्द मुनिवरै -
कथकार स्तुत्योजलधिगहन स्वल्प मतिना ।

त्रिलोकीवन्द्यानां तदपि कृपया पादरजसा,
चतुर्धासंघानां सदसि नुतिलेश नु विदधे ॥३

हे मुनिवर! आपका सारा गुणगण मुनिवरों से भी सग्रहा नहीं जा सकता तो मुझ अल्प बुद्धि से समुद्र समान गम्भीर आपकी स्तुति कैसे बन पडे। तथापि त्रिजगत के वन्दनीय प्रभुवरों के चरणरज की कृपा से चतुर्विध संघ की सभा में कुछ स्तुति लेश करता हूं ॥ ३ ॥

उपजाति।

सतीं समृद्धिं परिहाय धीमान्,
साल क्रियां चित्तविरक्ति भावात्।
रत्नत्रयालंकृति भूषितांग,
प्राप्तो किं तामविनाशिनी च ॥४॥

जो बुद्धिमान चित्तकी विरक्ति के कारण भूषणो सहित अच्छी समृद्धि को त्याग करके तीनो ज्ञान दर्शन चारित्र रूप भूषणो से भूषित होकर क्या उस अविनाशिनी समृद्धि को नहीं प्राप्त हुए अर्थात् अवश्य ॥ ४ ॥

तप· प्रतोदेन जितेन्द्रियाश्वः,
चतुष्कषायेन्धन दाह दाव·।

पञ्चाननः कर्म करीन्द्रयूथे,

जीव्याच्चिर श्रीमुनिचौथमल्ल. ॥५॥

जो तप रूप चाबुक से इन्द्रिय रूप घोड़ोंको काबू किया। और कषायों रूप ईंधन के जलाने में दावाग्नि का काम कर रहे हैं। और कर्म रूप हाथियो के समूह मे सिंहरूप है, ये मुनि श्री चैाथमल जी महाराज समाजोन्नति सदैव करते रहें ॥ ५ ॥

तोटकवृत्तम्।

मुनिराज ! विराजित शांततनो,

समसङ्घ सरोज विकासरवे !।

वचनामृत हर्षितसभ्यजन ?,

जय जैन दिवाकर ? तुर्यमल्ल ! ॥ ६ ॥

जिनके मुंह पर शान्ति झलक रही है, जो चतुर्विध संघ रूप कमल के विकासन मे सूर्य्य हैं जिन्हों ने वचन रूप अमृत से सभ्यजनों को प्रसन्न कर रखे हैं, जो जैनों में सूर्य्य रूप हैं, ऐसे मुनि श्रीचैाथमलजी महाराज की सदा जय हो ॥६॥

जिन शासनदत्त विशुद्धमते,

भवदीय पदाम्बुजकोषदले।

रचना तनुबोध विहारि कृता,
निहिता भ्रमरोऽस्त्रियमाव हलात् ॥ ७ ॥

जैन शासन मे जिन्हो ने अपनी शुद्ध बुद्धि लगा रखी है, ऐसे हे मुनि श्री चौथमलजी महाराज ! आपके चरण कमल मे समर्पण की हुई अल्पबुद्धि विहारीलाल की कृति भौंरी की शोभा को प्राप्त हो ॥ ७ ॥

भवदीय
शुभकांक्षी दयास्पद
विहारीलाल शर्मा
ब्यावर

भाषा-शिखरिणी

महामाया मोह-स्मरतिमिरराशी भव-निशा,
मिटा के फैलाई सुमति किरणें भी चहु दिशा ।
सभी हैं ये साक्षात् रवि शमिदमी चौथमलजी,
जिन्हों के आगे दुर्मति-कुमुदिनी ने छवी तजी ॥ १ ॥

मत्तगयन्द छन्द

दुर्लभ या नर-देहधरी पुनि ताविच ही गुण शोध लिया है,
झूठ गिन्यो जगको मुनिभूपण काम करोध को दूर कियो है ।

आतप रूप को जानि लियो उरमें गुरुज्ञान को आनि लियो है,
सत शिरोमणि चौथमुनीश्वर चौथयुगीन को एक दियो है ॥२॥

सवैया

चोसठ अर्थ जिनेश्वर भाषित सूतर जा गलवीच सुहावे,
धम्म इचे जिनशासन के "कविलाल" कहे विरले दगआवे।
मन्मथजीत महामुनि ये निशिवासर ज्ञान घटा गहरावे
लच्छनवन्त विचत्तण के गुण गावत को गुनवन्त अघावे

भवदीय
लालाराम जोधपुर
(मारवाड)



प्रकरण २ रा.

सनदें और हुक्मनामे

कई जागीर दारो से पट्टे परवाने चरित्रनायक जी को प्राप्त हुए वे अक्षरश निम्नोक्त प्रकार से हैं।

नंबर १५२१

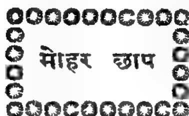
मानर्नीय महाराज चौथमलजी
जैन स्वेताम्बर थानकवासी-की सेवा में

राजे श्रीठाकरा जोरावर सिंहजी साहरगी लो० प्रणाम पहुचे अपरच आप विहार करते हुये हमारे गाव साहरगी में पधारे और धार्मीक व अहिंसा विशयक आपके व्याख्यान सुनने का मुझको भी सौभाग्य हुवा इस लीये मेने इलाके में चरन्दे व परन्द जानवरान की जो शीकार आम लोग किया करते थे उन की रोक के वास्ते और मछलीयों को शीकार धार्मीक तीर्थीयों में न होने की दोसम्कुलर नंबर १५१६ १५२० जारी करके मनाई करदी है नकलें उनकी इस पत्र के जरिये आपकी सेवा में भेजता हूं कारण के येह आपके व्याख्यान का सूफल हे फ सा० २३।१२।२१ ई

ठाकुरासहारगी

॥ श्री ॥

, सरकुलर ठिकाना माहारगी व इजलास राजे श्री ठाकरा जेरावर सिंहजी साहब-तारीख २३।१२।२१ ई०।



नकल मुतावीक असल के

जो के धार्मीक तीथी एकादशी पुनम अमावस्या जन्माष्टमी और रामनौमी और जेन धर्मावलम्बीयों के पजूसनों में प्रगणे हाजा में शीकार मछलियों की कोई शक्स नहिं करे इसका इन्तजाम होना जरूर ली ।

नम्बर १५१६

हुक्म हुवा के

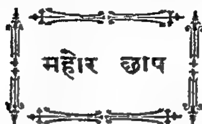
मारफत पुलिस प्रगणे हाजा में उन तमाम लोगो को जो अक्सर शीकार मछली किया करते हैं मुमानियत करदी जावे के खीलाफ वर्जी करने वाले पर सजा को जावेगी फ याद कारवाई असल हाजा सामिल फाइल हो ।

तारीख मजकुर — सही हिन्दी में ठाकरा साहरंगी

सही हीन्दी बहादुरसिंह
कामदार-साहरमी

॥ श्री ॥

सरकुलर ठिकाना साहरगी बाइजलास राजे श्री ठाकुरां जोरावर सिंहजी साहब तारीख २३।१२।२१



नकल मुताबीक असलके

जोके ठिकाने हाजा की हद में ऐसा कोई इन्तजाम नहीं है जिस की वजह से हर शक्ष सीकार वे रोक टोक किया करते हैं येह बेजा है इसलीये येह तरिका आयदा जारी रहेना नां मुनांसीब है लीहाजा ।

नबर १५२० हुक्म हुवा के

आज तारीख से प्रगणें हाजा में बिला मजूरी ठिकाना शीकार खेल्ने की मुमानियत की जाती हे इत्तला इसकी मारफत पुलिस तमाम मवाजे आत के भवइयान या हवाल दारान के जर्ये आम लोगों को करादी जावे के कोइ शक्ष इसकी खीलाफ वर्जी करेगा वोह मुस्तोजीब सजाके होगा फ बाद कार रवाई असल हाजा सामील फाइल हो ।

स्क्षी हीन्दी वहादुर- सिंह कामदार साहरगी   स्क्षी हिन्दी में ठाकुरां साहरगी

॥ श्रीनतगोपाल जी ॥

राजा रजयति प्रजा

जैन मजहब के मुनी महाराज श्री देवीलालजी व थावाथ-मल जी महाराज धनेड़ा में वैशाख वदी ११ को पधारे और श्री ऋषभदेव जी महाराज के मन्दिर में इनके व्याख्यान सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ आपने नजरबाग व महलों में भी व्याख्यान दिये आपके व्याख्यानों से बड़ा ही आनन्द प्राप्त हुआ जिससे मुनासिब समझकर प्रतिज्ञा की जाती है कि —

१ पजुषणों में हम शिकार नहीं खेलेंगे
२ मादीन जानवरों की शीकार इरादतन कभी नहीं करेंगे
३ चैत सुदी १३ श्रीमहावीर स्वामी जी का जन्म दिन होने से उस दिन तातील रहेगी ताकि सब लोग मन्दिर* में सामिल होकर व्याख्यान आदि सुनकर ज्ञान प्राप्त करें व नीज उस रोज शिकार भी नहीं खेली जावेगी।

(मेवाड़)

---

*धनेड़े मेवाड़ में जो भी श्वेताम्बर स्थानकवासी साधु जाते हैं वे सब ऋषभदेव जी के मन्दिर ही में ठहरते हैं। और चतुमास का निवास भी उसी मन्दिर में करते हैं। अतः व्याख्यान भी उसी मन्दिर में होता है और सब श्रावक गण सामायिक प्रतिक्रमणादि तथा पौषध वहीं करते हैं। अतएव "राजा साहिब" ने श्रीमहावीर स्वामी के जन्म दिन वातिल रखने की चरित्रनायक जी से प्रतिज्ञा कर सब जैन लोगों को इजाजत दी कि मन्दिर जी में इकट्ठे होकर उस दिन व्याख्यान सुन कर ज्ञान प्राप्त करें।

४ खास घनेडे व मवाजियात के तालावों में मछी आड वगैरा की सीकार बीला इजाजत कोई नहीं करने पावेगा। लीहाजा

नम्बर
६७७५

जुमले सर्हेनिगान को मारफत महकमे माल हिदायत दी जावे, कि वह आसामियान को आगाह कर देवे कि तालावों में मछी आड़ वगैरा का शिकार कोई शख्स बिला इजाजत न करने पावे। खिलाफ इसके अमल करे, उस की बाजाबता रीपोर्ट करे तातील बाबत हर एक महकमे जात में इत्तला दी जावे नीज इसके जरिये नकल हाजा मुनि महाराज को भी सुचीत किया जावे फकत १९८० वैशाख सुदी २ ता० ६ मई सन् १९२४ ई०।

द० राजासाहब के

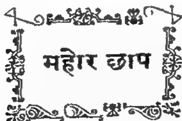
॥ श्रीराम जी ॥

श्री हींगलाजी नकल

हुकमनामा अज ठिकाना कोसीथल बाबे वैशाख सुदी १५ का उम्मेदसिंह १९८०।

नम्बर

५४



जो कि अकसर लोग जानवरों को अपना पेट भरने के लिये सीकार खेलकर जीवहिंसा के प्राश्चित को प्राप्त होते हैं इसलिये हस्ब उपदेश साधू जी महाराज श्री चौथमल जी

खामी के आज की तारीख से महे हुकमनामा खास कोसीथल व पटा कोसीथल के लिये जारी कर सब को हिदायत की जाती है कि शिकार खेलकर जीवहिंसा करने से पूरा परहेज करें। अगर कोई खास वजह पेश आवे तो मन्जूरी हासिल करे। अगर इसके खिलाफ कोई करेगा और उसकी शिकायत पेश आवेगा तो उसके लिये मुनासिब हुकम दिया जावेगा। इसलिये सब को लाजिम है, कि निगरानी करते रहें। और किसी के लिये बिला मन्जूरी शिकार खेलना जाहिर में आवे, तो फौरन इत्तला करें। फकत



प्रकरण ३

हिज हाईनेस महाराजा सर मल्हारराव
बाबा साहिब पवार के. सी. एस आई. देवास "२"
का

संक्षिप्त परिचय

आपका जन्म प्रसिद्ध मरहठा क्षत्रियकुल विक्रमीय सम्वत् १९३४ श्रावण शुक्ल २ को शुभ योग में हुआ था आपने बाल्यावस्था में ही धार्मिक व राजनैतिक शिक्षा की अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली थी तथा अपनी कार्य कुशलता व कर्तव्यपरायणता का अल्पवय में ही प्रजा के सन्मुख अनुकरणीय परिचय दे दिया था।

श्रीमान् का राज्याभिषेक विक्रम सम्वत् १९४९ के ज्येष्ठ कृष्णा १२ को बडे समारोह के साथ हुआ। श्रीमान में दयालुता, उदारता, परोपकारिता, धैर्य्य तथा गाम्भीर्य आदि अनेक उच्च गुणों का प्रादुर्भाव बचपन से ही दृष्टिगोचर होता था। कहा है "होनहार विरवान के होत चीकने पात" वे उच्च गुण दिन प्रतिदिन बढते ही गये। अस्तु, इसके आदर्श उदाहरण अनेक *विद्यमान हैं। यथा —*

१ आप मांस भक्षण नहीं करते।

२ शिकार नहीं खेलते।

३ तथा हाल ही में श्रीमान् ने अपने राजस्थ विन्ध्या देवी के मन्दिर जी में लगभग १५००० जीवों का वार्षिक वध हुआ करता था उसे सर्वथा बन्द करके जीवदया का अनुपम उदाहरण दिया है।

श्रीमान के उपरोक्त आदर्श गुण अनुकरणीय हैं। वर्तमान नवयुग में विशेष कर शिकार का शोक नरेशों व सामान्य व्यक्तियों में भी विशेष रूप से पाया जाता है। यह इतनी भयकर प्रथा है कि जिसका उल्लेख करना लेखनी की शक्ति से बाहर है। धन्य है, ऐसे आदर्श नरेश को जिन्होंने मूकप्राणियों एवम् भोले पशुओं पर दया करके इस दुष्ट कर्तव्यहीन प्रथा का समूल त्याग कर दिया। हम प्रत्येक स्वनाम धन्य नरेशों से सादर निवेदन करते हैं कि वे भी इस भयङ्कर प्रथा का त्याग कर अपनी वास्तविक वीरता और दयालुता का आदर्श दिखावे।

आपके राज्य का विस्तार ४१६ वर्गमील है जनसख्या ६६६६८ है। आपको गवर्नमेन्ट की ओर से सन्मानार्थ १५ तोपो की सलामी दी जाती है। आपके सद्गुणो व सद्व्यवहार से प्रजा बहुत प्रसन्न है। विद्याप्रचार की ओर आपका विशेष अनुराग है अतएव आपकी ओर से राज्य में शिक्षाप्रचार के लिये अनेक पाठशालाओं का सञ्चालन किया जाता है।

आप सरल स्वभाव, मिष्टभाषी व हसमुख हैं, कटुता तो आपको छू तक नहीं गई है। तथा बहुत शान्त प्रकृति सादा मिजाज व अहिंसा धर्म के अनुरागी हैं। हमारे चरित्रनायक जी के आप परम भक्त हैं जब २ चरित्रनायक जी देवास पधा-

रते हैं आप यथासम्भव सर्वदा व्याख्यान लाभ लेने के अलावा दिन व रात्रि के समय स्थानीय सेवा भी करते रहते हैं और जैनधर्म के तात्विक विषयों से परिचित होने के लिये अनेक रूप से प्रश्नोत्तर करते रहते हैं। तथा प्रतिवर्ष कम से कम एक वार देवास पधारने की आग्रह पूर्वक विनती करते रहते हैं, साराश यह है कि श्रीमान् सरकार की धार्मिक रुचि प्रशंसनीय है जो उपरोक्त उदाहरणों से प्रकट है।

हमारी हार्दिक भावना है कि आपके आदर्श कार्यों का प्रत्येक नरेश अनुकरण करें और अपना कर्तव्य पालन कर अन्य व्यक्तियों के लिये उदाहरण उपस्थित करें।

वहुरत्ना वसुधरा

श्रीमान् राजा साहिब अमरसिंहजी साहिब बनेडा

का

संक्षिप्त परिचय।



श्रीमान का जन्म ई० सन् १८८६ में हुआ था, और सन् १९०९ में आप सिंहासनारूढ हुए। सन् १९१० में आपके राज्याभिषेक के समय महाराना साहिब उदयपुर की ओर से "तलवार वधाई" के दस्तूर में एक खास तलवार, एक हाथी और एक घोडा आभूषणो सहित सन्मानार्थ प्राप्त हुए थे। फिर जब आप उदयपुर पधारे तब वहा पर आपका स्वागत प्रथानुसार शहर के दरवाजो के बाहर से ही महाराणा साहब की ओर से किया गया।

आपके पिता श्री राजासाहिब अक्षयसिंह जी के मृत्यु के स्मारक में आपने अक्षय मेमोरियल स्कूल प्रजा के बच्चों को शिक्षा प्राप्त कराने के लिये स्थापित किया जिसके साथ में एक बोर्डिङ्ग हाऊस भी है और श्रीमती रानी साहिबा ने भी स्कूल के लिए एक अच्छी इमारत प्रदान की है। शिक्षा प्रचार की ओर आपका सर्दव विशेष लक्ष्य रहता है।

आपने संस्कृत साहित्य की वृद्धि के लिए एक मुनि कुल ब्रह्मचर्य्याश्रम भी स्थापित किया है कि जिसके निर्वाह के लिये मासिक व्यय भी आपकी ओर से प्रदान किया जाता है तथा कुछ जमीन भी उसके लिये निकाल दी गई है। आप प्रजा के कष्टों को निवारण करने के लिये अनेक प्रकार के प्रयत्न करते रहते हैं यहां तक कि किसान लोगों के लिये १५०००) रुपये लगाकर एक (Agricultural Bank) कृषिक बैङ्क भी खोला है।

श्रीमान् अत्यन्त दयालु धर्मप्रेमी, उदारचित और प्रजा भक्त नरेश हैं। आपके विचार गम्भीर सरल व परोपकारी हैं। श्रीमान् हमारे चरित्रनायक जी के व्याख्यान अवसर मिलने पर बड़ी उत्कण्ठा व भक्ति के साथ श्रवण करते हैं।

श्रीमान् धर्मप्रेमी दानवीर रायसाहिब सेठ कुन्दनमलजी कोठारी [जैसलमेरी] आनरेरी मजिस्ट्रेट ब्यावर का

संक्षिप्त परिचय।

आप का जन्म, ओसवाल घराने के प्रसिद्ध कोठारी (जैस-

लमेरी) गोत्र में विक्रमीय सम्वत् १६२७ के कार्तिक शुक्ला पूर्णमासी को अर्धरात्रि के समय शुभ लगन में हुआ था। आपके पिता श्री का शुभनाम हंसराज जी था। समयानुसार आप सकुटुम्ब खुशहाल में रहते थे। बालकपन से ही आप में उदारता, दयालुता, धैर्य्य एवं गाम्भीर्य आदि सद्गुणों का प्रादुर्भाव हो गया था। और यह सब गुण उत्तरोत्तर क्रमश बढते ही गये। जिस के कई आदर्श उदाहरण आज हमारे सामने विद्यमान हैं।

आपके राजभक्ति आदि सद्गुणों से प्रसन्न होकर गवर्नमेन्ट ने आप के सम्मानार्थ ता० ५ जून सन् १६२० ई० को आप को रायसाहिब की उपाधि से विभूषित किया। इस के उपरान्त शीघ्र ही आप की योग्यता और न्यायपरायणता पर मुग्ध हो कर स्थानीय गवर्नमेन्ट ने आप को आनरेरी मजिस्ट्रेट के पद से अलङ्कृत किया।

परोपकार के लिये आप सदैव तन, मन, धन से तत्पर रहते हैं। सम्वत् १६७२ में दुष्काल के कारण मारवाड प्रान्त के अनेक कृषक अपने पशुओं सहित हजारों की सख्या में ब्यावर होते हुए मालवे जाते थे। तब आप ने गो आदि पशुओं को करीब ८०००) रुपये का घास डलवा कर उन की क्षुधा निवारण कर असीम पुण्य प्राप्त किया। पाठक गण श्रीमान की आदर्श उदारता का एक और प्रशसनीय उदाहरण सुनिये कि एक दिन उचित से अधिक मूल्य देने पर भी जब घास न मिला तो दया से प्रेरित होकर आप ने लगभग १०००) रु० के कपासिये ही डलवा कर उन मूक पशुओं की

रक्षा की। तथा उनके मालिकों को भी भुने हुए चने व कपड़े आदि दिये। इस प्रकार पशुओं को घास तथा कपासिये से और मनुष्यों को अन्न तथा वस्त्र से सन्तुष्ट किया।

धार्मिक और व्यवहारिक विद्याप्रचार के लिये भी अनेक पाठशालाओं को आप हजारों रुपये दान करते रहते हैं।

आप ने निजी व्यय से एक औषधालय भी अरसे से खोल रखा है कि जिस का वार्षिक व्यय लगभग ढाई हजार रुपया है।

अनाथालयों, अस्पतालों तथा घरेलु औषधालयों आदि अनेक सस्थाओं को आपसे आर्थिक सहायता प्राप्त होती रहती है। जीवदया तथा अन्य शुभकामों में अधिक रकम आप की तरफ से ही दी जाती है। जिस धार्मिक या सामाजिक क्षेत्र की तरफ आप बढ जाते हैं उस से फिर पीछे कदम नहीं हटाते हैं वरन अग्रसर ही रहते हैं।

आपके अनेक और प्रशसनीय कामों में से एक का उल्लेख और किया जाता है अर्थात् मेरवाडे के लोग ग्रामों में होली के दूसरे दिन "अहेडा" खेलते हैं। तमाम गाव के आदमी होली के दूसरे दिन अस्त्र शस्त्रादि से सुसज्जित होकर जङ्गल में जाते हैं और वहाँ चहुओर हा हू आदि शब्द करते हुए तेजी से दौडते हैं। उस समय उनके सामने छोटा बडा जो भी पशु आजाता है उसे जीता नहीं छोडते। आपने सन् १६०६ में कई ग्रामों के लोगों को प्रीतिभोज इत्यादि देकर यह 'अहेडा' का खेल बन्द करा दिया। यह है एक धर्मभीरू तथा धर्मवीर की दयालुता का एक सच्चा उदाहरण।

आप दी महालक्ष्मी मिलन कम्पनी लिमिटेड ब्यावर के मैनेजिंग डाईरेक्टर हैं।

अस्तु यह लिखना अनावश्यक न होगा कि आप बड़े योग्य और प्रभावशाली व्यक्ति हैं। सच तो यह है कि आप इन सद्गुणो की खान होने से वास्तव में कुन्दन के समान ही शुद्ध हृदय और स्वनामधन्य हैं। आप प्रेममूर्ति, सौम्यस्वभाव, प्रसन्न-वदन, और सादा मिजाज हैं। अभिमान आपके पास तक नहीं फटका है। धार्मिक कामो में आप का विशेष अनुराग है। आप के सेवको आदि के साथ भी आप का वर्ताव भ्रातृवत है आदि २ अनेक गुणो से विभूषित होने के कारण यह कहना अत्युक्ति न होगा कि आप एक आदर्श पुरुष हैं। आप के जीवन के महत्वशाली कार्यों का विस्तृत उल्लेख किया जाय तो एक स्वतन्त्र पुस्तक बन सकती है। अतएव अल इति विस्तरेण।

आपके सुपुत्र श्री० कुवर लालचन्दजी साहिब भी अपने पिता श्री के सदृश ही हसरलस्वभाव, समुख और उदारचित्त हैं।

श्रीमान् मिश्रीमलजी मूणोत ब्यावर

का

संक्षिप्त परिचय

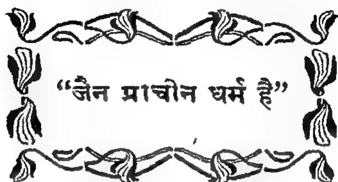
आप का शुभ जन्म वि० स० १९३६ मार्गशीर्ष शुक्ला ३ को शुभ योग में पाली (मारवाड) में हुआ था। आप के पिता जी का नाम श्री कुन्दनमल जी था और काका साहिब श्री यशवन्तराजजी थे। श्री यशवन्तराज जी के कोई पुत्र न था, अतएव आपने इनको ही दत्तकपुत्र स्वीकार किया। कुछ

समय के पश्चात् आप पाली छोड़ कर ब्यावर आगये आसानी से व्यौपारिक कार्य कर सकने योग्य शिक्षा आप को बाल्यावस्था में ही मिल चुकी थी। यहां आकर आपने व्यौपार में अच्छा लाभ उठाया। उदारता, सहन-शीलता सरलता इत्यादि अनेक गुण आप में बाल्यावस्था से ही विद्यमान थे। धार्मिक स्नेह भी आप ने बाल्यावस्था में ही प्राप्त किया था और वह समयानुसार दिन प्रति दिन बढ़ाते ही रहे हैं। आप धार्मिक कार्यों में आर्थिक सहायता भी विशेष-रूप से सदैव देते रहते हैं। सामाजिक कार्यों में भी आप सहायता प्रदान करते रहते हैं सारांश यह है कि आप का चित्त उदार व धार्मिक कार्य में विशेषरूप से लालायित रहता है। श्रीमान् वादीमान मर्दन स्थेवर पंडित मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज के सं० १९८० के चतुर्मास में श्रीमान् उग्र तपस्वी श्री छोटेलाल जी महाराज ने ३६ की तपस्या की थी और पांच दिवस का अभिग्रह भी धारण किया था वह अभिग्रह भी श्रीमान् मिश्रीमल जी के यहां पर ही सैकड़ो मनुष्यों के सामने फलीभूत हुआ था पाली में प्लेग के दिनों में सेवा समिति के खर्चे आदि का प्रबन्ध सब आप ही ने किया था, व अभी पाली में महाराज श्री के सदुपदेश से जो न्याती झगड़े का लय हुआ था उसमें भी आपने बहुत उद्योग किया था।

यह आप के धार्मिक जीवन तथा सच्चरित्रता का एक अत्यन्त उज्जल उदाहरण है। आप के दो सुपुत्र और एक पुत्री है।

नोट—इच्छित वस्तु का किसी अवधि में प्राप्त होने की अभिग्रह अर्थात् प्रतिज्ञा कहते हैं।

प्रकरण ४ था ।



"जैन प्राचीन धर्म है"

(लेखक श्रीमान् वैद्य तनसुखजी व्यास-भूतपूर्व सम्पादक वैद्यकल्पतरु)

श्रीमान् पूज्य व्याख्यान वाचस्पति श्री १००८ श्री चौथमल जी महाराज लगभग २५ दिन से जोधपुर मे विराजमान हैं, आप के व्याख्यान यहा रोज होते हैं, श्रोताओं की भीड खासी लगी रहती है, कभी २ श्रोताओं की सख्या दो हजारसे भी अधिक बढ जाती है। आपके सुललित उपदेशप्रद धार्मिक व्याख्यानो का यहा भी बहुत अच्छा असर पडा है, और लोगो की बडी इच्छा है कि आगामी वर्ष श्रीमान् का चतुर्मास यहीं हो और इसके लिये एक जैनसघ ही नहीं किंतु जोधपुर की सम्पूर्ण हिंदू जनता ने भी प्रार्थना द्वारा अपनी आकांक्षा ...न से प्रगट की है। आशा है अवश्य ही पूर्ण की जावेगी। ...न माघ वदि १३ के दिन यहा से महा मन्दिर विहार गये हैं और अभी कुछ दिन वहा आप का विराजना होगा ऐसा मालूम पडता है वहा से विहार करते हुए शायद आप ब्यावर पधारेंगे। जोधपुर से विहार करने के दिन आप

का व्याख्यान बड़ा ही प्रभावशाली हुआ, उपस्थिति,बहुत अधिक थी। आपने प्रारम्भ मे राग और द्वेष की हृदय ग्राही व्याख्या ऐसी सरल रीति से की थी कि साधारण जन भी उसे सहज मे समझ सकता था। आपने यह अच्छी तरह से उदाहरण और प्रमाण से समझाया था कि इन्हीं के द्वारा मनुष्य अधर्म मे फस कर अपने जीवन का अकल्याण अपने हाथों करता है अपने पतिव्रत धर्म पर भी श्री सीता के उच्च आदर्श भावो की व्याख्या करके उपस्थित स्त्रीसमाज को जो हितकर उपदेश दिया वह सदा मनन करने और उसका अनुसरण करने योग्य था। केवल स्त्रीसमाज ही को नहीं किंतु पुरुष समाज को भी उससे आवश्यक शिक्षा मिलती है। प्रसगवश आप ने यह भी समझाया कि श्री सीता का पतिव्रत उपदेश और आदर्श औरउच्च भाव आज विद्वानों ने अवस्था नुसार नये अपनी प्राचीनता सिद्ध करने के लिये तैयार नहीं कर लिये हैं किंतु जैनग्रन्थो में—जिन्हे बने हजारो वर्ष हो गये हैं—पहिले से मोजूद हैं, आश्चर्य है कि समझाते हुए भी कुछ लोग यह झूठा आक्षेप करते हैं कि जैनधर्म ही अभी २ ही निकला है पर बिना प्रमाण उनकी बातों को कैसे कोई स्वीकार करने के लिये तैयार हो सकता है, केवल कह देने मात्र ही से जैन धर्म आज का निकला धर्म नहीं हो सकता भाई के परमानन्द जी कहते हैं कि जैनियो ने अपनी प्राचीनता बतलाने के लिए रामचन्द्र जी को जैन धर्मानुयायी लिख दिया पर इसका उनके पास प्रमाण क्या है? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि अन्य धर्मियों ने अपनी प्राचीनता सिद्ध करने के लिये इन्हें अपना लिया? मुझे किसी धर्म से द्वेष नहीं है केवल जैनधर्म पर झूठा आक्षेप लगाने वालो के प्रति कहना

है कि वे बिना प्रमाण ऐसी बातें न कहें जिससे वे दोष के भागी हों जैन धर्म प्राचीन समय से प्रचलित है पर यदि कोई रामचन्द्र जी तथा हनुमान जी को हुआ भी नहा माने पर उनके नहीं मानने से ही वे नहीं हुये साबित नहीं हो सकते।"

जैनधर्म अति प्राचीन धर्म है, श्री ऋषभदेव भगवान से यह धर्म चला आरहा है ससार में जब वर्णाश्रम की व्यवस्था भी नहीं हुई थी उससे पहिले भी यह धर्म विद्यमान था। इसे कई करोड़ो वर्ष होचुके हैं आप ने अनेक पुष्ट ऐतिहासिक प्रमाण देकर यह सिद्ध कर दिया था कि जैनधर्म अति प्राचीन है। अपनी२ समझ अनुसार लोग मन चाहा लिख देते हैं पाली के परमानन्द जी ने भी जैनधर्म पीछे से निकला है इनकी एतिहासिक गणना में गोटाला है इन्होने ऋषभ आदि को जैन धर्मानुयायी लिखकर अपनी प्राचीनता सिद्ध करनी चाही है इनकी ऐतिहासिक बातें असत्य सिद्ध हो चुकी हैं आदि जो चाहा श्रीमाली अभ्युदय नामक पत्र में लिख दिया है पर उन के पास इनके प्रमाण क्या हैं। जैनधर्म के उन्होंने शास्त्र ही क्या देखे हैं कि वे ऐसा कहनेका साहस करें, जैनधर्मकी लिखी पुस्तकें भी इतनी प्राचीन हस्तलिखी मिलती हैं कि सुनते दग हो जाना पड़ता है। १५०० के सवत् में लिखी पुस्तक मेरे पास भी मौजूद है अनेक प्राचीन शिला लेख आदि भी मिले हैं, जैनधर्म बौद्धधर्म से भी पहिले का है और स्वतन्त्र है। यह पाश्चात्य विद्वानों ने भी कई अच्छे प्रमाणों द्वारा स्वीकार किया है, उनके खोज की कई पुस्तकें भी प्रगट हो गई हैं महाभारत ग्रन्थ में भी जैन साधुओं का जिक्र आया है, युद्ध के समय एक निर्ग्रन्थ साधु का शकुन हुआ था और

अर्जुन के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा था कि ये शकुन जीत देने वाला है और भी कई उदाहरण दिये जो स्थान की कमी से यहां नहीं लिखे जासके हैं। समय कम होने पर भी आपने बहुत से प्रमाणों द्वारा जनता को सन्तुष्ट कर दिया कि वास्तव में जैनधर्म अति प्राचीन है।

और आदेश किया कि हमें किसी से द्वेष नहीं है जब साधु केवल सत्य और निर्लोभ ही का उपदेश करते हैं जो लोग जैनधर्म में घोटाला बतलाते हैं उनको सतमार्ग बतलाने और सुबोध देने के लिये ही इतनी चर्चा की गई है। महाराज साहिब ने १ घंटे तक जैनधर्म की प्राचीनता अनेक अकाट्य प्रमाणों द्वारा प्रतिपादन करके उपस्थित जनता में जैनधर्म के प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न की थी। और जो इसे अर्वाचीन बतलाते हैं वे भ्रम में हैं।

महामन्दिर विहार कर देने पर भी वहां की जनता आपके अमृत भरे उपदेशों को सुनने की अभी तक लालायित बनी हुई है और सुदि १ को जोधपुर में गिरदीकोट में आपके सार्वजनिक व्याख्यान की और व्यवस्था की गई। आपने महामन्दिर से कृपा कर पधार के एक बड़ा ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था, उपस्थिति ४ हजार के करीब थी। सभी धर्म के जन एकत्र हुए थे, मुसल्मानों की संख्या भी बहुत थी, बड़े २ मुसद्दी तथा ठाकुर आदि भी पधारे थे आपने अहिंसा के महत्व पर ऐसा सरल और उपदेशप्रद व्याख्यान दिया

था कि सारी जनता धर्म के गूढ तत्व की बात सुन कर प्रसन्न हुई। आपने अछूतो के सम्बन्ध में भी धार्मिक उपदेश दिया था, अछूत एक धार्मिक पाप है। आपका व्याख्यान ३॥ घन्टे तक जनता शान्त चित्त से ध्यानपूर्वक सुनती रही और भी सुनने की इच्छुक बनी रही। वहाँ चौमासे की भी प्रार्थना की गई। सुना है कि एक और सार्वजनिक व्याख्यान आपका सोजतिये दरवाजे बाहर होने वाला है।

"वेदादि ग्रन्थों से जैनधर्म का प्राचीनता"

प्रिय पाठक—यद्यपि ग्रन्थारम्भ म ही जैनधर्म की प्राचीनता के विषय में अनेक विद्वानो की सम्मतियां व शिलालेखो के अकाट्य प्रमाणो द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि जैन अति प्राचीन व सर्वोच्च धर्म है, तदपि भी हमें कई सज्जनों से यह सूचना मिली कि इस विषय म वेद पुराण आदि अन्य धर्म के शास्त्रों व ग्रन्थो के प्रमाण भी अवश्य दिये जावे इस लिये उन सज्जनों के आग्रह को मान देकर इस विषय के प्रमाणो के श्लोक भावार्थ सहित नीचे दिये जाते हैं।

भगवान् श्री ऋषभनाथजी जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर हुए हैं उनके पिता का नाम नाभिराजा माता का नाम मरूदेवी और उनके एक सौ पुत्र में से बडे पुत्र का नाम भरत था, उनके विषय में पुराणों तथा वेदो में इस प्रकार उल्लेख है —

शिवपुराण मे

> कैलासे पर्वते रम्ये वृषभोऽयं जिनेश्वरः।
> चकार स्वावतारं च सर्वज्ञः सर्वगः शिवः ॥५६॥

अर्थात्—केवलज्ञान द्वारा सर्वव्यापी, कल्याण स्वरूप सर्वज्ञाता यह ऋषभनाथ जिनेश्वर मनोहर कैलास पर्वत पर उतरते हुए।

ऋषभजी ने कैलास पर्वत से ही मुक्ति पाई है। जिननाथ अर्हंत ये शब्द जैन तीर्थङ्करों के लिए ही रूढ हैं —

ब्रह्माण्ड पुराण में देखिये—

> नाभिस्त्वजनयत्पुत्रं मरुदेव्यां मनोहरम्।
> ऋषभं क्षत्रियज्येष्ठं सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम् ॥
> ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजः।
> अभिषिच्य भरतं राज्ये महाप्राव्राज्यमास्थितः ॥

इह हि इक्ष्वाकुकुलवंशोद्भवेन नाभिसुतेन मरुदेव्यानन्दनेन महादेवेन। ऋषभेण दशप्रकारो धर्मः स्वयमेवाचीर्णः केवलज्ञान लाभाच्च प्रवर्तितः।

यानि—नाभिराजा ने मरुदेवी महारानी से मनोहर क्षत्रियों में प्रधान और समस्त क्षत्रियवंश का पूर्वज ऐसा ऋषभ नामक पुत्र उत्पन्न किया, ऋषभनाथ से शूरवीर सौ भाइयों में सब से बडा ऐसा भरत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। ऋषभनाथ उस भरत का राज्याभिषेक करके स्वयं जैनदीक्षा लेकर मुनि हो

था कि सारी जनता धर्म के गूढ तत्व की बात सुन कर प्रसन्न हुई। आपने अछूतो के सम्बन्ध में भी धार्मिक उपदेश दिया था, अछूत एक धार्मिक पाप है। आपका व्याख्यान ३॥ घन्टे तक जनता शान्त चित्त से ध्यानपूर्वक सुनती रही और भी सुनने की इच्छुक बनी रही। यहाँ चौमासे की भी प्रार्थना की गई। सुना है कि एक ओर सार्वजनिक व्याख्यान आपका सोजतिये दरवाजे बाहर होने वाला है।

"वेदादि ग्रन्थों से जैनधर्म का प्राचीनता"

प्रिय पाठक—यद्यपि ग्रन्थारम्भ म ही जैनधम की प्राचीनता के विषय में अनेक विद्वानो की सम्मतियां व शिलालेखो के अकाट्य प्रमाणो द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि जैन अति प्राचीन व सर्वोच्च धर्म है, तथापि भी हमें कई सज्जनों से यह सूचना मिली कि इस विषय म वेद पुराण आदि अन्य धर्म के शास्त्रों व ग्रन्थो के प्रमाण भी अवश्य दिये जाये इस लिये उन सज्जनो के आग्रह को मान देकर इस विषय के प्रमाणो के श्लोक भावार्थ सहित नीचे दिये जाते हैं।

भगवान् श्री ऋषभनाथजी जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर हुए हैं उनके पिता का नाम नाभिराजा माता का नाम मरूदेवी और उनके एक सौ पुत्र में से बड़े पुत्र का नाम भरत था, उनके विषय में पुराणों तथा वेदों में इस प्रकार उल्लेख है—

शिवपुराण मे

कैलासे पर्वते रम्ये वृषभोऽय जिनेश्वर‌ः ।
चकार स्वावतारं च सर्वज्ञ सर्वग शिव ॥५६॥

अर्थात्—केवलज्ञान द्वारा सर्वव्यापी, कल्याण स्वरूप सर्वज्ञाता यह ऋषभनाथ जिनेश्वर मनोहर कैलास पर्वत पर उतरते हुए।

ऋषभजी ने कैलास पर्वत से ही मुक्ति पाई है। जिननाथ अर्हन्त ये शब्द जैन तीर्थङ्करों के लिए ही रूढ हैं —

ब्रह्माण्ड पुराण में देखिये—

नाभिस्त्वजनयत्पुत्र मरुदेव्या मनोहरम् ।
ऋषभ क्षत्रियज्येष्ठ सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम् ॥
ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीर पुत्रशताग्रजो ।
भिषिच्य भरत राज्ये महाप्राव्राज्यमास्थित ॥

इह हि इक्ष्वाकुलवंशोद्भवेन नाभिसुतेन मरुदेव्यानन्दनेन महादेवेन। ऋषभेण दशप्रकारो धर्म स्वयमेवाचीर्ण केवलज्ञान लाभाच्च प्रवर्तित ।

यानि—नाभिराजा ने मरुदेवी महारानी से मनोहर क्षत्रियो में प्रधान और समस्त क्षत्रिय वंश का पूर्वज ऐसा ऋषभ नामक पुत्र उत्पन्न किया, ऋषभनाथ से शूरवीर सौ भाइयो में सब से बडा ऐसा भरत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। ऋषभनाथ उस भरत का राज्याभिषेक करके स्वय जैनदीक्षा लेकर मुनि हो

गये। इसो आर्य्यभूमि में इक्ष्वाकु क्षत्रियवश में उत्पन्न नाभिराजा के तथा मरूदेवी के पुत्र ऋषभनाथ ने क्षमा, मार्दव आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिञ्चिन्य और ब्रह्मचर्य्य यह दस प्रकार का धर्म स्वय धारण किया ओर केवल ज्ञान पाकर उन धर्मों का प्रचार किया।

प्रभास पुराण म ऐसा उल्लेख है —

युगे युगे महापुण्या दृश्यते द्वारिकापुरी।
अवतीर्णो हरिर्यत्र प्रभासे शशिभूषण॥
रेवताद्रौ जिनो नेमियु गादिर्विमलाचले।
ऋषीणामाश्रया देव मुक्तिमार्गस्य कारणम्॥

अर्थात्—प्रत्येक युग में द्वारिकापुरी बहुत पुन्यवतो दृष्टि गोचर होती है जहा पर कि चन्द्रसमान मनोहर नारायण जन्म लेते हैं पवित्र रेवताचल (गिरनार पर्वत) पर नेमीनाथ जिनेश्वर हुए जोकि ऋषियो के आश्रय और मोक्ष क कारण थे।

भगवान् श्री नेमीनाथ जी कृष्ण जी के पिता (वसुदेवजी) के बडे भाई महाराज समुद्रविजय के पुत्र द्वारिका निवासी थे, उन्होने गिरनारि पर्वत (रेवताचल) पर तपस्या करके मोक्ष प्राप्त की है, वे बाईसवें तीर्थङ्कर भगवान् श्री नेमिनाथ कृष्ण के चचेरे भाई थे।

नागपुराण में कहा है कि—

अष्टषष्ठिषु तीर्थेषु यात्राया यत्फल भवेत्।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत्॥

अर्थ—६८ तीर्थों की यात्रा करने में जो फल होता है वह फल आदिनाथ भगवान् के स्मरण करने से होता है।

ऋषभनाथजी का दूसरा नाम आदिनाथ है क्योंकि वे प्रथम तीर्थङ्कर थे।

नागपुराण में ऐसा लिखा है–

> अकारादि हकारान्त मूर्द्धाधोरेफसंयुतम्।
> नादबिन्दुकलाक्रान्त चन्द्रमण्डलसन्निभम्॥
> एतद्देवि परं तत्त्वं यो विजानाति तत्त्वतः।
> संसारबन्धनं छित्वा स गच्छेत्परमां गतिम्॥
> दशभिर्भोजितैर्विप्रैः यत्फलं जायते कृते।
> मुनेरर्हत्सु भक्तस्य तत्फलं जायते कलौ॥

अभिप्राय—जिसका प्रथम अक्षर 'अ' और अन्तिम अक्षर 'ह' है और जिसके ऊपर आधा 'रेफ' तथा 'चन्द्रबिन्दु' विराजमान है ऐसे "अर्हं" को जो कोई सच्चे रूप से जान लेता है वह संसार बन्धन को काटकर परमगति (मुक्ति) को चला जाता है। कृतयुग में दस ब्राह्मणों को भोजन कराने से जो फल होता है वह अर्हन्त के भक्त एक मुनि को यानी जैन साधु को भोजन कराने से होता है।

वाराह पुराण पर निगाह डालिये—

> तस्य भरतस्य पिता ऋषभ हेमाद्रेर्दक्षिणं वर्षं महद्भारतं नाम शशास।

तात्पर्य—उस भरत राजा के पिता ऋषभनाथ हिमालय पर्वत से दक्षिणदिशावर्ती भारतवर्ष का शासन करते थे।

अग्निपुराण पर दृष्टिपात कीजिये—

> ऋषभा मरुदेव्या च ऋषभाद्भरतोऽभवत् ।
> भरताद्भारत वर्षं भरतात्सुमतिस्त्वभूत् ॥

भावार्थ—मरूदेवी के उदर से ऋषभनाथ हुए, ऋषभनाथ से भरत राजा का जन्म हुआ। भरत राजा द्वारा शासित होने से इस खण्ड (देश) का नाम भारतवर्ष हुआ है भरत से सुमति हुआ।

इस प्रकार जैन ग्रन्थों में जो भगवान् ऋषभनाथ के पुत्र भरतचक्रवर्ती के नाम से इस देश का नाम "भारतवर्ष" रखा गया है, लिखा है। इस बात की साक्षी यह अग्नि पुराण भी देता है।

शिव पुराण की अनुमति है —

> अर्हन्निति नन्नाम धेय पापप्रणाशनम् ।
> भवद्भिश्चैव कर्तव्य कार्यं लोकसुखावहम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ—अर्हन् यह शुभ नाम पाप नाशक है जगत् सुख-दायक इस शुभ नाम का उच्चारण आप को भी करना चाहिये।

मनुस्मृति में भी ऐसा बतलाया है —

> कुलादिबिज सर्वेषां प्रथमो विमलवाहन ।
> चक्षुष्मान् यशस्वी वाभिचन्द्रोऽथप्रसेनजित् ॥

मरुदेवी च नाभिश्च भरते कुलसत्तमा ।
अष्टमा मरुदेव्यां तु नाभेर्जात उरुक्रम ॥
दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुर नमस्कृत ।
नीतित्रितयकर्त्ता यो युगादौ प्रथमो जिन ॥

अर्थात्—कुल आचरण आदि के कारणभूत कुलकर सब से पहिले विमलवाहन, फिर क्रम से चक्षुष्मान्, यशस्वी, अभिचन्द्र, प्रसनजित, नाभिराय, नामक कुलकर इस भरतक्षेत्र में उत्पन्न हुए। तदनन्तर मरुदेवी के उदर स नाभिराय के पुत्र मोक्षमार्ग को दिखलाने वाले सुर असुर द्वारा पूजित तीन नीतियो के विधाता प्रथम जिनेश्वर यानि-ऋषभनाथ सतयुग के प्रारम्भ में हुए।

"ऋषभ" शब्द का अर्थ "आदि जिनेश्वर" ही है इस में किसी प्रकार की शका करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि "ऋषभ" शब्द का अर्थ वाचस्पति कोष में 'जिनदेव' और शब्दार्थ चिन्तामणि में भगवदवतारभेदे, आदि जिन' यानी भगवान् का एक अवतार और प्रथम जिनेश्वर यानी तीर्थङ्कर किया है।

इसके सिवा जैनधर्म के प्रथम तीर्थङ्कर भगवान् ऋषभनाथ जी को आठवा अवतार बतलाकर भागवत के पाचवे स्कन्ध के चौथे पाचवे और छठवें अध्याय म बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। हम उस प्रकरण से यहा उद्धृत करके इस लेख का बढाना उचित नहीं समझते हैं। अत उसे छोड कर आगे बढते हैं।

पाठक महाशय—भागवत के पाचवे स्कन्ध को अवश्य देखने का कष्ट उठावे उपरलिखित प्रमाणों से इतना तो सुगमता से सिद्ध हो ही जाता है कि सृष्टि के प्रारम्भ समय भगवान् ऋषभनाथ हुए और वे पहिले (१) जिन (तीर्थङ्कर) थे, तदनुसार जैनधर्म की स्थापना उस समय हुई थी यह बात स्वयमेव तथा ऋषभनाथजी के साथ "जिन" विशेषण रहने से सिद्ध होती है इस कारण जैनधर्म के उदयकाल का ठिकाना भगवान् ऋषभनाथ का जमाना है जो कि १० २० हजार के इतिहास से बहुत ही पहिले विद्यमान था।

रामचन्द्रजी के कुल पुरोहित वशिष्ठ जी के बनाये हुए योगवशिष्ठ नामक ग्रन्थ म ऐसा उल्लेख हैः—

नाह रामो न मे वाञ्छा भावेषुच न मे मनः।
शातिमास्थातुमिच्छामि स्वात्मन्येव जिनो यथा॥

अर्थात्—रामचन्द्र जी कहते हैं कि मैं राम नहीं हू मेरे किसी पदार्थ की इच्छा भी नहीं है मै जिनदेव के समान अपनी आत्मा में ही शान्ति स्थापना करना चाहता हूँ।

इस स साफ जाहिर होता है कि रामचन्द्र जी के समय मे जैनधर्म का तथा उसके उद्धारक जिनदेवो (तीर्थङ्करो) का [illegible] था।

इन सब के सिवाय अब हम वेदों की ओर बढते हैं। देखे वहा भी कुछ हमारे हाथ आ सकता है या नहीं क्योंकि आधुनिक ग्रन्थो में वेद विशेष प्राचीन माने जाते हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद

सामवेद, अथर्ववेद के अनेक मन्त्रों में जैन तीर्थङ्करों का नाम उल्लेख करके उनको नमस्कार किया गया है। अवलोकन कीजिये—

ऋग्वेद पर ही प्रथम दृष्टिपात कीजिये-

आदित्या त्वगसि आदित्य सद आसीद अस्तभ्रादद्या "वृषभो" तरिक्ष जमिमीते वरिमाण। पृथिव्या आसीत विश्वा भुवनानि सम्राड्विश्वेतानि वरुणस्य व्रतानि ॥ ३० अ० ३।

अर्थ—तू अखण्ड पृथ्वीमंडल का सार त्वचास्वरूप है, पृथ्वी तल का भूषण है, दिव्यज्ञान द्वारा आकाश को नापता है, ऐसे हे "वृषभनाथ" सम्राट्! इस संसार में जगरक्षक व्रतों का प्रचार करो।

अर्हन्बिभर्षि सायकानि धन्वाहन्निष्कं यजतं विश्वरूपम्।
अ० १ अ० ६ व० १६

अर्हन्निदयसे विश्वं भवभुवं न वा ओजीयो रुद्रत्वदस्ति।
अ० २ अ० ७ व० १७

अर्थ-भो अर्हन्देव! तुम धर्मरूपी बाणों को, सदुपदेशरूप धनुष्यको अनन्तज्ञानादिरूप आभूषणों को धारण किये हो। भो अर्हन्! आप जगत् प्रकाशक केवल ज्ञान में प्राप्त किये हुये हो संसार के जीवों के रक्षक हो, काम क्रोधादि शत्रु समूह के लिए भयङ्कर हो तथा आप के समान कोई अन्य बलवान् नहीं है।

दीर्घायुत्वायुबलायुर्वा शुभ जातायु। ॐ रक्ष रक्ष अरिष्ट नेमि स्वाहा। वामदेव शान्त्यर्थमनुविधीयते सास्माक अरिष्ट

नेमि स्वाहा। ॐ त्रैलोक्य प्रतिष्ठितान् चतुर्विंशति तीर्थङ्करान् ऋषभाद्यावर्द्धमानान्तान् सिद्धान् शरणं प्रपद्ये।

त्रातारमिन्द्रं ऋषभं वदन्ति अतिचारमिन्द्रं तमरिष्टनेमिं भवे भवे सुभवं सुपार्श्वमिन्द्रं हवे तु शक्रं अजितं जिनेन्द्रं तद्वर्द्धमानं पुरुहूतमिन्द्रं स्वाहा।

ऋषभ एव भगवान् ब्रह्मा भगवता ब्रह्मणा स्वयमेवा चीर्णानि ब्रह्माणि तपसा च प्राप्तः परं पदम् (आरण्यके)।

इत्यादि और भी अनेक मन्त्र ऋग्वेद में विद्यमान हैं, जिन में जैनधर्म के उद्धारकर्ता तीर्थङ्करों का नाम उल्लेख करके उनको नमस्कार है। ऋषभनाथ अजितनाथ, सुपार्श्वनाथ, नेमिनाथ (अपर नाम अरिष्टनेमि) वीरनाथ (अपरनाम महावीर) आदि जैन अर्हतों (तीर्थङ्करों) के नाम हैं।

यजुर्वेद में देखिये—

ॐ नमो अर्हन्तो ऋषभो ॐ त्रातारमिन्द्रं वृषभं वदन्ति अमृतारमिन्द्रं हवे सुगतं सुपार्श्वमिन्द्रमाहुरिति स्वाहा।

वाजस्यनु प्रसव आबभूवेमा च विश्वभुवनानि सर्वतः स नेमिराजा परियाति विद्वान् प्रजा पुष्टिं वर्धयमानो अस्मै स्वाहा।

अ० ६ म० २५।

अर्थ—भावयज्ञ (आत्म स्वरूप) को प्रकट करने वाले इस संसार के सब जीवों को सब प्रकार से यथार्थ रूप से कह कर जो सर्वज्ञ नेमिनाथ स्वामी प्रकट करेंगे हैं, जिन के

उपदेश से जीवो की आत्मा पुष्ट होती है, उन नेमिनाथ तीर्थङ्कर के लिये आहुति समर्पण है।

> स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवा स्वस्ति न पूषा विश्ववेदा ।
> स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमि स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥
> अ० २५ म० १६ ।

इत्यादि और भी बहुत सी श्रुतियां यजुर्वेद में ऐसी विद्यमान हैं, जो कि बहुत आदर भाव के साथ जैन तीर्थङ्करों को नमस्कार करने लिये प्रेरित कर रही हैं।

अब कुछ नमूना सामवेद में भी अवलोकन कीजिये यथा — अप्वा यदि मेपजमान रोदसी इमा च विश्वा भुवनानि मन्मना यूथेन निष्टा वृषभो विराजसि । ३ अ० १ म० ११ ।

न ये दिव पृथि या अन्तमापुर्न मायाभिनधदा पर्यभुवन् युज वज्र वृषमश्चक्र इन्द्रो निर्ज्योतिषा तमसोगा अदुक्षत् ।
१० प० १०३ ।

इम स्तोम अर्हते जातवेदसे रथ इव समहेयम मनीपया भद्रा हि न प्रमन्ति अस्य ससदि अग्ने सख्ये मारिषामवय तव ।
१० अ० प० ८९ ।

तरणि रित्सपासति वाज पुरंध्या युजा आव इन्द्र पुरुहूत नमोगिरा नेमिं तष्टेव शुद्रम् ॥ २० अ० ५ म० ३ च० १७ ॥

इत्यादि और भी बहुत से मन्त्र सामवेद व अथर्ववेद में जैन तीर्थङ्करों के लिये पूज्यभाव प्रकट करने वाले विद्यमान हैं जिन का उल्लेख यहा स्थानाभाव के कारण नहीं किया गया। इसके लिये पाठक उदार हृदय से क्षमा प्रदान करें।

इन उपरोक्त प्रमाणों से ही अच्छी तरह सिद्ध हो चुका है कि वेदो की उत्पत्ति के पहिले जैनधर्म इस पृथ्वीतल पर बडे प्रभाव के साथ फैला हुआ था इसी कारण पुराण निर्माता के समान वेदो के रचयिता ऋषियो ने भी अपने मन्त्रो में जैन तीर्थङ्करो को नमस्कार किया है। अत कोई भी वेदो को मानने वाला निष्पक्ष विद्वान् वेदो की साक्षी देकर जैन धर्म को वैदिकधर्म से पीछे उत्पन्न हुआ नहीं कह सकता। यदि महाभारत के समय देखा जाय तो उस समय "श्री नेमिनाथ" बाईसवें तीर्थङ्कर विद्यमान थे, जैसा कि उस समय के बने हुये ग्रन्थो से भी प्रकट होता है, अत उस समय जैनधर्म का सद्भाव स्वयम् सिद्ध है। यदि रामचन्द्र जी लक्ष्मण जी के समय का विचार किया जाय, तो उस समय भी जैनधर्म की सत्ता पाई जाती है, क्योंकि एक तो उस समय जैनों के २० वे तीर्थङ्कर श्री मुनि सुव्रतनाथ जी ने जैनधर्म का प्रचार किया था जिसका प्रभाव उस समय के बने हुये वशिष्ठकृत "योग वशिष्ठ" के पूर्व लिखित श्लोक से प्रकट होता है, अब विचार लीजिये उस समय से पहिले १६ तीर्थङ्कर और हो चुके थे। जिन्होंने जैन धर्म का प्रचार किया था तब जैनधर्म इस संसार में कितने समय से प्रचलित हुआ था। भगवान् ऋषभनाथजी जो सब से पहिले जैनधर्म को प्रचार में लाये थे। अत उन का सद्भाव काल मालूम हो जाने पर जैनधर्म का प्रारम्भ काल ज्ञात हो सकता है, इस बात के लिये हमारे अनुभव से इतिहास तो हार मानता है क्योंकि वह बेचारा तो ४—५ हजार वर्ष से पहिले जमाने का हाल प्रकट करने में असमर्थ है, तब यह स्वयम् सिद्ध है कि श्री ऋषभदेव भगवान के

समय का प्रकट करना उसकी शक्ति के बाहर है। अतएव अब इस विषय को अधिक न बढ़ा कर 'बुद्धिमान को इशारा ही काफी है'' इस युक्ति के अनुसार यहीं स्थगित करते हैं। आशा है, निष्पक्ष विचारशील पाठक सच्ची बात ग्रहण करने में न हिचकिचावेंगे।



"जैनधर्म की अहिंसा सांसारिक कार्य मे बाधक नहो है"।

अहिंसा जैनधर्म का मुख्य उपदेश और मुद्रा लेख है। अहिंसा हिंसा से बचने का नाम है। कषाय के वश होकर अपने तथा दूसरे का प्राणों के घात करना हिंसा है। क्रोध, मान माया, लोभ ये कषाय हैं, ज्ञान आत्मा का स्वभाव है और इन कषायो से ज्ञान नष्ट होता है। जैनधर्म की अहिंसा यह नहीं कहती कि यदि कोई शत्रु देश पर चढाई करे तो उस समय अपने देश और अपनी प्रजा की रक्षा के लिये उससे युद्ध न करे, हा यदि बिना किसी कारण के केवल लोभ का दास हो कर राजा दूसरे का देश छीनने के लिये युद्ध करता है, सहस्रों मनुष्यो का खून करता है तो अवश्य हिंसा है।

जैनधर्म की अहिंसा का सिद्धान्त गृहस्थ को अपने कार्य्य व्यवहार करने का निषेध नहीं करती, जैनधर्म में हिंसा के दो भेद किये गये हैं (१) सकल्पी (२) आरभी। हिंसा कषायों के वशीभूत होकर केवल स्वार्थ और लाभ के लिये दूसरे को हानि पहुचाने अथवा मारने के अभिप्राय से जो दूसरो का वध किया जाता है वह सङ्कल्पी हिंसा है, इससे गृहस्थ को भी बचना चाहिये। परन्तु कषाय के वश न होकर सासारिक कार्यों के करने में, परोपकार करने में अपनी तथा दूसरो की अन्याय रक्षा करने में जो हिंसा होती है वह आरंभी हिंसा कहलाती

है ऐसी हिंसा के लिये गृहस्थ को सर्वथा मनाई नहीं है। ऐसी हिंसा में हिंसा करने वाले के दिल में दूसरे के साथ कोई द्वेष या शत्रुता का भाव नहीं होता है। दूसरे को वध करने की इच्छा नहीं होती है, उसके भाव तो कार्य व्यवहार करने या दूसरों की रक्षा करने या परोपकार करने के ही होते हैं।

जैनधर्म की अहिंसा यह कदापि नहीं कहती कि अपने शरीर को पुष्ट मत करो, ताकत मत दो, व्यायाम मत करो और उसे सुखादो। हां यह जरूर कहती है कि जिस प्रकार डाका मार कर, दूसरों की सम्पत्ति छीनकर अपना धन बढाना अच्छा नहीं, उसी प्रकार दूसरे जीवों को मारकर उनके शरीर से अपने शरीर को हृष्ट पुष्ट करना अच्छा नहीं है। अपने शरीर को सात्विक भोजन दो, तामसी भोजन मत दो।

जाति में कायरता और नपुन्सकता का कारण अहिंसा कदापि नहीं है। इसका मुख्य कारण ब्रह्मचर्य का पालन न करना, वीर्य का नाश कर देना, बाल्यकाल में विवाह कर देना, मादक पदार्थ का अधिक प्रचार होना, जिसके कारण से लोगों की प्रवृत्ति ऐसी हो गई है कि कषायें अधिक प्रबल होकर विषय वासना की ओर उनका चित्त झुक जाता है और वे ब्रह्मचर्य स्थिर नहीं रख सकते।

यह विचार कि जैनमत की अहिंसा ने लोगों के दिलों को कोमल बना कर उनको कायर, निर्बल और नपुंसक बना दिया, सर्वथा निर्मूल है अहिंसाधर्म का पालन कायर निर्बल और नपुन्सकों से कदापि नहीं हो सकता है। अहिंसा का पालन वही कर सकता है, जिसने अपनी कषायों का शमन

कर लिया हो, और इन्द्रियों का दमन कर लिया हो। अहिंसा धर्म पर वही आरूढ हो सकता है जो शरीर के दासत्व और स्वार्थपरता को एक ओर रख कर, सब जीवों का हृदय से शुभचिन्तक हो, और सब से निःस्वार्थ भ्रातृभाव रखता हो। क्या कायर और निर्बल इन्द्रियों का दमन कर सकते हैं? क्या नपुन्सक शरीर की गुलामी और स्वार्थपरता को छोड़ सकते हैं? कभी नहीं। जैनधर्म की अहिंसा क्षत्रिय से यह नहीं कहती है कि तुम न्याय का युद्ध मत करो, दया और प्रजा की रक्षा मत करो, अन्यायी को दण्ड मत दो, वैश्य को व्यापारादि करने से मना नहीं करती, शूद्र को शिल्प तथा सेवा आदि करने से मना नहीं करती। जैनधर्म की अहिंसा यह अवश्य सब से कहती है कि अपनी जिह्वा के क्षणिक स्वाद के लिये अथवा अपना शरीर को मोटा ताजा करने के लिये दूसरे जीवों का वध करके उनके शरीर को मत खाओ। अपने शौक के लिये दूसरे जानवरों का शिकार मत करो, धर्म की आड में देवी देवताओं के आगे बेचारे निरपराध, मूक प्राणियों का रक्त मत बहाओ, जैनधर्म के तीर्थङ्कर सब चक्रवर्ती क्षत्रिय हुये हैं, उन्होंने राज्य किये हैं। बड़े २ युद्ध किये हैं और उन में विजय पाई है, देश और प्रजा की रक्षा की है। ज्ञान, विज्ञान, कला कौशल की उन्नति की है। हां, यह अवश्य है कि उन्होंने बिचारे मूक प्राणियों का शिकार नहीं किया, उन को मार कर उनके शरीर से पेट नहीं भरा है। धर्म के नाम से खून बहाने की आज्ञा नहीं दी है।

जाति में शारीरिक बल और लौकिक उन्नति के लिये बालकों को कम से कम २१ वर्ष अवस्था तक ब्रह्मचारी रखना

चाहिये। बचपन की शादी को छोड़िये, बच्चों को बुरी सगत और ससार की चमक दमक से बचाइये, मादक पदार्थ जो सैकड़ों रोगों की खान है छुड़ाइये। सादा, जल्दी पचनेवाला पुष्ट भोजन, घी, दूध, मेवे आदि खिलाइये। फिर देखिये जाति में शारीरिक बल, दीर्घायु और हर प्रकार की उन्नति होती जायगी।



(माडर्न रिव्यू में श्रीयुत लीलाधर वत्सल के प्रकाशित लेख का कुछ अंश)

(१) जैनधर्म का शासन अहिंसाधर्म के मानने वाले मतों में सब से प्रथम और उत्कृष्ट है।

(२) जैनधर्म की यह आज्ञा कभी नहीं है, कि जब सबल निर्बल को सतावे या कष्ट पहुंचावे तो उदासीन हो बैठ जाना चाहिये। गृहस्थो को यह कभी भी बरदाश्त नहीं हो सकता और न होना चाहिये। वे पदलालुपियों, आततायी लोगों बदमाशों, विषय लम्पटियों, स्त्रियों के सतीत्व बिगाड़ने वालों, अधर्मियों, लुटेरे और डाकुओं के अन्यायों और अत्याचारों को चुपचाप सहन नहीं कर सकते।

(३) अहिंसा का वास्तव मे यह तात्पर्य है कि गृहस्थों को केवल अपनी मनमोज तथा एक साधारण आवश्यकता के लिये हिंसा नहीं करनी चाहिये और न अपनी दुरेषणाओं का पूर्ति ही के लिये प्रेरणा करनी चाहिये।

(४) जैनियों की अहिंसा व्यक्तिगत स्वाभिमान और सम्मान मे बाधा नहीं डालती और न इससे साहस, वीरता, देशीभाव, देश प्रेम, कुटुम्ब स्नेह तथा जातीय गौरव की हानि होती है।

(५) वास्तव मे जैन अहिंसा का यह आदेश नहीं है कि कोई मनुष्य आत्मरक्षा तथा आत्माभिमान को कायम रखने के लिये न्यायमोदित शक्ति का उपयोग न करे।

(६) जैन अहिंसा अपनी स्त्री, बेटी, बहिन तथा माता की लाज की रक्षा न करने को कभी बाध्य नहीं करती।

(७) जैन अहिंसा केवल निषेधात्मक उपदेश ही नहीं है, अर्थात् किसी को न सताओ, किन्तु उस मे भारी तत्व भरा हुआ है। इस से हम वास्तविक नैतिक शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। दूसरों की सेवा करने के विषय मे यह पक्की हामी भरती है। हम अपनी जिन्दगी काटें, हम को दूसरो से कुछ सरोकार नहीं, इत्यादि स्वार्थमय शिक्षा जैन अहिंसा नहीं देती है। प्रत्युत मानव जाति के जीवन मे परस्पर हिले मिले रहने तथा सहायक बने रहने के लिये हम को उत्तेजित करती है।

(८) जैनधर्म भी जाति किसी विशेष की सर्वोच्चता तथा सर्वोत्कृष्टता को मान्य नहीं समझता है और न जैनधर्म को यह

भी मान्य है कि कोई मनुष्य उचित काम करते हुए भी देवताओं के प्रकोप का शिकार बन जाता है।

(६) मान लिया कि भारतवर्ष से बहुत से सद्गुण उठ गये हैं किन्तु गुणों के उठ जाने में अहिंसा को जैना या अजैनों को कारण बताना निर्मूल है, क्योंकि हम देखते हैं कि भारतवर्ष में अहिंसा धर्म को न मानने वाली कितनी जातियों में उन गुणों का बिल्कुल ही सद्भाव नहीं है।



श्रीमान् महामान्य कमवीर महात्मा गांधी जी ने अहिंसा धर्म के विषय मे लाला लाजपतिराय जी को उत्तर देते हुए "माडन रिव्यू" VOL-20-October, 1916 मे अच्छा प्रकाश डाला है उस लेख का कुछ भाग पाठको के अवलोकनार्थ हिन्दी भावार्थ सहित नीचे दिया जाता है —

Our shastras seem to teach that a man who really practises Ahinsa its fullness has the world at his feet he so affects his surroundings that even the snakes and other venomous reptiles do him no harm This is said to have been the experience of it, Francis of Assisi

In its negative from it means not injuring any living being whether by body or mind I may not therefore hurt the person of any wrong doer, or bear any ill-will to him and so cause him mental suffering this statement does not cover suffering caused to the wrong doer by natural acts of mine which do not proceed from ill-will It therefore does not prevent me from with drawing from his presence a child whom he we shall imagine is about to strike Indeed the proper practice of Ahinsa requires me to withdraw the intended victim from the wrong doer if I am in any way whatsoever the guardian of such a child

In its prositive form Ahinsa means the largest love, the greatest charity If I am a follower of Ahinsa I must love my enemy I must apply the same rules to the wrong doer who is my enemy or stranger to me as I would to my wrong doing Father or son This active Ahinsa necessarily includes truth and fearlessness A man cannot deceive the loved one he does not fear or frighten him or her अभयदान (Gift of life) is the greatest of all gifts A man who gives it in reality disarms all hostility He has paved the way for an honourable understanding and none who is himself subject to fear can best ow that gift He must therefore he himself fear less A man cannot then practice Ahinsa and be a coward at the same time The practice of Ahinsa calls forth the greatest courage It is the most soldierly of soldier's virtues

He is the true soldier who knows how to die and stand his ground in the midst of a hail of bullets such a one was Ambarish who stood his ground without lifting a finger though Durvasa did his worst

Ahinsa truly uhderstood, is in my humble openion a panacea for all evils mundane and extra

mundane. We can never over do it just at present we are not doing it at all Ahinsa does not displace the practice of other virtues but renders their practice imperatively necessary before it can be prctised even in its rudiments Lalaji need not fear the Ahinsa of his Father's faith Mahavir and Budoha were soldiers and so was Folstoy Only they saw deeper and truer into their profession and found the secred of a true happy, honourable and godly life Let us be joint sharers with these teachers and his land of ours wil once more be the abode of Gods

हमारे शास्त्र हमको यह शिक्षा देते हैं कि जो मनुष्य अहिंसा का भली भांति पालन करता है उसके चरणों में सारी दुनिया नमस्कार करतो है, उसका प्रभाव इतना भारी होता है कि उसको सर्प अथवा कोई भी विषैले जानवर हानि नहीं पहुचा सकते हैं। यह सेंट फ्रासिस असीसी का अनुभव है।

इसका एक अर्थ यह है कि किसी प्राणी को शरीर अथवा मन से कष्ट नहीं पहुचाना चाहिये। इस लिये मुझे किसी भी बुरा (अनीति) करने वाले को कष्ट नहीं पहुचाना चाहिये अथवा ऐसा बुरा नहीं कहना चाहिये जिससे उसको मानसिक कष्ट पहुँचे। इस में यह कष्ट नहीं आया है कि जो मेरे स्वाभाविक कार्यों से बिना किसी बुरे विचार के किसी बुरा (अनीति) करने को पहुचे। अस्तु मैं किसी बच्चे को जिस को यह

पीटना चाहता हो उसके सामने से हटाऊं तो यह अहिंसा है यथार्थ में यदि मुझे अहिंसा का सच्चा अभ्यास है तो में उस बच्चे का वास्तव में रक्षक हो हूं और मेरा धर्म है कि अनर्थकारी के सामने से उसके शिकार को हटा दूं।

दूसरा अर्थ अहिंसा का भारी दान है। यदि में अहिंसा का पालन करने वाला हूं तो मुझे मेरे शत्रुओं से प्रेम करना चाहिये। मुझे यही नियम किसी भी बुरा करने वाले के साथ प्रयोग करना चाहिये चाहे वह मेरा शत्रु हो अथवा अनजान हो जो कि में ऐसा करने पर अपने पिता अथवा पुत्र के साथ करता हूं। ऐसी अहिंसा में सत्यता और निर्भयता है। मनुष्य अपने प्रेमी को धोखा नहीं दे सकता है न तो वह उसको भय दिखा सकता है और न स्वयं उससे डरता है। अभयदान सब दानों में से श्रेष्ठ जो सचमुच अभयदान देता है वह अपने शत्रुओं को शस्त्रहीन कर देता है अर्थात उनमें उस को कोई भय नहीं रहता है। उसने अपने मार्ग को प्रतिष्ठित रातों से सुसज्जित बना दिया है। वह मनुष्य जो भयभीत है अभयदान नहीं देसकता है। इस लिये मनुष्य को स्वयं निर्भय होजाना चाहिये। कोई मनुष्य अहिंसा अनुयायी होकर डरपोक नहीं होसकता है। अहिंसा का पालन बहुत बड़े साहस का कार्य है। यह सिपाही के गुणों में एक बहुत बड़ा गुण है।

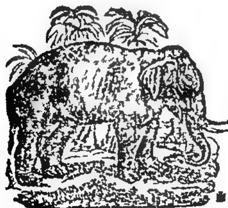
वही सच्चा सिपाही है जो मरना जानता है और रणभूमि में गोलियों की वर्षा के बीच खड़ा रहता है। ऐसा एक अम्बरीष ही था जो कि बिना उंगली उठाये ही रणभूमि में खड़ा रहा यद्यपि दुर्वासा ने उसके लिये बहुत बुरा किया।

यथार्थ में अहिंसा मेरी राय में सब बुरी बातों के लिये सर्वौषधि है हम उसकी पूरी प्रशंसा नहीं कर सकते हैं वास्तव में हम इस काल में कुछ भी नहीं कर रहे हैं। अहिंसा दूसरे गुणों को दूर नहीं करती है किन्तु प्रारम्भ में ही वह दूसरे गुणों को अपने साथ मिलाती है। लालाजी को अहिंसा से डरना न चाहिये जो कि उनके पिता का धर्म है। महावीर और बुद्ध सिपाही थे, और ऐसा ही टोलस्टोय था। उन्होंने अपने कार्य को बड़ी बारीकी और सत्यता से देखा है और उन्होंने उसमें सत्यता का भेद, आनन्द, प्रतिष्ठा और ईश्वरीय जीवन को पाया है। हमें भी उन महान अध्यापकों के साथ भाग लेना चाहिये और ऐसा करने से यह भूमि एक समय पुनः देवताओं के रहने योग्य स्थान हो जावेगी।

उपरोक्त लेखों के अवलोकन से पाठकों को यह तो अच्छी तौर पर ज्ञात हो ही गया होगा। कि अहिंसा कायर धर्म नहीं है, बल्कि वीरत्व प्रधान धर्म है। इसको बड़े से बड़े राजा महाराजा से लेकर गरीब से गरीब मनुष्य तक ग्रहण कर सकते हैं। इसके सिद्धांत सर्वव्यापी होने के कारण किसी को बाधक नहीं हो सकते। हां, इस अहिंसाधर्म के ग्रहण करने वाले को आत्म भोग अवश्य देना पड़ता है उन की आत्मा में उच्च शक्तियों का विकास हो जाता है यहां तक कि वे महान् आत्माएं सर्वज्ञ होकर मोक्ष के अक्षय सुख को प्राप्त कर लेती हैं। यह विशेषता इसी धर्म में पाई जाती है। जिस में यह

यथार्थ मे विचार करेंगे तो अहिंसाधर्म के स्वरूप को पूर्णतया न समझ सकने के कारण स ही देश का अध पतन हुआ है। वर्तमान समय मे जितने भी अवनति के कारण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। यह सब अहिंसाधर्म के अभाव का ही कारण है, अगर यह सर्वोच्च अहिंसाधर्म वास्तविक तौर पर अगीकार कर लिया जाय, तो देश थोडे ही काल मे उन्नति के उच्च शिखर पर पहुच सकता है, हम यह दावे के साथ कह सकते हैं।

हम प्रत्येक बन्धु से आग्रह पूर्वक निवेदन करते ह कि वे हठाग्रह व हृदय की संकीर्णता का छोडकर अपनी आत्मोन्नति के सच्चे मार्ग को ग्रहण करेंगे।



॥ श्री ॥

श्रीमान् चरित्रनायक जी रचित गजल स्तवन इत्यादि अनेक भावपूर्ण वैराग्योत्पादक शिक्षापूर्ण राग रागनियो में अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं कि जिनका परिचय पाठको को पहिले कराया जा चुका है, उन कविताओं में से कुछ शिक्षापूर्ण स्तवनो का संक्षिप्त नमूना पाठको के अवलोकनार्थ नीचे दिया जाता है आशा है पाठक इन्हे पढकर शिक्षा ग्रहण करेंगे।

तर्ज—या हसीना बस मदीना, करबला में तू न जा।

॥ गजल (चौबीस तीर्थंकरो) की स्तुति ॥

दिल चमन तेरा रहे, जिनराज का स्मरण किया। संसार से तिर जायगा, जिनराज का स्मरण किया ॥ टेर ॥ अजगल ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन हैं जबर। नाम लेते पाक हो, जिनराज का स्मरण किया ॥ १ ॥ सुमति, पद्म, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभु, की सेवा करो। आवागमन मिट जायगा, जिनराज का स्मरण किया ॥ २ ॥ सुविधि, शीतल श्रेयांस, वासुपूज्य जग में भानु सम। मिथ्यात्व अंधेरा मिटे, जिनराज का स्मरण किया ॥ ३ ॥ विमल, अनन्त, धर्म, शांतिनाथ नित्य शांति करे। आनन्द ही आनन्द रहे, जिनराज का स्मरण किया ॥ ४ ॥ कुंथु, अर, मल्लि, मुनि सुव्रत सदा हृदय बसे। पूर्ण हो तेरी जिनराज का स्मरण किया ॥ ५ ॥ नेमि, नेमी, प्रभु पार्श्व महावीर सार है। सुरनर नमे कर के, जिनराज का स्मरण किया ॥ ६ ॥ इन्होंने अवतार ले धर्म को प्रकट किया। चौथमल होवे सुखी, जिनराज का स्मरण किया ॥ ७ ॥

॥ गजल सत्संग की ॥

लाखो पापी तिर गए, सत्संग के प्रताप से। छिन में बेड़ा पार है, सत्सङ्ग के परताप से ॥ टेर ॥ सत्सङ्ग का दरिया भरा, कोई न्हाले इस में आन के। कट जाय तन के पाप सब सत्सङ्ग के परताप से ॥ १ ॥ लोह का सुवर्ण बने, पारस के परसंग से। रुट की भमरी होती है सत्सङ्ग के परताप से ॥ २ ॥ राजा परदेशी हुवा, कर खून म रहते भरे। उपदेश सुन ज्ञानी हुवा, सत्सङ्ग के परताप से ॥ ३ ॥ सयती, राजा शिकारी, हिरन के मारा था तार। राज्य तज साधू हुवा, सत्सङ्ग के परताप से ॥ ४ ॥ अर्जुन माली कारने, मनुष्य की हत्या करी। छ मास में मुक्ति गया, सत्सग क परताप से। ॥ ५ ॥ इलायची एक चोर था, श्रेणिक नामा भूपति। कार्य सिद्ध उनका हुवा, सत्सङ्ग के प्रताप से ॥ ६ ॥ सत्सङ्ग की महिमा बड़ी, है दोन दुनिया बीच में। चौथमल कहैं हो भला सत्सङ्ग के परताप से ॥ ७ ॥

गजल नवयुवकों की।

उठो ब्रादर कस कमर, तुम धर्म की रक्षा करो। श्रीवीर के तुम पुत्र होकर, गीदड़ो से क्यों डरो ॥ टेर ॥ दुर्गति पड़ते जो प्राणी, को धर्म का आधार है। यह स्वर्ग मुक्ति में रखे, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ १ ॥ धर्मी पुरुष को देख पापी, गज श्वान वत् निंदा करे। हो सिंह मुआफिक जवाब दो, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ २ ॥ धन को देकर तन रखो, तन देके रखो लाज को। धन लाज तन अर्पण करो तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ३ ॥ माता पिता भाई जवाई, दोस्त फिरे तो डर नहीं। प्रचार धर्म से मत हटो, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ४ ॥

धैर्य का धारो धनुष्य, और तीर मारो तर्क का। कुयुक्ति का खंडन करो तुम धर्म को रक्षा करो ॥ ५ ॥ धर्मसिंह मुनि लवजी ऋषि, लोकाशाह सङ्कट सहा। धर्म को फैला दिया, तुम धर्म को रक्षा करो ॥ ६ ॥ गुरू के परसाद से, कहे चौथमल उत्साहियों। मत हटो पीछे कभी, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ७ ॥

गजल नौजवानों के जागने को।

अय जवानो चेतो जल्दी, करके कुछ दिखलाइये। उठो अब बांधो कमर तुम, करके कुछ दिखलाइयो ॥ टेर ॥ किस नींद में साते पडे क्या दिल में रखा सोच के। बेकार वक्त मत गमावो, करके कुछ दिखलाइयो ॥ १ ॥ यश का डका बजा, इस भूमि का रोशन करो। ऐश में भूलो मती, तुम करके कुछ दिखलाइयो ॥ २ ॥ हिम्मत बिना दौलत नहीं, दौलत बिना ताकत कहा। फिर मद की हुर्मत कहा, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ३ ॥ हिकारत की नजर से सब देखते तुम को सही। मरना तुम्हें इस से बहतर, करके कुछ दिख लाइयो ॥ ४ ॥ जापान यूरोप देश ने, कीनी तरक्की किस कदर। वे भी तो इन्सान हैं, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ५ ॥ उठा के गफलत का पडदा, सुधारलो हालत सभी। इन्सान को मुश्किल नहीं, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ६ ॥ जो इरादा तुम करो तो, बीच में छोडो मती। मजबूत रहो निज कौल पर, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ७ ॥ नीति, रीति, शांति क्षमा, कर्त्तव्य में मशगूल रहो। खुद और का चाहो भला, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ८ ॥ काम अपना जो

घवराना, लोकों से डरना नहीं। उत्साह से बढते चलो, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ९ ॥ सन्तान का चाहो भला, रंडी नचाना छोडदो। वृद्ध, बाल विवाह बन्द करो, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ १० ॥ फिजूल खर्ची दो मिटा मुह फूट का काला करो। धर्म जाति की उन्नति करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ११ ॥ दुनिया अव्वल सुधर जा तो, दीन कोई मुश्किल नहीं, । चौथमल कहे इस लिये, करके तो कुछ दिखलाइयो॥१२॥

गजल नेक नसीहत की ।

दिल सताना नहीं रवा, यह खुदा का फरमान है। खास इबादत के लिये, पैदा हुआ इन्सान है ॥ टेर ॥ दिल बडी है, चीज जहां में खोल के देखो चशम। दिल गया तो क्या रहा मुर्दा तो वह स्मशान है ॥ १ ॥ जुल्म जो करता उसे, हाकिम भी यहा पर दे सजा। मुआफ हरगिज होता नहीं, कानून के दरम्यान है ॥ २ ॥ जैसे अपनी जान का, आराम ता प्यारा लगे। ऐसे गैरों को समझ तू, क्यों बना नादान है ॥ ३ ॥ नेकी का बदल नेक है, यह कुरान में लिखा सफा। मत बदी पर कस कमर, तू क्यों हुआ बे इमाम है ॥ ४ ॥ बे गुस्तगु दोजख में, गिरफ्तार ता होगा सही। गिन्ती वहा होती नहीं, चाहे राजा या दीवान है ॥ ५ ॥ बैठकर तू तख्त पर, गरीबों की तेने नहीं सुनी। फरीश्ते वहाँ पीटते होता बडा हैरान है ॥ ६ ॥ गले कातिल के वहाँ, फेरायगा लके छुरा। इन्सान होके न गिने यह भी ता काइ जान है ॥ ७ ॥ रहम को लाके जरा तू सख्त दिल को छोड दे। चौथमल कहे हा भला, जो इस तरफ कुछ ध्यान है ॥ ८ ॥

गजल क्रोध (गुस्सा निषेध पर)

आदत तेरी गई बिगड़, इस क्रोध के परताप से। अजीजो को बुरा लगे, इस क्रोध के परताप से ॥ टेर ॥ दुश्मन से बढ कर है यही, मोहब्बत तुड़ावे मिनिट में। सर्प मुआफिक डरे तुझ से, क्रोध के परताप से ॥ १ ॥ सलवट पडे मुह पर तुरत, कम्पे मानिन्द जिन्द के। चश्म भी कैसे बने, इस क्रोध के परताप से ॥ २ ॥ जहर या फांसी को खा, पानी में पड़ कई मरगये। जतन कर गये तर्क कई, इसक्रोध के परताप से ॥ ३ ॥ बाल बच्चों को भी माता, क्रोध के वश फैंकदे। कुछ सूझता उस मे नहीं, इस क्रोध के परताप से ॥ ४ ॥ चंडरुद्र आचार्य की, मिसाल पर करिये निगाह। सर्प चडकोसा हुवा, इस क्रोध के परताप से ॥ ५ ॥ दिल भी काबू न रहे, नुकसान कर लेता वही। धर्म कर्म भी न गिने, इस क्रोध के परताप से ॥ ६ ॥ खुद जल पर को जलावे, विवेक की हानि करे। सूख जावे खून उसका, क्रोध के परताप से ॥ ७ ॥ जिन के लिये हुवना बुरा, विराग को जैसे हुवा। ज्यों इन्सान कम हक में समझ, इस क्रोधके परताप से ॥ ८ ॥ शैतान का फरजन्द यह और अहिंसा का दोस्त है। बदकार का धाबा लगे, इस क्रोध के परताप से ॥ ९ ॥ इबादत फाका कसी, सब खाक में देवे मिला। दोजख का मुह देखेगा, इस क्रोधके परताप से ॥१०॥ चाण्डाल से बदतर यही, गुस्सा बड़ा हराम है। कहे चौथमल क्या हो भला, इस क्रोधके परतापसे॥११॥

गजल गरूर (मान) निषेध पर ।

सदा यहां रहना नहीं तू, मान करना छोड़दे। शहनशाह भी न रहे, तू मान करना छोड़दे ॥ टेर ॥ जैसे खिले हैं फूल

गुल्शन में, अजीजों देखलो । आखिर तो वह कुम्हलायगा, तूं मान करना छोडदे ॥ १ ॥ नूर से वे पुर थे, ल।खे। उठाते हुक्म को । सो खाक में वे मिल गये, तू मान करना छोडदे ॥ २ ॥ परशु ने क्षत्री हने, शम्भूम ने मारा उसे । शम्भूम भी यहा न रहा, तू मान करना छोडदे ॥ ३ ॥ कस जरासिंध को, श्री कृष्ण ने मारा सही । फिर जर्द ने उन को हना, तू मान करना छोडदे ॥ ४ ॥ रावण से इन्द्र दबा, लक्ष्मण ने रावण को हना। न वह रहा न वह रहा, तू मान करना छोडदे ॥ ५ ॥ रब्ब का हुक्म माना नहीं, अजाजिल काफिर बन गया । शेतान सब उसको कहे, तूं मान करना छोडदे ॥ ६ ॥ गुरु के परसाद से कहे, चौथमल प्यारे सुनो । अजिजी सब में बडी, तू मान करना छोडदे ॥ ७ ॥

गजल दगाबाजी (कपट) निषेध पर ।

जीना तुझे यहा चार दिन तू दगा करना छोडदे । पाक रख दिल को सदा, तू दगा करना छोडदे ॥ टेक ॥ दगा कहो या कपट जाल, फरेब या तिरघट कहो । चोता चोर कथानवत, तू दगा करना छोडदे ॥ १ ॥ चलते उठने देखते, बोलते हसते दगा । तोलने और नापने में, दगा करना छोडदे ॥ २ ॥ माता कहीं बहने कहीं, पर नार को छलता फिरे । क्यों जाल कर जाहिल बने, तू दगा करना छोडदे ॥ ३ ॥ मर्द को औरत बने, औरत का ना पुरुष हो । लख चौरासी योनि भुगते, दगा करना छोडदे ॥ ४ ॥ दगा से आ पोतना ने, कृष्ण को लिया गोद में । नतीजा उसको मिला, तू दगा करना छोडदे ॥ ५ ॥ कौरवो ने, पाडवों से, दगा कर जूरा रमी । हार कौरवो की

हुई, तू दगा करना छोड़दे ॥ ६ ॥ कुरान पुरान में है मना, कानून मे लिखी सजा। महावीर का फरमान है, तू दगा करना छोड़दे ॥ ७ ॥ शिकारी करके दगा, जीवों की हिंसा घन करे। मजार और बुग की तरह, तू दगा करना छोड़दे ॥ ८ ॥ इज्जत में आता फरक, भरोसा कोई न गिने। मित्रता भी टूट जाती, दगा करना छोड़दे ॥ ९ ॥ क्या लाया लेजायगा, तू गौर कर इस पर जरा। चौथमल कहे सरल हो, तू दगा करना छोड़दे ॥ १० ॥

गजल सबर (संतोष) की।

सबर नर को आती नहीं, इस लोभ के परताप से। लाखों मनुष्य मारे गये, इस लोभ के परताप से ॥ टेर ॥ पाप का वालिद यहा और जुल्म का सरताज है। वकील दोजख का बने, इस लोभ के परताप से ॥ १ ॥ अगर शाहनशाह बने सर्व मुल्क तावे में रहे। तो भी तृष्णा न मिटे, इस लोभ के परताप से ॥ २ ॥ जाल मे पक्षी पड़े और मच्छी काटे से मरे। चोर जावे जेल मे, इस लोभ के परताप से ॥ ३ ॥ ख्वाब में देखा न उसको, रोगी क्यों न नीच हो। गुलामी उसकी करें, इस लोभ के परताप से ॥ ४ ॥ काका भतीजा भाई भाई, वालिद या बेटा सज्जन। घोच काटे के लड़े, इस लोभ के परताप से ॥ ५ ॥ शम्भूम चक्रवर्ती राजा सेठ सागर को सुनो। दरियाव दोनों मरे इस लोभ के परताप से ॥ ६ ॥ जहां के कुल माल का मालिक बने तो कुछ नहीं। प्यारी तज परदेश जा, इस लोभ के परताप से ॥ ७ ॥ बाल बच्चे बेच दे, दुख दुर्गुणों की खान है। सम्यक्त्व भी रहता नहीं, इस लोभ के

परताप से ॥ ८ ॥ कहे चोथमल सत्गुरु वचन, सन्तोष इसकी है दवा । और नसीहत नहीं लगे, इस लोभ के परताप से ॥९॥

गजल कुव्यसन निषेध पर

लाखों व्यसनी मर गये, कुव्यसन के परसंग से । अय अजीजो बाज आओ, कुव्यसन के परसंग से ॥ टेर ॥ प्रथम जूना है बुरा, इज्जत धन रहता कहां । महाराज नल बनवास गये, कुव्यसन के परसंग से ॥ १ ॥ मांस भक्षण जो करे, उसके दया रहती नहीं । मनुस्मृति में है लिखा, कुव्यसन के परसंग से ॥ २ ॥ शराब यह खराब है, इन्सान को पागल करे । यादवो का क्या हुआ कुव्यसन के परसंग से ॥ ३॥ रण्डीबाजी है मना तुम से सुता उन के हुए । दामाद की गिनती करे, कुव्यसन के परसंग से ॥ ४ ४ ॥ जीव सताना नहीं रवा, क्यों कत्ल कर कातिल बने । दोजख का मिजमान हो, कुव्यसन के परसंग से ॥ ५ ॥ माल जो पर का चुराते, यहां भी हाकिम दे सजा । आराम वह पाता नहीं, कुव्यसन के परसङ्ग से ॥ ६ ॥ इश्क बुरा पर नार का, दिल में जरा तो गौर कर । कुछ नफा मिलता नहीं, कुव्यसन के परसङ्ग से ॥ ७ ॥ गांजा, चण्डू, अफीम, और भङ्ग तमाखू छोड दे । चौथमल कहे नहीं भला, कुव्यसन के परसङ्ग से ॥ ८ ॥

गजल द्यूत (जूवा) निषेध पर ।

कदर जो चाहे दिला तू, जूवाबाजी छोड दे । सर्व व्यसन (बदकार) का सरदार है, तू जूवाबाजी छोड दे ॥ टेर ॥

इश्क इस का है बुरा, नापाक दिल रहता सदा। रंजो गम की खान है तू जूवावाज़ी छोड दे ॥ १ ॥ द्रौपदी के चीर छीने पाण्डवो के देखते। राज्य भी गया हाथ से, तू जूवावाज़ी छोड दे ॥ २ ॥ महाराजा नल जैसे वनवास में फिरते फिरे। और तो क्या चीज हे तू, जूवावाजी छोड दे ॥ ३ ॥ अक्ल तेरी गुम करे, सत्य धर्म से करती जुदा। धनवान को निर्धन करे, तू जूवावाजी छोड दे ॥ ४ ॥ इल्म हुनर लिहाज जावे, झूठ चोरी दे सिखा। हुरमत भी इस में न रहे, तू जूवावाजी छोड दे ॥ ५ ॥ मकान और दुकान जेवर, रखे गिरवे जायके। मा बाप जोरू नहीं कहे, तू जूवावाजी छोड दे ॥ ६ ॥ कई बावे बन गये, कई कम उमर में मर गये। फायदा कुछ भी नहीं, तू जूवावाजी छोडदे ॥ ७ ॥ दुनिया का रहे नहीं दीन का, गुरु का रहे नहीं पीर का। नर जन्म भी जावे निफल, तू जूवावाजी छोडदे ॥ ८ ॥ गुरु के परसाद से, कहे चौथमल सुन तो जरा मान ले आराम होगा, तू जूवावाजी छोड दे ॥ ९ ॥

गज़ल गोश्त (मांस) निषेध पर।

सख़्त दिल हो जाएगा तू, गोश्त खाना छोड दे। रहम फिर रहता नहीं तू, गोश्त खाना छोड दे ॥ टेर ॥ जो रहम दिल में न रहे, तो रहेमान फिर रहता है कब। वह वशर फिर कुछ नहीं, तू गोश्त खाना छोड दे ॥ १ ॥ जिस चीज से नफरत करे, वही गोश्त की पैदाश है। वह पाक फिर कैसे हुआ तू गोश्त खाना छोड दे ॥ २ ॥ गौ, बकरे, बैल, भैंसे, लाखों ही कई कट गए। दूध, दही, महगा हुआ, तू गोश्त खाना छोड

दे ॥ ३ ॥ दूध मे ताकत बडी, वह गोश्त में है भी नही। पूछले कोई डाक्टरों से, गोश्त खाना छोडदे ॥ ४ ॥ गोश्तखोर हैवान का चिन्ह, मिलता नहीं इन्सान में। नेक स्वादो मत बने, तू गोश्त खाना छोड दे ॥ ५ ॥ कुरान के अन्दर लिखा, खुराक आदम के लिये, पेदा किया गेहू मेवा तू गोश्त खाना छोडदे॥६॥ कत्ल हैवानात के बिना, गोश्त कहो कैसे मिले। कातिल निजात पाता नहीं, तू गोश्त खाना छोडदे ॥७॥ जेन सूत्रों बीच में, महावीर का फरमान हे। मास आहारी नर्क जावे तू गोश्त खाना छोड दे ॥ ८ ॥ जिस का मास खाता यहा, वह उस को यहा पर खायगा। मनु ऋषि भी कह गये, तू गोश्त खाना छोड दे ॥ ६ ॥ नफस हरगिज नहीं मरे, फिर इबादत होती कहा। चौथमलकी मान नसीहत, तू गोश्त खाना छोड दे॥१०॥

गजल शराब निषेध पर।

अकल भ्रष्ट होती पलक में, शराब के परताप से।

लाखों घर गारत हुये, शराब के परताप से ॥ टेर ॥ शराब शोक महा बुरा, खुद की खबर रहती नहीं। जाना कहा जावे कहा, शराब के परताप से ॥ १ ॥ इज्जत ओर दानिशमदी, जिस पर दे पानी फिरा। धनवान कई निर्धन बने, शराब के परताप से ॥ २ ॥ बकते २ हस पडे, और चौंक के फिर रो उठे। बेहोश हो हथियार ले, शराब के परताप से ॥ ३ ॥ चलते २ गिर पडे, कपडा हटा गिलिज्ज बने। मक्खियें भिनका करें, शराब के परताप से ॥ ४ ॥ जेवर को लेवे खोल लुच्चे, ले जेब से पैसे निकाल। कुत्ते देते मूत मुह पर शराब के परताप स ॥ ५ ॥

इन्साफ ही करते अउल जो, हजार की रक्षा करे। खुद की रक्षा नहीं बने, शराब के परताप से ॥ ६ ॥ कम उमर म मर गये, कई राज्य राजो का गया। यादवो का पैचा हुआ, शराब के परताप से ॥ ७ ॥ नशे से पागल बने, पुलिस भी लेवे पकड़ क़ानून से मिलती सज़ा, शराब के परताप से ॥ ८ ॥ आठआने वह कमावे, खर्च रुपये का करे। चोरी को फिर वह करे, शराब के परताप से ॥ ६ ॥ जैन वैष्णव मुसलमान, अञ्जील में भी है मना। कई रोगी बन गये, शराब के परताप स १० ॥ चौथमल कहै छोड दे तू, मान ले प्यारे अजीज। आराम कोई पाता नहीं, शराब के परताप से ॥ ११ ॥

गजल रण्डीबाजी के निषेध पर।

अय जवानो मानो मेरी, रण्डीबाजी छोड़ दो। कपट का भन्डार है, तुम रण्डीबाजी छोड दे। ॥ टेर ॥ पौशाक उम्दा जिस्म पर सज, पान से मुह को रचा। टेढी निगाह से देखती, तुम रण्डीबाजी छोड दे। ॥ १ ॥ धन होवे किस कदर, इस चिन्ता में मशगूल रहे। मतलब की पूरी यार है, तुम रण्डीबाजी छोड दे। ॥२॥ काम अन्ध पुरुष हो, मकडी के माफिक फासले। गुलाम अपना वह बनावे तुम रन्डीबाजी छोड दे। ॥ ३ ॥ विषय अन्ध हो के सभी, वह माल घर का सोंप दे। मतलब बिना आने न दे, तुम रन्डीबाजी छोड दे। ॥ ४ ॥ इस की सोहबत में बडो का, बड़प्पन रहता नहीं। पानी फिरावे आबरू पर, तुम रन्डीबाजी छोड दे। ॥ ५ ॥ सुजाक, गर्मी से सडे, मु ह पर दमक रहती नहीं। कमजोर हो कई मर गये, तुम रन्डीबाजी

छोड दे ॥ ६ ॥ भरोसा कोई नहीं गिने, धम कम का होता है नाश । चौथमल कहे अय रफीकों, रन्डीबाजी छोड दे ।॥७॥

गजल शिकार निषेध पर ।

स्याह दिल हो जायगा, शिकार करना छोड दे ॥ टेर ॥

क्यो जुल्म कर जालिम बने, पापा से घट को क्यो भरे । दिन चार का जीना तुझे, शिकार करना छोड दे ॥ १ ॥ सूअर साभर रोज हिरन, खरगोश जङ्गल के पशु । इन्सान को देखी डरे, शिकार करना छोड दे ॥ २ ॥ तेरा तो एक खेल है, और उनके तो जाते हैं प्राण । मत खून का प्यासा बने, शिकार करना छोड दे ॥ ३ ॥ बेकसूरों को सताये खौफ तू लाता नहीं बदला फिर देना पडे, शिकार करना छोड दे ॥ ४ ॥ जेसी प्यारी जान तुझ को, ऐसी गेरों की भी जान । रहम ला दिल में जरा, शिकार करना छोड दे ॥ ५ ॥ जितने पशु के बाल हैं, उतने जन्म कातिल मरे । मनुस्मृति में देख ले, शिकार करना छोड दे ॥ ६ ॥ हैवान आपस में लडाना, निशाना लगाना जान का । हदीस में लिखा मना, शिकार करना छोड दे ॥ ७ ॥ गर्भवती पशु हिरनी को, श्रेणिक ने मारा तीर से । वह नर्क के अन्दर गया, शिकार करना छोड दे ॥ ८ ॥ खून से होती नरक, श्रीवीर का फरमान है । चौथमल कहे समझ ले, शिकार करना छोड दे ॥ ६ ॥

गजल चोरी निषेध पर ।

इज्जत तेरी घट जायगी, तू चोरी करना छोड दे । मान ले

नसीहत मेरी, तू चोरी करना छोड दे ॥ टेर ॥ माल देखी गैर का, दिल चोर का आशिक हुवे। साफ नियत रहती नहीं, तू चोरी करना छोड दे ॥ १ ॥ निगाह उसकी चौतरफ, रहती है मानिन्द चील के। प्रतीत कोई ना गिने, तू चोरी करना छोड दे ॥ २॥ पुलिस से छिपता रहे, एक दिन तो पकडा जायगा। बैंत से मारे तुझे, तू चोरी करना छोड दे ॥ ३ ॥ नापने में तोलने में, चोरी महसूल की करे। रिशवत भी खाना है यही, तू चोरी करना छोड दे ॥ ४ ॥ हराम के पैसों से कभी आराम तो मिलता नहीं। दीन दुनिया में मना, तू चोरी करना छोड दे ॥ ५ ॥ नुकसान गर किस के करे, तो आह लगती है जरूर। ख़ाक में मिल जायगा, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ ६ ॥ सबर कर पर माल से हक बात पर कायम रहे। चौथमल कहता तुझे, तू चोरी करना छोड दे ॥ ७ ॥

गज़ल परनार निषेध पर।

लाखो कामी पिट चुके, परनार के परसग से। मुनिराज कहते सब बचो, परनार के परसग से ॥ टेर ॥ दीपक की लौ ऊपर पड पतङ्ग मरता है सही। ऐसे कामी कट मरे परनार के परसग से ॥ १ ॥ परनार का जो हुस्न है, मानो अग्नि का सा कुन्ड। तन धन सब का होमते, परनार के परसग से ॥२॥ झूठे निवाले पर लुभाना, इन्सान को लाजिम नहीं। सुजाक गर्मी मे सडे, परनार के परसग से ॥ ३ ॥ चार सौ सत्ताणुवें, कानून में लिखा दफा। सज़ा हाकिम से मिले, परनार के परसग से ॥ ४ ॥ जैन सूत्रों में मना, मनुस्मृति में भी देख लो।

कुरान वाइविल में लिखा, परनार के परसग से ॥ ५ ॥ रावण कीचक मारे गये, द्रौपदी सिया के वास्ते । मणीरथ मर नर्क र या, परनार के परसग से ॥ ६ ॥ जहर बुझी तलवार से, अथन मुल्जिम यदकार ने । हजरत अली पर वहार की, परनार के परसङ्ग से ॥ ७ ॥ कुत्ते को कुत्ता काटता, कत्ल नर नर को करे । पल में मुहब्बत टूटती, परनार के परसङ्ग से ॥ ८ ॥ किस लिये पैदा हुआ, अब ये क्या कुछ सोच तू । कहे चौथमल अब समझ कर, परनार के परसङ्ग से ॥ ९ ॥

गज़ल (बद सोहबत निषेध पर)

अगर चाहे आराम तो जाहिल की सोहबत छोड दे मान ले नसीहत मेरी जाहिल की सोहबत छोड दे ॥ टेर ॥ अगर तू अक्लमन्द है, होशियार जो है दिला । भूल के अख्त्यार मत कर, जाहिल की सोहबत छोड दे ॥ १ ॥ जाहिल से मिलता मत रहे मानिंद शक्कर शीर के । भाग मुआफिक तीर के, जाहिल की सोहबत छोड दे ॥ २ ॥ दुशमन भी अक्लमन्द बेहतर, होवे जाहिल दोस्त के । परहेजगारी है भली, जाहिल की सोहबत छोड दे ॥ ३ ॥ फेलबद के जाहिलों से, नेकी तो मिलती नहीं । सिवा कोल बद के नहीं सुने, जाहिल की सोहबत छोड दे ४ ॥ रहम दिल का पाकपन, इबादत की तर्क हो । ईमान भी जावे बिगड, जाहिल की सोहबत छोड़ दे ॥ ५ ॥ जाहिल तो आखिर ए दिला, दोजख के अन्दर जायगा, नेक आकबत कम बने, जाहिल की सोहबत छोडदे ॥ ६ ॥ नशा पीना जुल्म करना, लडना लेना नींद का । गरूर आदत जाहिले जाहिल की सोहबत छोड़ दे ॥ ७ ॥ जाहिलपन की दवा सिवा

लुकमान के घर में नहीं । सिविल सर्जन के हाथ क्या , जाहिल की सोहबत छोड दे ॥ ८ ॥ गुरु के परसाद से कहै चौथमल तू कर निगाह । आलिम की सोहबत कर सदा जालिम की सोहबत छोड दे ॥ ६ ॥

गजल (कुसप) फूट निषेध पर ।

लाखों घर गारत हुए, इस फूट के परताप से । सम्प गया इस देश से, इस फूट के परताप से ॥ टेर ॥ इल्म हुनर ईमान-इज्जत, हमदर्दी गर्द कर दिया । हिंसक धूर्त कामी बने, इस फूट के परताप से ॥ १ ॥ जहां सम्प वहीं सम्पत्ति है, जहां फूट है वहां सम्प कहां । अजब लीला होगई, इस फूट के परताप से ॥ २ ॥ मोहताज दौलतमन्द हुए, कई राज्य राजों का गया । इंडिया बरबाद हुआ, इस फूट के परताप से ॥ ३ ॥ पडी फूट रावण के घर, भाई विभीषण जुदा हुआ । खाक राक्षस होगये, इस फूट के परताप से ॥ ४ ॥ भाई कौरव पाण्डवों में, युद्ध कराया फूट ने । वहल कुंवर कौणक लडे, इस फूट के परताप से ॥ ५ ॥ पृथ्वीराज चौहान जयचन्द्र के लडाई होगई । आ राज्य यवनों ने किया, इस फूट के परताप से ॥ ६ ॥ फूट जाति में घुसी, लूट दुश्मन की मचा । टूट गए सब कायदे, इस फूट के परताप से ॥ ७ ॥ सम्प में जो फायदे कई जानते इन्सान हैं । मगर खुदाई नहीं मिटे, इस फूट के परताप से ॥ ८ ॥ एक दूजे से मिले तो, आंख होती है गरम । आपस में राय लेते नहीं इस फूट के परताप से ॥ ६ ॥ सर्व मुल्कों का कभी, सिरताज, भारत होगा फिर । अय अजीजो बाज आओ, फूट के परताप से ॥ १० ॥ चौथमल कहे नव जवानों, सम्प जल्दी

से करो । धन धर्म की कथ रक्षा हो, इस फूट के परताप से ॥ ११ ॥

गजल खामोश विषय पर ।

महावीर का फरमान है, खामोश बेहतर चीज है । दिल पाक रखने के लिये, खामोश बेहतर चीज है ॥ टेर ॥ शांति कहो चाहे क्षमा, और गम भी इसका नाम है । दोस्त जहा तेरा बने, खामोश बेहतर चीज है ॥ १ ॥ जोश खाके बिजली भी, दरियाव के अन्दर पडे । नुकसान कुछ होता नहीं, खामोश बेहतर चीज है ॥ २ ॥ खामोश खञ्जर देख कर दुश्मन की ताकत नहिं चले । बिन काष्ट के पावक जैसे, खामोश बेहतर चीज है ॥ ३ ॥ तप में ऋषि युद्ध में हरी, श्रेष्ठ विपमण दान में । अरिहन्त की यह वीरता, खामोश बेहतर चीज है ॥ ४ ॥ खामोश कर श्रीराम ने, बनवास का रास्ता लिया । गज सुकमाल ने केवल लिया, खामोश बेहतर चीज है ॥ ५ ॥ खामोश से राजा परदेशी, स्वर्ग के अन्दर गया । खधक मुनि मुक्ति गये, खामोश बेहतर चीज है ॥ ६ ॥ ज्ञान ध्यान और तप दया, यह सर्व गुण की खान है । तारीफ फैले मुल्क में, खामोश बेहतर चीज है ॥ ७ ॥ पाप होवे भस्म जैसे, शीत में सब्जी जले । चौथमल कहे ए दिला, खामोश बेहतर चीज है ॥ ८ ॥

न २१ तर्ज-गजल इलाजे दर्द तुमसे मसीहा हो नहीं सकता

कभी जालिम फला फूला, कहीं हमने न पाया है, मगर मुशकिल से मरते तो निगाहों मे कह आया है ॥ टेर ॥ फल गुल ने दुरहा सरप जो शासन जमाया है । देखलो आज पैरो

के तले, जाके दबाया हे ॥ १ ॥ कर कैद गेरो को, खूब जिन्हें सताया है। वहीं कैदी बनी जा में, खास दण्डा हिलाया है ॥२॥ देने और को फासी, समा जिसने मगाया है। उसी फासो से जा उसने प्राण खुद का गमाया है ॥३॥ टिकते पैर नहिं भू पै, जो ऐसा मान छाया हे । मिले मिट्टी मे जाके वे, निशा बाकी न रहाया है ॥ ४ ॥ शूल के शूल फूल के फूल, यह हरने बताया है । चौथमल कहै बोए बबूल, आम कहो किसने खाया है ॥ ५ ॥

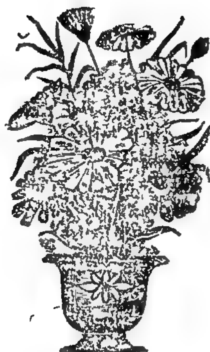
नं. ७ तर्ज—बहर तवील ।

याही की याही की बात करे सब, आगेका करते जिकर ही नहीं । आगे का सामा बिना अप दिला, तेरा होने का हरगिज गुजर ही नहीं ॥ टेर ॥ मने लाखो का माल कमायलिया, मैंने बाग मे मेहल झुकाय दिया । मैंने क्रोड़पति घर व्याव, किया, मेरे जेसा जहा मे बशरही नहीं ॥ ॥ मैंने कैसा सजाया है यह गुलबदन, मैं तो देखू जिस दम ले दर्पण । मेरा दिल हो जाता हे भरके चमन मेरे सामने तू किस क़दरही नहीं ॥ २ ॥ मैं जो कुछ कहूँ मेरा माने वचन मेरे कितनेही न्याती औरकितने सज्जन । मैंआलिम में फाज़िल मैंजानू हरफन, मेरे बिन किसकी होतीकदर ही नहीं ॥ ३ ॥ में बहादुर हाकिम म राजा सही, मेरे धन है इतना कहीं भी नहीं । मैंने जीते हैं जहा तहा जग कई, मेरा जाता निशाना टलही नहीं ॥ ४ ॥ ए गाफिल तू गफलत में सोता पडा ख्याली बातो मे लो क्या हैगा धरा । तैने अपना फरज अदा न करा, चौथमल कहे वहा चाचो का घर ही नहीं ॥ ५ ॥

गजल उपदेशी।

आकबत के वास्ते, कहना हमारा फर्ज है। मर्जी तुम्हारी मानना, कहना हमारा खर्ज है ॥ टेर ॥ मुसाफिर खाने मे आकर, गरूर करना छोडदे । नेकी करले ए सनम, कहना हमारा फर्ज है ॥ १ ॥ माता पिता भाई भतीजा साथ मे जाता नहीं। तो फिर मोहब्बत क्यो करे, कहना हमारा फर्ज है ॥२॥ किसका वसीला है यहा, दिल में जरा तो गौर कर। तू याद में उसके रह, कहना हमारा फर्ज है ॥ ३ ॥ ना रास्त और बद फैल में, यो जिन्दगी करता तवा । ना बदस्त से तू दूर हो, कहना हमारा फर्ज है ॥ ४ ॥ अदब करले तू बडो का, अहसान कर कोई और पर। रहम दिलमें लाजरा, कहना हमारा फर्ज है ॥ ५ ॥ देता नसीहत चौथमल, करले इबादत जिस्र से, चार दिन का हुश्न है, कहना हमारा फर्ज है ॥ ६ ॥ इति ॥





* ॐ *

खुशखबर ! खुश खबर !! जरूर पढ़िये !!!

शीघ्रता कीजिये ! ज़ाहिर खबर शीघ्रता कीजिये !!

अच्छे २ विद्वान् मुनिवरो हस्त लिखित संशोधित जैनागम संस्कृत टीका टिप्पणी सहित जैन सूत्र जैन तत्वादि पुस्तकें उपदेश भरी सुमधुर गजलें स्तवनो की किताबें आदि नाना भांति के ज्ञानान्वित मनोहर पुष्प इस समिति द्वारा प्रकाशित होते रहेंगे और कुछ नीचे लिखे पुष्प प्रकाशित हो चुके हैं। इसकी आय इसी ज्ञान वृद्धि मे ही व्यय की जाया करेगी। यह प्रतिज्ञा के साथ समिति पाठको से निवेदन करती है।

१—दशवै कालिक सूत्र मूल पाठ पत्राकार बढ़िया कागज ≋)
२—नमिरायजी ,, ,, ,, ,, ,, ~)
३—पुच्छिसुण ,, ,, ,, ,, ,,)॥
४—सुख विपाक ,, ,, ,, ,, ,, ≠)॥
५—महावीर स्तोत्र (स्तुति) अर्थ सहित पुस्तकाकार ।~)
६—सीता वनवास प्रिय सुबोधिनी व्याख्या समेत ।≠)
७—राम मुद्रिका ~)॥ ८ लावनी संग्रह भाग १ ~)
९—गुरु गुण महिमा ~) १०—जैन गीत संग्रह ≠) ११—जैन सुख चैन बहार भाग १ ≠) भाग २ ≋) भाग ३ ≋)॥ भाग ४ ≋)॥ भाग ५ ~)॥ १२ श्री जैन ज्ञान बहार ≋) १३—श्री जैन गजलगुल चमन बहार ~ १४—सीता वनवास (मूल) ~) १५—स्त्री शिक्षा भजन माला)॥ १६ मुखवस्त्रिका निर्णय)॥॥ १७—जैन स्तवन मनहर माला भाग १ ≋)॥ १८—जैन

मनोहर माला भाग २ ≠) १९—श्री जैन मन मोहन माला ~) २०—सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र ।~) २१—चम्पक चरित्र अमूल्य २२—धन्ना चरित्र अमूल्य २३—अनुपूर्वी ~)

आदि उपरोक्त पुस्तकें निम्नोक्त पते से मंगवालें डाक खर्च अलग होगा।

(१) मिश्रीमल मास्टर आ० सेक्रेटरी सेठजी का बाजार रतलाम। (२) श्रीजैन महावीर मण्डल रतलाम।



सस्ती और उपयोगी ज्ञान दाता पुस्तके हम से खरीदये ।

(१) श्रावक धर्म दर्पण सजिलद पृ० ४५० मू० ॥-) १२ का ६) (२) नारी धर्म निरुपण पृ० ६४ मु० -)॥ १२ का १) (३) मूल्यवान मोती । विधवा सती का उत्कृष्ट चरित्र पृष्ट १२० मू० ≥)॥ ५ का १) (४) विनयचन्दजी की चौवीसी व नित्य पाठ सग्रहण मू० ≠) ८ का १) (५) सुदर्शन सेठ चरित्र पृष्ठ ४० मू० ≠) ६ का १) (६) जम्बू स्वामी चरित्र पृष्ठ ६० मू० ।≠)॥ १२ का ४॥) (७) उपदेश रत्न कोष पृष्ट ५० मू० ≠)॥ ७ का १) (८) जैन धर्म के विषय में अजैन विद्वानो की सम्मतियाँ पृष्ठ ६४ मू० -) २५ का १॥) (६) नित्य नियम नित्य समरण पृष्ठ ३२ मू० ॥।) २५ का १) (१०) जैन दर्शन जेन धर्म पृष्ठ १५ मू० ॥) २५ का ॥≠) (११) कर्त्तव्य कौमुदी पृष्ठ ५५० मू० सजिल्द २) (१२) हितोपदेश रतनावली पृष्ठ ४० मू० ≠) ६ का १) (१३) जैन प्रश्नोत्तर कुसुमावली पृष्ठ १२० मू० ।≥) ५ का १) (१४) बड़े २ अको की अनुपूर्वी पृष्ठ ३० मू० ॥) ≥) सेकड़ा

क्षमापना के कार्ड पत्रि का ।

पत्रिका रगीन कागज पर सुनहरी छपी हुई ॥।) सै० सरकारी दो पैसे के कार्ड पर लाल छपे हुए ३॥≠) सै०

कुवर मोतीलाल राका आनररी मेनेजर,

जैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय ब्यावर (राजपूताना)